परम दिगम्बर जैन मुनि

(विश्व के विभिन्न धर्म एवं विद्वानों की दृष्टि में)







लेखकः आचार्य श्री 108 विरागसागर

ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथाय नमः



श्री श्री 1008 श्री पार्श्वनाथ भगवान



Sri Dharendraji



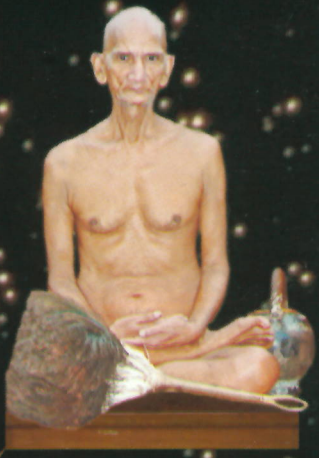
Maa Padmavati
Hoomcha,Simoga

ஜின் ஜைபன் காஞ்சி மத் மேல் சித்தாமூர், செஞ்சி - 604 206 தமிழ்நாடு

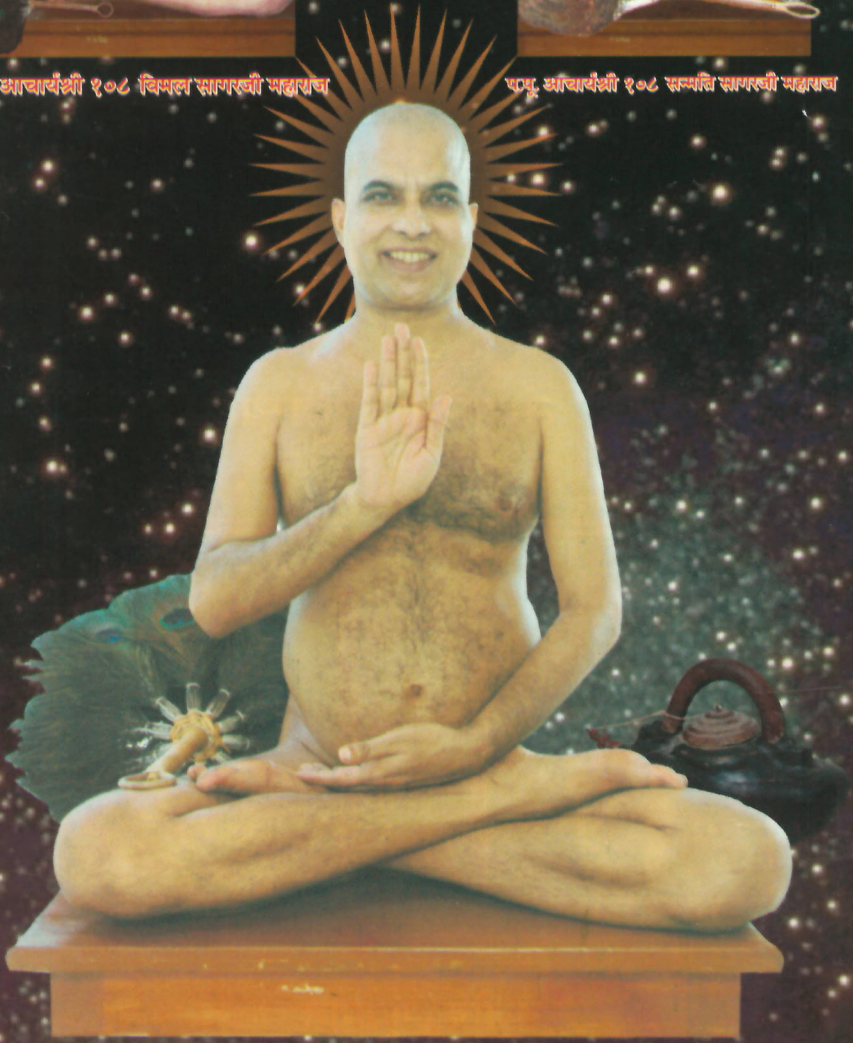
Jin Jain kanchi Math Mel Sitamoor,Ginzee-604206 Tamil nadu



प.पू. आचार्यश्री १०८ विमल सागरजी महाराज



प.पू. आचार्यश्री १०८ सन्मति सागरजी महाराज



प.पू. गणाचार्य श्री १०८ विराग सागरजी महाराज

-: पुण्यार्जक :-



श्री अजितकुमार जैन



श्रीमति शकुन्तादेवी जैन

लोहारिया, राजस्थान.



श्री दिनेशकुमार रमणलाल शाह



श्रीमति इलाबहेन दिनेशकुमार शाह

तलोद, गुजरात.

शांति, समता और साधना की मूर्ति

विश्व हितैषी

परम दिगम्बर जैन मुनि



लेखक

परम पूज्य गणाचार्य श्री 108 विरागसागरजी महाराज

उपसर्ग विजेता परम पूज्य गणाचार्य श्री १०८ विराग सागर जी
के ४६वें जन्म जयन्ति के उपलक्ष्य में



कृति	:	परम दिगम्बर जैन मुनि
लेखक	:	गणाचार्य श्री १०८ विराग सागर जी महाराज
साज सज्जा	:	श्री पारस ट्रेडर्स (नितिन शाह) उस्मानपुरा, अहमदाबाद-380 013. मोबाईल : 09427802454 ई-मेल : paras4414@yahoo.co.in
संस्करण सहयोग	:	श्री दिनेशकुमार रमणलाल शाह श्रीमति इलाबहन दिनेशकुमार शाह तलोद, गुजरात.
संस्करण सहयोग	:	श्री अजितकुमार जैन श्रीमति शकुन्तादेवी जैन लोहारिया, राजस्थान.
प्रथम संस्करण	:	5 नवंम्बर 2006, प्रतियाँ : 1000, मेल चित्तामूर (तमि.)
द्वितीय संस्करण	:	2009, प्रतियाँ : 5000 गांधीनगर, (गुजरात)
तमिल संस्करण	:	2006, प्रतियाँ : 1000
कन्नड संस्करण	:	2006, प्रतियाँ : 1000
मराठी संस्करण	:	2007, प्रतियाँ : 1000
प्राप्ति स्थान	:	श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन, विराग विद्यापीठ, भिण्ड (M.P.)
पुनः प्रकाशन राशि	:	45/- (पैतालीस रुपये मात्र)

© All Rights Reserved

समर्पण

जिन्हें दीक्षा लिये हुए 44 वर्ष हो गये है, जो वर्तमान में सबसे श्रेष्ठ एवं ज्येष्ठ आचार्य है, जिन्हें संपूर्ण अन्न का त्याग किये हुए लगभग 40 वर्ष हो गये है। जिन्होंने संपूर्ण रस (घी, दूध, शक्कर, नमक, दही, तेल) का वर्षों से त्याग किया हैं। संपूर्ण साग-सब्जी एवं फलों के भी जो त्यागी हैं,सूखा मेवा और मिष्ठान्न का भी जिन्होंने त्याग किया हैं। लगभग चार वर्षों से जो मात्र गन्ने का रस व मट्ठा ही दिन में एक बारआहार में लेते हैं, वर्तमान में जो मात्र आहार में मट्ठा लेते हैं। जो पर्यूषण पर्व के 10 एवं अष्टान्हिका पर्व के 8 निर्जला उपवास लगातार करते आ रहे हैं, जो पक्षोपवासी व मासोपवासी है। एक आहार एक उपवास की जिनकी सहज चर्या है। चारित्र शुद्धि, गणधरवलय, सहस्रनाम, कवलचंद्रायण एवं सिंह निष्क्रीड़ित आदि व्रतों को जिन्होंने किया है। जो तीन-तीन घंटे की उत्कृष्ट सामायिक करते है,अनेक आसनों से जिन्होंने कायक्लेश एवं व्रत-परिसंख्यान तप किया है। जो चारित्र चक्रवर्ती, अध्यात्म योगी, तपस्वी सम्राट, भारत गौरव आदि अनेक उपाधियों के धारी है। जिन्होंने सैंकड़ों भव्यों को दीक्षा दे मोक्षमार्ग पर लगाया है, तथा जिन्होंने सारे भारत के समस्त तीर्थों की पैदल यात्रा की है। जिन्होंने वर्षों से विस्मृत प.पू.आचार्य श्री 108 आदिसागर जी (अंकलीकर) की कठोर त्याग एवं तपस्या से जनमानस को अवगत कराया है। जो निरंतर ज्ञान, ध्यान, व्रत, जप, तप में लीन रहते हुए स्व-पर कल्याण कर रहे है, ऐसे परम पूज्य परोपकारी गुरुदेव "श्री 108 आचार्य श्री सन्मति सागर जी महामुनिराज" के कर कमलों में यह कृति "परम दिगम्बर जैन मुनि" सादर सविनय समर्पित करता हूँ।

-आचार्य विराग सागर

२१ वी सदी के ज्योति पुंज: प.पू. गणाचार्य श्री १०८ विराग सागर जी

अपरिमित प्रज्ञा धनी - 'संत' वह है जिसकी सरलता का कोई अंत न हो। जो संसार से विरक्त होकर स्व-पर कल्याण की भावना में निरत हो, जिसके अन्त:करण में वात्सल्य और स्नेह का निर्झर सतत् प्रवाहमान हो। जिसकी वाणी से जन-जन की कल्याण कामना के भाव नि:सृत हो, जिन्होंने ज्ञान की अतुल गहराईयों में उतरकर सृजन के मौलिक स्वरूप को गढ़ा हो। ऐसे अनेक विशेषणों से विभूषित प्रज्ञा के धनी आचार्य विराग सागरजी का इस धरित्री पर अवतरण इस सदी की एक अन्यतम घटना ही मानी जाएगी।

असाधारण व्यक्तित्व के धारक – एक ऐसा व्यक्तित्व जिसमें जादुई तिलस्म का आकर्षण हो, यह आकर्षण हैं उनके त्याग का, साधना का, तप का, चर्या का और उस असाधारण ज्ञान का जिसके कारण श्रावक दीवानगी की हदों को भी पार कर जाता है। आपकी सौम्य मुद्रा के दर्शन मात्र से ही दर्शनार्थियों के कालुष्य का विरेचन हो जाता है। आपके सान्निध्य का सुफल और आशीष का हस्तकमल जीवन को निर्जर और निरामद बना देता है। यह वजह है कि आचार्य विराग सागर जी जहाँ से निकल पड़ते है वहाँ के लोग अनेक हमेशा के लिए बन जाते है।

अनोखे बचपन का विरल सम्मोहन - दमोह (म.प्र.) जिले के पथरिया ग्राम में पाषाणों के बीच इस हीरे का अवतरण २ मई १९६३ (वैशाख शुक्ल ९ वि.सं.२०२०) को रात्रि ९ बजे हुआ। पुण्यात्मा ब्र. श्रीमान कपूरचंद जी एवं जननी श्रीमती श्यामादेवी (आपसे ही दीक्षित एवं समाधिस्थ आर्यिका पूज्य श्री विशान्तश्री माताजी) की कोख से एक ऐसा कमल (अरविंद) खिला जिसने अपनी अनुपम सुगन्धी से सारे बुन्देलखण्ड को महका दिया। कभी-कभी आगत की आश्चर्य चकित करने वाली घटनाएँ वर्तमान में ही अपना संकेत देने लगती है। कुछ ऐसा ही हुआ बालक अरविन्द के साथ, जब वे बचपन में नग्न अवस्था में खड़े होकर हाथ में झाड़ू लेकर (पिच्छी का प्रतीक) माँ से बोले - मुनिराज का पड़गाहन करो। क्योंकि कुछ दिन पूर्व उन्होंने इस तरह के दृश्य को देखा था। उक्त दृश्य का आत्म पटल पर अंकन आज आचार्य विराग सागरजी के रूप में परिलक्षित हो रहा है। यह इस धरित्री का पुण्य उदय ही माना जाएगा।

बालक अरविन्द की बाल्य अवस्था की क्रियाएँ सम्मोहन की सीमाएँ लाँघने में समर्थ थीं, सेवा कार्य के हद दर्जे की दीवानगी उनमें कूट कूट कर भरी हुई थी। इसी भावना के कारण बालक अरविन्द सभी को सम्मोहित कर लेते थें। संवेदनशीलता की भावना नें उन्हें प्राणी मात्र की कल्याण कामना से आपूरित कर दिया था। यही कारण है की आचार्य श्री विराग सागर जी अहर्निश साधना की असीम ऊँचाईयों की ओर अत्यन्त तीव्रता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

अर्जन और सर्जना के विविध सोपान - बालक अरविन्द की प्रारंभिक शिक्षा पथरिया और इसके उपरांत श्री शांति निकेतन दिगम्बर जैन संस्कृत विद्यालय कटनी में हुई। निष्णात गुरु

पं.जगन्मोहनलालजी के सान्निध्य ने प्रज्ञा की अन्तर्ज्योति को जागृत कर दिया। ज्ञानाराधना की ललक और वैराग्य भावना की व्यग्रता ने मनोयोग पूर्वक अर्जन की प्रवृत्ति को परवान चढ़ने का काम किया, परिणाम स्वरूप १६–१७ वर्ष की अवस्था में दि.२० फरवरी १९८० फाल्गुन शुक्ल ५ वि.सं.२०३६ बुढ़ार जिला शहडोल (म.प्र.) में परम पूज्य तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मति सागर जी से आपने क्षुल्लक दीक्षा ली तब आपका नाम पू.१०५ क्षुल्लक पूर्णसागरजी रखा गया, २०–२१ वर्ष की अल्पायु में दि.९ दिसम्बर १९८३ मगशिर शुक्ल ५ वि.सं.२०४० को औरंगाबाद जिला (महाराष्ट्र) में वात्सल्य रत्नाकर परम पूज्य आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज से मुनि दीक्षा ग्रहण की, तब आपका नाम मुनिश्री विराग सागर जी रखा गया। दीक्षा ने शिक्षा के विकास क्रम को गंगा की धार के समान प्रवाहमान रखने में एक ऊर्जयन्त -ऊर्जा से संचरित रखा, जिससे अल्प समय में आप न्याय, व्याकरण, दर्शन, साहित्य व अध्यात्म के महान चितेरे बन गए।

महाव्रती की महती प्रभावना - आज का वातावरण विसंगतियों और विद्रूपताओं की कालिमा से कलंकित है। ऐसे वातावरण में मनुष्य का नैतिक विकास हो पाना काफी दुष्कर जान पड़ता है। सर्वत्र हिंसा, अनैतिकता, बेईमानी और झूठ का बोलबाला है, स्वार्थ की संकीर्णताओं ने व्यक्ति को संवेदन शून्य और हृदयहीन बना दिया है, प्रेम और भाईचारे के सद्व्यवहार की अपेक्षाएँ दिनोंदिन क्षीण होती जा रही है - ऐसे वातावरण में महाव्रती का संदेश जीवन में ऐसी ऊर्जा का संचार करता है जिससे जीवन की धारा ही बदल जाती है। आचार्य विराग सागर जी ने भ्रमित युवा पीढ़ी को आचरण और नैतिक मूल्यों की दृष्टि से जो दिशा-दृष्टि प्रदान की है वह इस सदी की श्रेष्ठतम घटनाओं में इतिहास के पन्नों पर स्वर्णाक्षरित की जायेगी।

कुशल संघ संचालक - मोक्ष के आकांक्षी, वीतरागी पथ के पथिक, पदों से अलिप्त मुनि श्री विराग सागर जी महाराज की उत्तरोत्तर साधना, अनुशासन एवं आगमिक प्रणाली से प्रभावित होकर अनेक आत्म हितैषी उनके साथ आत्म - साधना करने के लिए तत्पर हो गये, साथ ही लगभग १० आचार्य परमेष्ठी उनेक मनोज्ञ व्यक्तित्व को देखकर उन्हें अपना आचार्य पद देकर संघ का भार सौंपना चाहते थे तथा कितने ही बार तो अनेक आचार्यों ने अनेक आचार्य पद की घोषणाएँ की लेकिन मुनि विराग सागर जी ने 'मैं अभी इस योग्य नहीं हूँ' या 'मेरे गुरु अभी विराजमान है,' ऐसा कहकर उसे स्वीकार न किया फिर भी समय बड़ा बलवान होता है और ऐसा योग आया कि परम पूज्य आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज की आज्ञा एवं आशीर्वाद तथा आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज एवं आचार्यश्री सुमति सागर जी आदि अनेक आचार्यों के आशीर्वाद से आचार्यत्व के गुणों से परिपूर्ण होने के कारण चतुर्विधसंघ द्रोणागिरी की समाज, पं.दरबारीलाल जी कोठिया (बीना) आदि अनेक विद्वानों एवं श्रेष्ठियों ने द्रोणगिरी सिद्धक्षेत्र पर दि.८-११-१९१२ (कार्तिक शुक्ल १३, वि.सं.२०४९ को) उन्हें आचार्य पद से विभूषित कर अपने भाग्य को सजाया था। इस प्रकार साधना-पथ पर उत्तरोत्तर विकास की ओर अग्रसर विराग सागर जी ने अपने ज्ञान, ऊर्जा और साधना के द्वारा आत्म कल्याण और लोक कल्याण के जिन शीर्ष प्रतिमाओं को स्थापित किया यह असाधारण ही माना जायेगा।

वर्षायोग के अविस्मरणीय क्षण - संयम काल के दौरान आपने संपूर्ण भारत वर्ष में भ्रमण

कर प्रभावना करते हुए धर्म की ध्वजा को फहराया तथा इस दौरान जहाँ-जहाँ भी आपका चातुर्मासिक प्रवास रहा, वहाँ आपके सम्मोहक व्यक्तित्व से जैन-जैनेतरों पर ऐसी गहरी छाप पड़ी की नास्तिक भी आस्तिक हो गये। प.पू. गुरुवर के वृहद् प्रभावना के साथ दुर्ग (म.प्र.१९८०), नागपुर (महा. १९८१), कारंजा (लाड) (महा.१९८२ व ८३), भावनगर (गुज.१९८४), पांचवा (राज.१९८५),निमाज (राज.१९८६), जयपुर (राज.१९८७), भिंड (म.प्र.१९८८ व ८९), टीमकगढ़ (म.प्र.१९९०), श्रेयांसगिरि (म.प्र.१९९१), द्रोणगिरि (म.प्र.१९९२), श्रेयांसगिरि (म.प्र. १९९३), बीना (म.प्र.१९९४), ललितपुर (उ.प्र.१९९५), जलबपुर (म.प्र.१९९६), भिंड (म.प्र.१९९७, ९८ व ९९) सम्मेदशिखरजी (झारखंड, २०००), गया (बिहार २००१), श्रेयांसगिरि (म.प्र.२००२), भिलाई (छ.गढ २००३), कारंजा (लाड) (महा.२००४), मुडबिद्री (कर्नाटक, २००५), मेलचित्तामूर (तमिलनाडु, २००६), उदगाँव (महा.२००७), बोरीवली (मुंबई-महा.२००८), गांधीनगर (गुजरात-२००९), में चातुर्मास सम्पन्न हुए।

संयमी सृजक - पूज्य गुरुओं के प्रति विनय भाव तथा शिष्यों के प्रति वात्सल्य एवं करुणा भाव तथा समाज के सही मार्गदर्शक एवं देव-शास्त्र-गुरु के प्रति परमागढ़ श्रद्धा को देख अनेक भक्तों ने आपको अपना गुरु चयन कर आपका शिष्यत्व धारण कर अपने जीवन को मोक्षमार्ग के प्रति समर्पित किया व आपके साथ चलने को तैयार हो गए, आपने संयम काल के २९ वर्षों में भारत के १० प्रांतों की लगभग ४०,००० कि.मी. पैदल यात्रा कर अनेकों सिद्धक्षेत्रों, अतिशय क्षेत्रों एवं नगरों में आध्यात्मिक साधना कर अनेकों भव्यों को दीक्षाएँ दी हैं जिसमें अतिशय क्षेत्र बरासों (भिण्ड) की १३ मुनि दीक्षाएँ, ललितपुर की २१ दीक्षाएँ तथा श्रवणबेलगोला की २५ दीक्षाओं ने जन मानस पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है और जिससे जैन-जैनेत्तरों में महती प्रभावना हुई। यही कारण है की आप एक विशाल एवं श्रेष्ठ वटवृक्ष की तरह है जिसकी छत्रछाया में ७ आचार्य, ४७ मुनि, ४१ आर्यिका, ३ ऐलक, १४ क्षुल्लक, ६ क्षुल्लिकाएँ एवं अभी आपके निर्देशन में लगभग १५० से भी अधिक ऐसे भी विनेय साधक है जो अंतेवासिन के रुप में अपनी साधना में संलग्न है तथा आपके कुशल निर्यापकत्व में अनेक साधुओं ने समाधिकर अपने जीवन को सार्थक किया है।

अनुपम अनुशासन एवं चारित्र साधक - चारित्र संवर्धक अनुशासन के पथानुगामी गुरुदेव आप मात्र शिष्यों को दीक्षा ही नहीं देते किन्तु उन्हें शिक्षा दे अनुशासन में भी रहाना सिखाते है। जो शिष्य अनुशासनवान होते है उन्हें सतत संस्कारित कर ऊँचा उठाते है। अपने शिष्यों में आध्यात्मिक संत युवा आचार्य श्री विशुद्ध सागरजी, क्षमामूर्ति आचार्यश्री विशद सागरजी, नव चेतना के दूत आचार्य श्री विभव सागरजी, ज्ञानमनीषी आचार्यश्री विमर्श सागरजी, आचार्यश्री विनिश्चय सागरजी, आचार्यश्री विहर्ष सागरजी तथा प्रवचन पटु आचार्यश्री विमदसागरजी आदि को तो आपने २००५ कुंथुगीरी से ही आचार्य पद की घोषणाएँ कर दी थी, किन्तु धन्य है ऐसे शिष्यों को, कि उन्होंने पद की होड़ नहीं की। अपितु उक्त महाराजों में से अभी ३ मुनिराजों को गुरुदेव ने ही अपने हाथों से उन्हें आचार्य पद के योग्य शिक्षा एवं प्रायश्चित ग्रंथ पढ़ाने के पश्चात औरंगाबाद में ३१ मार्च २००७ को आचार्यपद से विभूषित कर अपने हृदय की उदारता का साकार दर्शन दिया।

अनुशासक वही हो सकता है जो प्रथम स्वयं ही अनुशासन के सांचे में ढला हो, वे

अनुशासन में मात्र ढले ही नहीं, किन्तु समग्र शिष्यों को भी अनुशासन में ढाला है यद्यपि अनुशासन विहीन ईर्ष्यालु कुछ शिष्यों ने अपना ग्रुप बना दैविक झूठे चमत्कारों की ख्याति अर्जन हेतु अनुचित प्रयत्न किये किन्तु आचार्यश्री ने उन्हें प्रथम समझाया जब वे नहीं माने तो उन्हें संघ से बहिष्कृत कर दिया जिससे उन लोगों ने समय - समय पर आप पर छींटा कशी भी की, किन्तु आप जरा भी विचलित नहीं हुए। सूर्य की भाँति प्रकाशमान ही होते रहे हैं तथा आपने अनुशासन में किंचित् भी ढील नहीं दी और न किसी परिस्थिति के सन्मुख घुटने टेके हैं। यहीं कारण हैं उनमें से कतिपय लोगों ने क्षमायाचना कर प्रायश्चित लिया। यही देख स्वस्ति श्री भट्टारक चारुकीर्ति जी श्रवणबेलगोला के मुख से शब्द प्रस्फुरित हुए कि "आचार्य विराग सागर जी एवं उनका संघ चलती-फिरती युनिवर्सिटी है।"

अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी - वैराग्य को दृढ़ करने एवं संयम साधना को निर्दोष बनाने तथा आगमानुकूल चर्या बनाने के लिए, समय का सदुपयोग, धर्म ध्यान की वृद्धि एवं केवलज्ञान की उत्पत्ति में कारणभूत अहर्निश आचार्य प्रणीतशास्त्रों के स्वाध्याय में आप निमग्न रहते हैं तथा अपने साधु समूह को भी निरंतर स्वाध्याय के महत्व को बताकर उन्हें अध्ययन के लिए प्रोत्साहित एवं प्रेरित करते रहते हैं, यही कारण है कि आपने षडखण्डागम श्री धवलाजी की ५ वर्षों में १६ वाचनायें बुंदेलखण्ड के मूर्धन्य विद्वानों की उपस्थिति में निर्विध्न पूर्ण की, साथ ही कषाय पाहुड की जय धवल ग्रंथ की वाचना अहमदाबाद के उस्मानपुरा में सानंद सम्पन्न हुई, साथ में अनेक स्थानों में सम्यग्ज्ञान शिक्षण शिविर व विद्वत गोष्ठि का सफल आयोजन किया था आपने अपने शिष्यों को महापुराण, पद्मपुराण, हरिवंशपुराण, अष्टसहस्त्री, त्रिलोकसार, तिलोयपण्णति, गोम्मटसार, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, मूलाचार, आचारसार जैसे महान ग्रंथों का अध्ययन कराया, जिससे स्पष्ट है कि आप चारों अनुयोगों के प्रकाण्ड विद्वान है।

श्रुतसेवा - ज्ञान के प्रति अभिरुचि होने से आप निरंतर श्रुत सेवा में तल्लीन रहते हैं और आगम के चिंतन एवं मनन के द्वारा तत्व की गहराई में उतरकर उसके गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन कर आगम की पुष्टि करते हुए लोगों की भ्रांति को दूरकर अनेक सम्यग्दर्शन को निर्मल करते हैं। इस प्रकार आपने आगम के आधार से अपने साधना काल में अनेक कृतियों का सृजन कर माँ जिनवाणी के भण्डार को समृद्ध कर एवं पर के मिथ्यांधकार को दूर कर ज्ञान का प्रकाश किया है, जिसमें मुख्य कृतियाँ सम्यग्दर्शन, व्यसन विचार, जिनेन्द्र दर्शन-जिनेन्द्र पूजन, शुद्धोपयोग, तीर्थंकर दिव्य दर्शन, सल्लेखना से समाधि, आगम चक्खू साहू, परम दिगम्बर जैन मुनि, सर्वोदयी दिगम्बर जैन धर्म आदि हैं। जिसमें शुद्धोपयोग कृति, जिस पर लगभग १५० विद्वानों ने समीक्षा कर उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है क्योंकि यह कृति अनेक मिथ्या विकल्पों का निसर्ग करती है। साहित्य सृजन की इस श्रृंखला में प. पू. कुंदकुंदाचार्य स्वामी द्वारा रचित वारसाणुपेक्खा नामक ग्रंथ पर आपके द्वारा लिखी गई संस्कृत सर्वोदयी टीका, जिन आगम के लिए एक ऐतिहासिक उपलब्धि है क्योंकि प.पू. आचार्य कुंदकुंदस्वामी के इस ग्रंथ पर संस्कृत टीका अभी तक अनुपलब्ध थी, श्रुतसेवा में आपका यह महान अवदान युगांत तक सदैव स्मरण किया जायेगा। इस तरह सर्जना के क्षेत्र में लगभग ५० पुस्तकों के द्वारा सरस्वती के भण्डार को भरने का आपने जो भगीरथ कार्य किया है वह अनुपम है इनमें भारतीय साहित्य, धर्म,

दर्शन, ज्ञान और चारित्र के ऐसे बहुविधरूप देखने को मिलते हैं जिन्हें देखकर आचार्यश्री की बहुमुखी प्रतिभा का सहज ही आंकलन किया जा सकता है।

आपकी सत् प्रेरणा से श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ, भिण्ड अनेकों धार्मिक एवं लौकिक (शिशु, प्राईमरी मिडिल एवं हाईस्कूलीय) शिक्षायें प्रदान कर रही है। इसी प्रकार पन्ना में श्री सम्यग्ज्ञान दिग. जैन स्कूल, ब्रजपुर में श्री सम्यग्ज्ञान दिग.जैन विद्यालय भी अपनी मिडिल तक की शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। बीना में आचार्य विराग सागरजी बी.एड.कॉलेज ने अल्प समय में बहुत बड़ी सफलता हासिल की है।

धर्म प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में विराग वाणी मासिक पत्रिका निरन्तर हरस्तर के आलेखों से भरपूर रहती हुई जन मानस को आकर्षिक करती है।

बहुआयामी विशेषताओं से समन्वित पूज्य आचार्यश्री के दर्शन इसरूप में भी करें -

१. जो टी.वी., मोबाइल, लेफ्टॉफ, पंखा, कूलर एवं ए.सी. का प्रयोग नहीं करते हैं।
२. जो बाथरुम में लघुशंका एवं शौचालय में दीर्घशंका (शौच) नहीं जाते हैं।
३. जो करीब १९८५ से नाखून अपने हाथ से ही निकालते है (ब्लेड, नेलकटर या कैंची से नहीं निकालते हैं)
४. जिन्हें कभी थूकते हुए नहीं देखा गया हैं।
५. जो आहार में द्विदल नहीं लेते हैं।
६. दहीं, तेल का जिनका आजीवन त्याग हैं।
७. सभी प्रकार की हरी पत्तियाँ एवं (मटर के अलावा) सभी हरी फलियों का जिनका आजीवन त्याग हैं।
८. जो किसी भी महिला से एकान्त में अकेले चर्चा नहीं करते हैं।
९. जिनका कोई प्रोजेक्ट नहीं है तथा चंदा-चिट्ठा से दूर रहते हैं।
१०. जिनके संघ में मोटर, कार, जीप तथा अनावश्यक परिग्रह नहीं हैं।
११. जिनके संघ में कोई संघ संचालिका नहीं हैं।
१२. जो तंत्र-मंत्र नहीं करते तथा किसी की कुण्डली एवं हाथ आदि नहीं देखते हैं।
१३. जो औषधी(दवाईयों) को न रखते है न बताते हैं।
१४. जिनमें पथ-परंपरा का कोई दुराग्रह नहीं हैं।
१५. जो गरीब और अमीर को समान रूप से देखते हैं।
१६. जो सदैव ज्ञान-ध्यान और तप में लीन रहते हैं।
१७. जो किसी की बुराई / निंदा न सुनते है और न करते हैं।
१८. बडें-बडें कष्टों में जिनकी सहिष्णुता देखी गई हैं।
१९. जिन्होंने अभी तक विभिन्न मंत्रों की लगभग तीस लाख से भी अधिक जाप की हैं।
२०. जो विहार आदि के समय में भी प्राय: जाप करते रहते हैं।

२१. जो श्वासोच्छ्वास में कार्योत्सर्ग करते हैं।

२२. जो मुनिचर्या के २८ कृतिकर्म प्रतिदिन करते हैं।

२३. जो अपने संघस्थ साधुओं को आगम, अध्यात्म, सिद्धांत, व्याकरण, न्याय आदि की शिक्षा के साथ नैतिक शिक्षा भी देते हैं।

२४. जो संघस्थ आबाल-वृद्धों का पूरा ध्यान रखते हैं।

२५. जिन्होंने अभी तक कर्मदहन, णमोकार पैंतीसी, सर्वदोष परिहार, प्रत्याख्यान, पंचविंशतिका, वचनगुप्त, नीतिसागर, षड्रसी, भक्तामर, समवशरण व्रत कर लिये है तथा चारित्र शुद्धि व्रत कर रहे है।

२६. जो प्रत्येक अष्टमी, चतुर्दशी को प्रायः २२ घंटे का मौन रखते है तथा प्रतिदिन आवश्यकों के अलावा भी एक घंटे का मौन रखते हैं।

२७. विशाल संघ के संचालन की जिनकी अपूर्व ही क्षमता हैं।

२८. जिनका १० अन्न एवं १५ हरी का आजीवन नियम हैं।

प्रतिभा सम्पन्न गणाचार्य - १६–१७ अगस्त २००३ जब उपसर्ग के बादल आप पर मंडराये, तब आपकी एक आसन से ३५ घंटे की लगातार निराहार योग ध्यान साधना, अथाह समता, मेरुवत् संकल्प शक्ति से प्रभावित होकर छत्तीसगढ़ (दुर्ग, वैशाली आदि अनेक स्थानों) की समाज ने आपको **'उपसर्ग विजेता'** की उपाधि से अलंकृत कर अपने जीवन को कृतार्थ किया। २००४ के चातुर्मास काल में आपकी निर्मल साधना से प्रभावित होकर कारंजा समाज ने आपको **'चारित्र शिरोमणि'** की उपाधि से सम्मानित कर अपने आपको गौरवान्वित किया था।

आपने अपनी कुशलता के द्वारा अल्पायु में ११८ पथिकों को मोक्ष की राह दिखाकर उनका मोक्षमार्ग प्रशस्त किया है इसलिए परम पूज्य गणाधिपति गणाधराचार्य श्री कुंथुसागरजी महाराज ने २००५ में १५ आचार्यों एवं २०० साधुओं की उपस्थिति में जनसमूह के समक्ष आपको **'श्रमण रत्नाकर'** की उपाधि से सुशोभित किया था। आपने जो धवला ग्रंथ की १६ पुस्तकों की वाचना लगभग १५० विद्वानों की उपस्थित में ५ वर्षों में पूर्ण की है इससे प्रभावित होकर २००५ में मूडबिद्री के भट्टारक स्वस्ति श्री चारुकीर्ति जी एवं वहाँ की समाज ने आपको **'सिद्धांतरत्न'** की उपाधि प्रदान कर अपना अहोभाग्य समझा था। आपने अपने संयमी जीवन में अनेक आध्यात्मिक ग्रंथों का रसास्वादन किया है, कराया है इसलिए आप उपसर्गों से गुजरकर भी काँटो में गुलाब की तरह विकसित हुए अतः आपकी अध्यात्म साधना से प्रभावित होकर धर्माधिकारी डॉ.वीरेन्द्रकुमार हेगड़े जी ने २००५ धर्मस्थल में **'अध्यात्म योगी'** की उपाधि से विभूषित कर अपना गौरव बढ़ाया है। २००६ मेलचित्तामूर में स्वस्ति श्री लक्ष्मीसेन भट्टारकजी ने **'समता मूर्ति'** की उपाधि से,२००७ औरंगाबाद में त्रय आचार्य पद प्रतिष्ठा के अवसर पर परम पूज्य आचार्य श्री विशुद्ध सागरजी महाराज, परम पूज्य आचार्य श्री विभव सागरजी महाराज, परम पूज्य आचार्य श्री विमद सागरजी एवं वहाँ की समाज ने लगभग २५ संघों के नायक होने से आपको **'गणाचार्य'** तथा २००७ शिरड़शाहपुर में हुए श्री मल्लिनाथ श्री मज्जिनेन्द्र

पंचकल्याणक महोत्सव के पावन सुअवसर पर परम पूज्य आचार्य विभव सागरजी एवं सकल दिगम्बर जैन समाज ने **'वात्सल्य रत्नाकर'** की उपाधि से विभूषित कर अपने जीवन में गुरु महिमा का प्रकटीकरण कर अपने जीवन को सौभाग्यशाली बनाया।

आपने अपने विगत २७ वर्षों के साधना काल में राष्ट्र के लगभग संपूर्ण प्रांतों में भ्रमण कर अहिंसा व शाकाहार का संदेश जन जन तक पहुँचाया हैं अत: सन् २००७ में आपके मुनि दीक्षा के २५ वे वर्ष में प्रवेश करने पर कुंजवन (उदगाँव) में राष्ट्रीय रजत मुनि दीक्षा महोत्सव के अवसर पर कुंजवन ट्रस्ट समिति उदगाँव, राष्ट्रीय रजत मुनि दीक्षा महोत्सव समिति, राष्ट्रीय विराग युवा व महिला मंच भिंड तथा सांगली एवं विधायक कपूरचंदजी घुवारा ने आपको **'राष्ट्रसंत'** की उपाधि प्रदान की। इसी अवसर पर प.पू.निमित्तज्ञानी आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज की कीर्ति को देश-प्रदेशों में प्रचार करने से प.पू. तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मति सागरजी महाराज नें आपको **'विमल कीर्ति'** की उपाधि देकर असीम वात्सल्य का अद्वितीय उपहार गिया। आपकी निर्मल छवि को देख सकल दिगम्बर जैन समाज व विमर्श सेवा समिति शिवपुरी ने **'आचार्य गौरव'** तथा सिद्धांत शास्त्रों के अभीक्ष्ण ज्ञान से ओत-प्रोत होने से पं.घनपाल हबले सहित उपस्थित विद्वानों ने आपको **'सिद्धांत चक्रवर्ती'** की उपाधि से विभूषित किया। वर्तमान में न्याय एवं दर्शन की क्षीण होती विद्या का आपने स्वयं अध्ययन किया एवं विशाल शिष्य समूह को कराया इसलिए **'राष्ट्रीय रजत मुनि दीक्षा वर्ष समापन समारोह'** की भव्य आयोजन के अवसर पर श्री १००८ पार्श्वनाथ स्वामी देहरासर ट्रस्ट गुलालवाड़ी, मुंबई सहित भट्टारक लक्ष्मीसेन स्वामीजी कोल्हापुर, भट्टारक लक्ष्मीसेन स्वामीजी मेलचित्तामूर, प्रतिष्ठाचार्य प्रदीप जैन, 'मधुर', प्रतिष्ठाचार्य कमल कुमार शास्त्री कलकत्ता तथा पं.भरत कुमार काला आदि ने प. पू. गुरुदेव को **'न्याय भास्कर'** की उपाधि प्रदान की। तथा इस अवसर पर मुनि श्री विवर्जन सागर जी महाराज की भावना के अनुरुप सकल दिगम्बर जैन समाज आदम्पाकम (चेन्नई) तथा पं. सिंहचंद्रजी शास्त्री ने आपको **'श्रमण सूरि'** की उपाधि से विभूषित किया। इसी श्रृंखला में भग. नेमीनाथ एवं ७२ करोड़ ७०० मुनिराजों की निर्वाण भूमि श्री गिरनारजी सिद्धक्षेत्र पर आयोजित सप्तमुनि दीक्षा के पावन अवसर पर "गिरनार गौरव. प.पू.श्री निर्मल सागरजी महाराजने **"आचार्य रत्न"** की उपाधि देकर असीम वात्सल्य का परिचय दिया।

इसी प्रकार आपके लिए समय-समय पर विभिन्न स्थानों पर विद्वानों ने उपाधियाँ दी, यथा सन् १९८८ बरासों में समाज ने **क्रांतिकारी संत'**,१९९४ बीना की समाज ने **'बुंदेलखण्ड के प्रथमाचार्य,'**१९९४ जबलपुर में साहित्य मनीषी श्री सुरेश **'सरल'** जी ने **'निस्पृही संत'**,१९९९ भिण्ड में पण्डित सुमतिचंद्रजी शास्त्री ने **'अध्यात्म सिद्धांत वारिधि'**, २००१ गया. में श्री पण्डित लक्ष्मण प्रसादजी ने **'न्याय मार्तण्ड'**, २००२ श्रेयांसगीरी में **'तीर्थ उद्धारक एवं संत शिरोमणी'**२००४ राजिम में पण्डित श्री ऋषभकुमारजी ने **'समाधिसम्राट'**, २००५ शमनेवाड़ी में परम पूज्य आचार्य गुणधरनंदीजी ने **'ज्ञान दिवाकर'** की उपाधि से विभूषित कर अपने आप को गौरवान्वित किया।

कृतित्व एवं व्यक्तित्व की गौरव गाथा - आपके ऊर्जा पूर्ण महामानवीय जीवन पर श्री साहित्य मनीषी श्री सुरेश 'सरल' जीने **'निस्पृही संत'** कृति तथा प्राकृत मनीषी प्रो.उदयचंदजी उदयपुर ने साहित्य विद्या से परिपूर्ण प्राकृत भाषा में **'विराग सेतु'** कृति लिख्र जन मानस को आचार्य श्री के असीम व्यक्तित्व से परिचय कराया है तो डॉ. लोकेश ख्ररे ने आपके असीम कृतित्व एवं व्यक्तित्व पर पी.एच.डी. कर डाक्टरेट की उपाधी प्राप्त की है।

अहिंसा और मानव धर्म के संदेश वाहक - आज सर्वत्र हिंसा का साम्राज्य है। यह हिंसा किसी जीव की नहीं वरन् उन मूल्यों की है जो हमारी संस्कृति के प्रबल आधार है। सांस्कृतिक मूल्यों का आज जिस तरह से ह्रास हो रहा है वह अत्यन्त दुःख्रदायी है। मानवीय सम्बन्धों में जिस तीव्रता के साथ बेचारगी का बोलबाला बढ़ रहा है उससे आत्मीयता धीरे धीरे लुप्त होती जा रही है। संवेदनशून्य मानव आज जिस मुकाम पर ख्रड़ा है वह एकदम हताश, निराश और विवश है, ऐसे नैराश्य के वातावरण में आचार्य श्री की वाणी के द्वारा जिन अमृत वचनों की वर्षा जगह-जगह पर हो रही है वह संतप्त मानवों के लिए संजीवनी की तरह जीवनदायिनी का काम कर रही है। जीवन का अर्थ क्या है ? इसे अर्थवान बनाने के लिए किन-किन चीजों की आवश्यकता होती है ? इतिहास के द्वारा स्मरण पाना कैसे संभव है ? आदि; जीवन के उन शाश्वत सूत्रों का संदेश हमें आचार्य श्री के साहित्य में देख्रने को मिलता है। व्यक्ति को आज हम इस बात का बोध होना चाहिए कि सबसे बड़ा धर्म मानव धर्म है। इसकी रक्षा के लिए व्यक्ति को सतत सचेत रहना चाहिए। आचार्य श्री ने मानव धर्म और महावीर के प्रमुख सिद्धांत अहिंसा का जन- जन तक पहुँचाने का जो स्तुत्य कार्य किया है उसे इतिहास कभी विस्मृत नहीं कर पायेगा।

प्रस्तावना

–आचार्य विराग सागर

भारतीय वसुन्धरा अत्यंत पावन और पवित्र है वह इसलिए कि यहाँ की धरती में ही विभिन्न ऋषि, मुनि, यति, साधु-संतों व अनेकों महापुरुषों ने जन्म लिया और जन्म लेकर समस्त सुख-सुविधाओं को त्याग कर भगवद् भक्ति व आत्म साधना की, दीर्घ कालीन ध्यान किया, उग्र-उग्र तपश्चरण कर अपना कल्याण ही नहीं किन्तु विश्व के प्राणी मात्र का कल्याण किया। उन्हें दुःख, दरिद्रता, कष्ट से बचने के दूरगामी उपाय बता, उपदेश दे उन्हें शाश्वत सुख-संपदा व शांति, संतोष को पाने की आध्यात्मिक विधि बताई। राजा महाराजाओं ने नियम, कानून और दंड़ों से प्रजा में शांति की स्थापना की तो संतों ने करुणा, वात्सल्य, साधना और उपदेशों से प्रजा में शांति की स्थापना की।इस प्रकार देशोद्धार और विश्वशांति में संतों का एक अपूर्व ही योग दान है।

यदि उन्हें इस बंधुत्व प्रेम से या देश से हटा दिया जाय तो देश में राक्षसी युग आ जाएगा और अशांति, दुःख, दरिद्रता, असहाय, अराजकता, अमर्यादा, अव्यवस्था और अहर्निश भय का साम्राज्य छा जाएगा।

प्रजा की जितनी बागडोर राजनेताओं के हाथ में होती है उससे भी अधिक संतों के हाथ में होती है। संतों के ही आशीर्वाद व संकेत से प्रजा, राजनेताओं को कुर्सी पर बैठाती व कुर्सी से हटाती भी है।

संत, राजा और प्रजा के मध्य सेतु के तुल्य होते है जो अपनी प्रज्ञा और तपस्या के बल से दोनों को यथोचित् मार्गदर्शन देते हैं और उसमें अपनी तपःशक्ति भी देते हैं जिससे देश, राष्ट्र,व समाज समृद्धिशाली बनता है। समाज निर्माण, संरक्षण व संवर्धन में भी उनका अपना अनूठा योगदान रहता है, आज जहाँ जिस समाज में हरा-भरा पन है वह सब (संतों) की ही कृपा है और जहाँ जिस समाज में शुष्कता है वहाँ संतों का या उनके मार्ग दर्शन का अभाव है। व्यक्ति के हृदय परिवर्तन में उनकी सबसे बड़ी ये अहं भूमिका रहती है, कि वे प्रथम अपने आपको बदलते हैं, फिर वे दूसरों को बदलने की विधि बताते हैं। वे मात्र उपदेशों को चर्चा में ही नहीं, किन्तु चर्या में लाकर प्राणी मात्र को स्वयं व्यसन मुक्त हो, व्यसन मुक्ति का पाठ पढ़ाते है, करुणा, दया, प्रेम, भाई चारे, उपकार एवं सहयोग पूर्ण विश्व बंधुत्व के सूत्रों को साकार करते हैं, इसलिए ही वे जगत पूज्य होते हैं, सारा संसार उनकी दर्शन सेवा को पा अपना सौभाग्य मानता है और अपने भाग्यशाली जीवन को सराहता है यह हमारी चिरकालीन संत सेवा-भक्ति की परम्परा आज भी विद्यमान है।

जब हम किसी ग्राम, नगर या शहर से गुजरते है तो बहुत कुछ समझदार लोग, जो उनकी चर्या को जानते है वे अपने हाथों के काम को भी छोड़कर उनके दर्शन, प्रवचन एवं सेवा, भक्ति के लिए दौड़ पड़ते है। हमारे पूर्वजों ने, राजा-महाराजाओं ने गुरु भक्ति में बहुत कार्य

किये इस बात का इतिहास साक्षी है।

इतिहास हमारे पूर्वजों द्वारा निर्मापित एक अमूल्य धरोहर है। उसका गौरव, स्वाभिमान, उसकी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति, साहित्य, स्थापत्य, वास्तु, शिल्पकला में निहित है। प्राचीन स्मारक, तीर्थ, वैभव सम्पन्न शिल्प मनुष्य की प्रतिष्ठा से जुड़े हुए तथ्य हैं।

प्राचीनता, इतिहास की कच्ची सामग्री है। इतिहास रूपी भवन का निर्माण प्राचीनता की नींव पर ही होता है। जो समाज-जाति अपनी प्राचीनता की रक्षा नहीं कर पाई, उसका नाम इतिहास के पृष्ठों में या तो मिलता ही नहीं और यदि मिलता है तो कपोल-कल्पना के आधार पर विकृत इतिहास ही जन-मानस के सामने आता है उस जाति का दार्शनिक, सैद्धांतिक, तात्विक स्वरूप ही बदल जाता है। अतः पूर्वजों, संस्थापकों, स्थिति-पालकों की समूचि साधना व्यर्थता को प्राप्त हो जाती है तथा जाति की स्थिति विश्व में सदैव बौनी ही रहती है। भले ही आर्थिक, औद्योगिक स्थिति विकासशील उन्नत क्यों न हो। अतः हमें अपनी प्राचीन संस्कृति पर हार्दिक गर्व होना चाहिए।

समय-समय पर ऐसे बहुत कुछ विचारशील व्यक्ति, जैन धर्म या जैन मुनियों के विषय में जानना चाहते है, समझने की जिज्ञासा रखते है, यथा अवसर साहस बटोर कर पूछते भी अथवा कितने ही श्रद्धालु ऐसे भी होते है जिन्हें स्वयं का कोई प्रश्न नहीं होता। वे या तो श्रद्धा भक्ति से बंधे हुए होते है या अपनी पारंपरिक पद्धतियों को अपनाते तो रहते है अथवा सामाजिक व्यवहारिकता निभाते तो रहते है पर उन्हें व्यक्तिगत कोई प्रश्न नहीं रहता। हाँ, पर जब कोई उनसे इस विषय में कुछ पूछता है तो या तो वे शांत रह इतना कह देते कि इस विषय में, मैं कोई शास्त्रीय परिभाषायें नहीं जानता या मौन रह जाते है या फिर जैसा मन में आता वैसा उत्तर दे देते है।

अतः उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए इस कृति ''परम दिगम्बर जैन मुनि'' का प्रणयन किया गया है। यद्यपि इसमें मेरा कुछ भी नहीं है, जो है वह सब जैन शास्त्रों, वेद, पुराण, कुरान, बाईबल, गुरु ग्रंथ साहिब, इतिहासकारों, पूर्वाचार्यों, विद्वानों का हैं। जिन्होंने अथक परिश्रम करके ऐसी सामग्री सजोई। मैंने तो मात्र उनके बड़े-बड़े ग्रंथों को सभी जगह और जनता तक पहुँच पाना या उनके उपयोग में आना कठिन समझ उसी के कुछ पुष्पित वाक्यों को चुन यह लघु प्रयास किया है। यदि आप कुछ समझ सके और आपके हृदय में तनिक भी संत श्रद्धा, भक्ति, सेवा जागृत हुई तो मैं अपना श्रम सार्थक समझूंगा और हर्षित होऊँगा की आपको अपने धर्म ग्रंथों से आये हुए उद्धरणों पर गर्व है। तथा कभी निर्ग्रंथ दिगम्बर जैन मुनियों का पुण्य दर्शन, पुण्य लाभ व पुण्य अवसर प्राप्त होने पर निश्चित ही आप उनके दर्शन, भक्ति, सेवा, प्रवचन एवं संत समागम का सत्संग पाकर अपना सौभाग्य सराहेंगे।

इसमें प्रेस कापी तैयार करने में संघस्थ सभी विदुषी माताजीयों का ही श्रम है, इसके लिए मेरा सभी को हार्दिक शुभाशीष है।

दिगम्बरत्व दर्शन

संकलन–मुनि विवर्धन सागर

दिगम्बरत्व प्रकृति का रूप है। वह प्रकृति का दिया हुआ मनुष्य का भेष है। आदम और हव्वा इसी रूप में रहे थे। दिशा ही उनके अम्बर थे–वस्त्रविन्यास उनका वही प्रकृतिदत्त नग्नत्व था। वे प्रकृति के अंचल में सुख की नींद सोते और आनंद रेलियाँ करते थे। इसलिए कहते हैं कि मनुष्य की आदर्श स्थिति दिगम्बरत्व है। नग्न रहना ही उनके लिए श्रेष्ठ है इसमें उसके लिए अशिष्टता और असभ्यता की कोई बात नहीं है, क्योंकि दिगम्बरत्व अथवा नग्नत्व स्वयं अशिष्ट अथवा असत्य वस्तु नहीं है। वह तो मनुष्य का प्राकृत रूप है।

''आज मनुष्य का नैतिक पतन चरम सीमा को पहुँच चुका है, वह पाप में इतना सना हुआ है कि उसे मनुष्य की आदर्श स्थिति दिगम्बरत्व पर घृणा आती है। अपनेपन को गँवाकर, पाप के पर्दे में कपड़ों की आड़ लेना ही उसने श्रेष्ठ समझा है।''

प्रकृति ने प्राणी मात्र के शरीर का गठन इस प्रकार किया है कि यदि वह प्राकृत वेश में रहे तो उसका स्वास्थ्य नीरोग और श्रेष्ठ हो तथा उसका सदाचार भी उत्कृष्ट रहे। जिन विद्वानों ने उन भील आदिकों को अध्ययन की दृष्टि से देखा है, जो नंगे रहते हैं, वे इसी परिणाम पर पहुँचे हैं कि उन प्राकृत वेश में रहने वाले 'जंगली' लोगों का स्वास्थ्य, शहरों में बसने वाले सभ्यताभिमानि 'सज्जनों' से लाख दर्जा अच्छा होता है और आचार–विचार में भी, वे शहरवालों से बढ़े–चढ़े होते हैं। इस कारण वे एक वस्त्र परिधान की प्रधानता युक्त सभ्यता को उच्च कोटि पर पहुँचते स्वीकार नहीं करते।

यथा–

Having given some study to the subject. I may say that Rev. J.F. Wilkinson's remarks upon the superior morality of the races that do not wear clothes is fully borne out by the testimony of the travellers.....It is true that wearing of clothes goes with a higher state of the arts & to that extent with civilisation; but it is on the other hand attended by lower state of health & morality so that no clothed civilisation can expect to attain to a high rank.[1]

''वास्तव में देखा जाय तो कुदरत ने चर्म के रूप में मनुष्य को योग्य पोशाक पहनाई है। नग्न शरीर कुरूप दिखाई पड़ता है ऐसा मानना हमारा भ्रम मात्र हैं। पोशाक से साधारण अंगों को ढ़ककर हम मानो कुदरत के दोषों को दिखला रहे हैं। जैसे–जैसे हमारे पास ज्यादा पैसे होते जाते हैं, वैसे हम सजावट बढ़ाते जाते हैं। कोई किसी भाँति और कोई किसी भाँति रूपवान बनना चाहते हैं और बन–ठन कर काँच में मुँह देख प्रसन्न होते है कि वाह ! मैं कैसा खूबसूरत हूँ। बहुत दिनों के ऐसे ही अभ्यास से अगर हमारी दृष्टि खराब न हो गई हो तो हम तुरंत देख सकेंगे कि मनुष्य का उत्तम से उत्तम रूप नग्नावस्था में ही है और उसी में उसका आरोग्य है।[2]

[1]-"Daily News, London" of 18th April 1913

[2]आरोग्य पृष्ठ–५७

इसी प्रकार सौंदर्य और स्वास्थ्य के लिए दिगम्बरत्व अथवा नग्नत्व एक मूल्यमयी वस्तु है, किन्तु उसका वास्तविक मूल्य तो मानव समाज में सदाचारी सम्बन्ध है। सदाचार के बिना नग्नता कौड़ी मोल की नहीं है। नंगा मन और नंगा तन ही मनुष्य की आदर्श स्थिति है। इसके विपरीत गन्दा मन और नंगा तन तो निरी पशुता है। उसे कौन बुद्धिमान स्वीकार करेगा ?

लोगों का ख्याल है कि कपड़े-लत्ते पहनने से मनुष्य शिष्ट और सदाचारी रहता है। किन्तु बात वास्तव में इस बरअक्स (विपरीत) है। कपड़े-लत्ते के सहारे तो मनुष्य अपने पाप और विकार को छुपा लेता है। दुर्गुणों और दुराचार का आगार बना रहकर भी कपड़े की ओट में पाखण्ड रूप बना सकता है, किन्तु दिगम्बर वेष में यह असम्भव है। श्री शुकदेव जी के कथानक से यह बिलकुल स्पष्ट है-शुकदेव युवा थे, पर दिगम्बर वेष में रहते थे। एक रोज वह वहाँ से जा निकले जहाँ तालाब में कई देव-कन्यायें नग्न होकर जल क्रीड़ा कर रही थीं। उनके नंगे तन ने देव-रमणियों में कुछ भी क्षोभ उत्पन्न न किया। वे जैसी की तैसी नहाती रहीं और शुकदेव निकले अपनी धुन में चले गये। इस घटना के थोड़ी देर के बाद शुकदेव के पिता वहाँ आ निकले। उनको देखते ही देव-कन्याएँ नहाना-धोना भूल गई। वे झटपट जल के बाहर निकलीं और उन्होंने अपने वस्त्र पहन लिये। एक नंगे युवा को देखकर तो उन्हें ग्लानि और लज्जा न आई किन्तु एक वृद्ध, शिष्ट को देखकर वे लज्जा गई। भला इसका क्या कारण ? यही न कि नंगा युवा अपने मन में भी नंगा था। उसे विकार ने नहीं आ घेरा था। इसके विपरीत उसका वृद्ध और शिष्ट पिता विकार से रहित न था। वह अपने शिष्ट वेष में इस विकार को छिपाये रखने में सफल न था। किन्तु दिगम्बर युवा के लिए वैसा करना असंभव था। इसी कारण वह निर्विकार और सदाचार था। अतः कहना होगा कि सदाचार की मात्रा नंगे रहने में अधिक है। नंगापन दिगम्बरत्व का आभूषण है। विकार भाव को जीते बिना ही कोई नंगा रहकर प्रशंसा नहीं पा सकता। विकारी होना दिगम्बरत्व के लिए कलंक है, न वह सुखी हो सकता है और न उसे विवेक नेत्र मिल सकता है। इसलिए भगवन् कुन्दाकुन्दाचार्य कहते हैं-

णग्गो पावह दुक्खं, णग्गो संसार सागरे भमई।

णग्गो ण लहई बोहिं, जिणभावणवज्जिओ सुईरं।।[3]

भावार्थ :-नंगा दुःख पाता है, वह संसार सागर में भ्रमण करता है। उसे बोधि, विज्ञान दृष्टि प्राप्त नहीं होती, क्योंकि नंगा होते हुए भी वह जिन भावना से दूर है। इसका मतलब यही है कि जिन भावना से युक्त नग्नता ही पूज्य है, उपयोगी है और जिन भावना से मतलब रागद्वेषादि विकार भावों को जीत लेना है। इस प्रकार नंगा रहना उसी के लिए उपादेय है जो रागद्वेषादि विकार भावों को जीतने में लग गया है-प्रकृति का होकर प्राकृत वेष में रह रहा है।

दिगम्बर मुनि ही दिगम्बरत्व को धारण करने के अधिकारी है, यद्यपि एक बात

[3] भाव पाहुड़ 68 गाथा-अ.पा. पृ. 209-210

जरूर है कि दिगम्बरत्व मनुष्य की आदर्श स्थिति होने के कारण मानव समाज के पथ-प्रदर्शक श्री भगवान ऋषभदेव ने गृहस्थों के लिए भी महीने के पर्व दिनों में एकान्त में नंगे रहने की आवश्यकता का निर्देश किया था।[४]

और भारतीय गृहस्थ उनके इस उपदेश का पालन एक बड़े जमाने तक करते रहे थे।

दिगम्बर मुनि निर्भय क्यों ?

धैर्य यस्य पिता क्षमा च जननी, शांतिश्चिरं गेहिनी,
सत्यं सूनुरुदरं दया च भगिनी, भ्राताः मनः संयमः।
शैय्या भूमितलं देशोऽपि वसनं, ज्ञानामृतं भोजनं,
एते यस्य कुटुंबिनों वद सखे, कस्माद भयं योगिनः।

हे मित्र ! जिस योगी का धैर्य पिता हो, क्षमा माता हो, शांति पत्नी हो, सत्य पुत्र हो, दया बहिन हो, मनः संयम भाई हो, भूमि ही शैय्या हो, दिशा ही वस्त्र हो, ज्ञान अमृत भोजन हो, इतने जिसके कुटुंबी हो तो फिर बताओ उन्हें भय किस बात का ? अर्थात् उन दिगम्बर योगियों को किसी भी बात का डर नहीं होता है।

[४] सागाराय अ. ७ श्लोक ७ व भमवु पृ. 205-207

परम दिगम्बर जैन मुनि

विषयानुक्रमणिका

1) मंगलाचरण 18

2) दिगम्बर जैन साहित्य में दिगम्बर जैन मुनि 20

I) मुनि व आर्यिका पद की क्रमिक भूमिका II) मुनि, आर्यिकाओं के मूलगुण

III) दश धर्म IV) बारह तप V) बाईस परिषहजय VI) चार उपसर्ग

VII) मुनिराजों की आहार चर्या VIII) 46 दोष IX) 32 अंतराय

X) दाता के प्रकार, दान एवं फल XI) तप से प्राप्त होने वाली ऋद्धियाँ

3) प्राचीन विभिन्न दर्शन एवं साहित्यों में दिगम्बर जैन मुनि 57

4) श्वेताम्बर साहित्य में दिगम्बर जैन मुनि 58

5) महात्मा बुद्ध पूर्व में दिगम्बर मुनि थे 60

6) बौद्ध साहित्य में दिगम्बर जैन मुनि 67

7) वेदों, उपनिषदों में दिगम्बर जैन मुनि 73

8) हिन्दु पुराणों में दिगम्बर जैन मुनि 76

9) ब्राह्मण वर्ण और दिगम्बर जैन मुनि 78

10) इस्लाम धर्म और दिगम्बर जैन मुनि 80

11) पर्यूषण पर्व के अवसर पर जहाँगीर का फरमान 82

12) ईसाई धर्म और दिगम्बर जैन धर्म 83

13) यहूदी धर्म और दिगम्बर जैन धर्म 84

14) दिगम्बर जैन मुनि एवं पौराणिक राजा-महाराजा 85

15) विभिन्न राजाओं पर दिगम्बर जैन मुनियों का प्रभाव 88

16) प्राचीन राज्य-राज वंश एवं दिगम्बर जैन मुनि 92

17) कलिंग (बंगाल) में दिगम्बर जैन मुनि 95

18) कर्नाटक और तमिलनाडु में दिगम्बर जैन मुनि 97

19) दिगम्बर जैन मुनि और पुरातत्व 104

20) देश-विदेश के विद्वानों की दृष्टि में दिगम्बर जैन मुनि 110

21) मुनि निंदा, द्वेष एवं तिरस्कार के फल विषयक कहानियाँ एवं उपदेश 113

22) मुनि भक्ति, स्तुति एवं सेवा के फल विषयक कहानियाँ एवं उपदेश 119

23) मुनि महिमा 129
24) मुनिजनों के प्रति हमारी विनय एवं शिष्टाचार 133
25) मुनिराजों की सेवा एवं व्यवस्था 136
26) उपसंहार 139
27) परिशिष्ट 141
28) संदर्भित ग्रंथ सूचि 179
29) प्रवचन साहित्य सूचि 183

मैं बताने की कोशिश करूँगा कि भीड-भरी दुनियाँ में इँसान अपने आपसे जुडकर कैसे जी सकता है ? मैं बताने की कोशिश करूँगा कि घर-परिवार, बाजार में रहकर आदमी किस तरह अपने जीवन को धन्य कर सकता है ? मैं बताने की कोशिश करूँगा कि रोजमर्रा की चर्या में आदमी अपने दायित्वों और कर्त्तव्यों को भली भांति निर्वाह करते हुए कैसे परमात्मा से मधुर सम्बन्ध स्थापित कर सकता है ? मैं बताने की कोशिश करूँगा कि दुनियाँ के जहर भरे वातावरण में रहकर आदमी किस तरह अमृत का रसास्वादन कर सकता है ? कोशिश करूँगा, लेकिन बता ही दूंगाँ इसकी कोई गारंटी नहीं लूँगा। कोशिश करूँगा, लेकिन बता ही दूंगाँ इसका कोई दावा नहीं करूँगा। कोशिश करूँगा, लेकिन बता ही दूँगा ऐसा कोई चैलेंज नहीं करूँगा। सिर्फ कोशिश करूँगा, योंकि जब तक तुम स्वयं समझने के लिए तैयार नहीं होंगे, तब तक तुम्हें कोई नहीं समझा सकता । यदि तुम समझने के लिए राजी नहीं तो मैं तो या, बडे से बडे बुद्ध-पुरुष, बडे से बडा तीर्थंकर पुरुष, बडे से बडा पज्ञ पुरुष भी तुम्हें समझा नहीं सकता। समझने की मानसिकता तो तुम्हें ही बनानी होगी। मैं तो केवल एक माध्यम बन सकता हूँ, एक सेतु बन सकता हूँ, एक Mediator बन सकता हूँ। समझने के लिए तुम्हें ही तैयार होना पडेगा।

-मृत्यु बोध-9

शांति, समता और साधना की मूर्ति

विश्व हितैषी

परम दिगम्बर जैन मुनि

मंगलाचरण

णमो अरहंताणं

णमो सिद्धाणं

णमो आइरियाणं

णमो उवज्झायाणं

णमो लोए सव्वसाहूणं

एसो पंचणमोयारो, सव्व-पाव्व-पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवई मंगलं।।
चत्तारि मंगलं-अरहंत मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंत लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि,
साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।
ते धण्णा ताण णमो, दंसणवरणाणचरण सुद्धाणं।
भावसहियाण णिच्चं, तिविहेण पणट्ठमायाणं।।
बहुसत्थअत्थजाणे, संजमसम्मत सुद्ध तव यरणे।
वंदित्ता आयरिए, कसायमलवज्जिदे सुद्धे।।
दंसण णाण समग्गं, मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं।
साधयदि णिच्चसुद्धं, साहू सो मुणी णमो तस्स।।

अर्थ :–ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म व रागद्वेष , मोह आदि भाव कर्म रूपी शत्रुओं को हनन (नष्ट) करने वाले अरिहंत भगवन्तों को नमस्कार हो।

सम्पूर्ण कर्म को नष्ट कर आत्मीक समस्त गुणों को प्राप्त करने वाले सिद्ध प्रभु को नमस्कार हो।

पंचाचार के स्वपर पालक मुनि आचार्य परमेष्ठी को नमस्कार हो।

सम्यग्ज्ञान के द्वारा धर्म के स्व–पर प्रकाशक मुनि उपाध्याय परमेष्ठी के लिए नमस्कार हो।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक् चारित्र रूप मोक्षमार्ग के पथिक लोकवर्ती समस्त मुनि साधुओं को नमस्कार हो।

यह पंचपरमेष्ठी वाचक णमोकार महामंत्र सम्पूर्ण पापों को नष्ट करने वाला है तथा विश्व के सम्पूर्ण मंगलों में प्रथम मंगल है।

विश्व में पारमार्थिक मंगल चार होते हैं, अरहंत भगवान मंगल है, सिद्ध भगवान मंगल है, साधु (आचार्य, उपाध्याय, मुनि) परमेष्ठी मंगल है, केवली प्रणीत धर्म मंगल हैं।

विश्व में पारमार्थिक उत्तम चार होते हैं, अरहंत भगवान उत्तम है, सिद्ध भगवान उत्तम है, साधु (आचार्य, उपाध्याय, मुनि) परमेष्ठी उत्तम है केवली प्रणीत धर्म उत्तम है।

विश्व में पारमार्थिक चार शरणों में,मैं जाता हूँ ,मैं अरहंतों की शरण में जाता हूँ , मैं सिद्धों की शरण में जाता हूँ, मैं साधु (आचार्य, उपाध्याय, मुनि) परमेष्ठी की शरण में जाता हूँ, मैं केवल प्रणीत धर्म की शरण में जाता हूँ।

जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र से शुद्ध हैं, हमेशा ही इन रत्नत्रय की भाव सहित साधना करते है। तथा मन, वचन, काय से जिन्होंने मायाचार का त्याग किया है वे महापुरुष धन्य है मैं उन्हें नमस्कार करता हूँ।

जो बहुत शास्त्रों के अर्थों को जानते है तथा संयम सम्मत शुद्ध तप के आचरण में लीन है समस्त कषाय रूपी मल से रहित है अर्थात् शुद्ध है ऐसे आचार्य परमेष्ठी के लिए मैं नमस्कार करता हूँ।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक् चारित्र मोक्ष का मार्ग है उसे जो मुनि हमेशा शुद्ध (निर्दोष) रूप से पालते है मैं उन साधुओं को नमस्कार करता हूँ।

2. दिगम्बर जैन साहित्य में दिगम्बर जैन मुनि

णिच्चेलपाणिपत्तं उवइट्ठं परमजिणवरिंदेहिं ।
एक्को हि मोक्खमग्गो सेसा य अमग्गया सव्वे[5] ।।

अर्थात् अचेलक–नग्नरूप और हाथों को भोजन पात्र बनाने का उपदेश जिनेन्द्र देव ने दिया है । यही एक मोक्ष मार्ग है । इसके अतिरिक्त शेष सब अमार्ग है ।

'वत्थु धम्मो सहावो'[6]–धर्म, वस्तु का स्वभाव है और दिगम्बरत्व, मनुष्य का निज रूप है, उसका प्राकृत स्वभाव हैं । इस दृष्टि से मनुष्य के लिए दिगम्बरत्व परमोपादेय धर्म है । धर्म और दिगम्बरत्व में यहाँ कुछ भेद ही नहीं रहता । सचमुच सदाचार के आधार पर टिका हुआ दिगम्बरत्व, धर्म के सिवा और कुछ हो भी क्या सकता है ?

ण वि सिज्झइ वत्थधरो, जिणसासणे जइ वि होइ तित्थयरो ।
णग्गो विमोक्खमग्गो ,सेसा उम्मग्गया सव्वे[7] ।।

भावार्थ–जिन शासन में कहा गया है कि वस्त्रधारी मनुष्य मुक्ति नहीं पा सकता है, जो तीर्थंकर होते है वह भी गृहस्थ दशा में मुक्ति को नहीं पाते हैं व मुनि दीक्षा लेकर जब दिगम्बर वेष धारण करते हैं तब ही मोक्ष पाते हैं । अतः नग्नत्व ही मोक्षमार्ग है–बाकी सब लिंग उन्मार्ग हैं ।

विन्ध्याद्रिर्नगरं गुहा वसतिकाः शय्या शिला पार्वती,
दीपाश्चन्द्रकरा मृगाः सहचरा मैत्री कुलीनाङ्गना ।
विज्ञानं सलिलं तपः सदशनं येषां प्रशान्तात्मनां,
धन्यास्ते भवपङ्क निर्गम पथ प्रोद्देशकाः सन्तु नः ।।[8]

जिन प्रशान्तात्मा मुनि महाराजाओं के विन्ध्याचल पर्वत नगर है, पर्वत की गुफायें वसतिका (गृह) है, पर्वत की शिला शय्या समान है, चन्द्रमा की किरणें दीपकवत् है, मृग सहचारी है, सर्वभूतमैत्री (दया) कुलीन स्त्री है, विज्ञान पीने का जल और तप उत्तम भोजन है, वे ही धन्य है । ऐसे मुनिराज हमको संसार रूपी कर्दम से निकलने के मार्ग का उपदेश देने वाले हों ।

[5]) सू. पा. 10 [6]कार्तिकेयानुप्रेक्षा गा. 478) सू. पा. 23 [8] ज्ञानार्णव गा. 21

I. मुनि व आर्यिका पद की क्रमिक भूमिका

जिस साधना में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र के साथ संसार, शरीर और भोगों से विरक्त तथा अंतरंग काम, क्रोध, मोह, लोभ के साथ बाह्य समस्त परिग्रह का त्याग किया जाता हैं। जिसमें फिर सम्पूर्ण दिग् (दिशाएँ) ही अम्बर (वस्त्र) हो जाती है। अन्य फिर वस्त्र–आभूषण नहीं रखे जाते, ऐसे उन निर्विकार बालक– वत् नग्न मुद्रा धारी जैन श्रमणों (साधुओं) को दिगम्बर मुनि कहते हैं।

दिगम्बर जैन मुनि (श्रमणों), आर्यिका (श्रमणी) के पद को प्राप्त होने के शास्त्रों में क्रमिक अभ्यास के विभिन्न तरीके हैं।

मुनि अवस्था को प्राप्त करने की सीढ़ी –

1)अविरत सम्यग्दृष्टि अव्रती गृहस्थ

2) व्रती–1, 2, 3, 4, 5, 6 प्रतिमा धारी जघन्य श्रावक

3) ब्रह्मचारी–7, 8, 9, 10 प्रतिमा धारी मध्यम श्रावक

4) क्षुल्लक–11वीं प्रतिमाधारी उत्तम श्रावक (जो एक लंगोटी और एक दुपट्टा रखते हैं।)

5) ऐलक–11वीं प्रतिमाधारी उत्तम श्रावक (जो मात्र एक लंगोटी रखते है तथा नियम से केशलुंचन करते है, हाथ में भोजन करते है और पैदल ही चलते हैं।)

उपरोक्त क्रम में कोई साधक के लिए गुरुजन योग्यतानुसार एक साथ अविरत सम्यग्दृष्टि गृहस्थ को सीधे मुनि दीक्षा देते हैं, तो कोई जघन्य श्रावक को यथायोग्य 7–10 प्रतिमा देकर दीक्षा देते हैं, कोई क्षुल्लक दीक्षा देकर मुनि दीक्षा देते हैं, और कोई सभी अंतर क्रम पूर्वक ही दीक्षा देते हैं, जैसे–किसी को अव्रती अवस्था में अभ्यास कराकर, फिर जघन्य श्रावक व्रत देते हैं, फिर मध्यम श्रावक के व्रत देते हैं, फिर उत्कृष्ट श्रावक क्षुल्लक के व्रत देते हैं, फिर ऐलक के व्रत देते हैं, इसके पश्चात मुनि दीक्षा देते हैं।

यह क्रम दीक्षार्थी की योग्यता पर ही है, यदि योग्यता है तो सीधी मुनि दीक्षा देने का ही विधान शास्त्रों में है। जैन शास्त्रों में ''नारियों'' को भी यथोचित् सन्यास साधना करने का भी विधान है वे भी आर्यिका/साध्वी/श्रमणी/सन्यासनी दीक्षा ले सकती हैं। पर उनको एक (16 हाथ की) साड़ी पहिनने की आज्ञा है तथा वे बैठकर ही हाथ में भोजन करती है, अशौच अवस्था में तीन दिन बाद स्नान करती है। शेष सभी नियम मुनियों के ही समान है। जिनका वे यथोचित् पालन करती हैं, किन्तु एक मुनि और एक आर्यिका या स्त्री का एक स्थान में ठहरना/बात करना/पढ़ना–पढ़ाना आदि निषिद्ध है। आर्यिका व्रत भी आचार्य गण योग्यतानुसार ही देते हैं। यथा–अव्रती से, जघन्य श्राविका, मध्यम श्राविका, उत्तम श्राविका। दिगम्बर जैन मुनि व आर्यिकाओं के अनेक गुण होते हैं। जिनमें 28 मूलगुण प्रधान है

II. मुनि, आर्यिकाओं के मूलगुण :

पंच य महव्वयाइं समिदीओ पंच जिणवरुद्दिट्ठा।

पंचेविंदियरोहा छप्पि य आवासया लोओ।।

आचेलक्कमण्हाणं खिदिसयण मदंत घंसणं चेव।

ठिदि भोयणेयभत्तं मूलगुणा अदुवीसा दु।।[9]

पंच महाव्रत, पंच समिति, पंचेन्द्रिय निरोध, षडावश्यक, सप्त विशेष गुण इस प्रकार अट्ठाईस मूलगुण के धारक साधु होते हैं और दया के उपकरण पिच्छी, शौच के उपकरण कमण्डलु और ज्ञान के उपकरण शास्त्र से युक्त होते हैं। आगम कथित 46 दोष, 32 अंतराय, 14 मलदोष को बचाकर शुद्धाहार को ग्रहण करते हैं। ये मोक्षमार्ग के साधक होने से साधु और सच्चे गुरु कहलाते हैं।

पंच महाव्रत :

हिंसा, अनृत, स्तेय, अब्रह्म और परिग्रह-इन पाँच पापों से सर्वथा त्याग रूप महाव्रत, पाँच प्रकार का हैं।

1. **अहिंसा महाव्रत :** प्रमत्त योग पूर्वक षट्काय के जीव के द्रव्य और भाव प्राणों के घात का सर्वथा त्याग करना अहिंसा महाव्रत है।

2. **सत्य महाव्रत :** प्रमत्त योग पूर्वक असत्य वचन का सर्वथा त्याग सत्य महाव्रत है।

3. **अचौर्य महाव्रत :** प्रमत्त योग पूर्वक बिना दी हुई वस्तु के ग्रहण करने का त्याग करना। यद्यपि अचौर्य व्रत का प्रयोजन बिना दी हुई वस्तु को ग्रहण न करने का है। तथापि मुनि धर्मोपकरण और अन्न के सिवाय, दी हुई वस्तु को भी ग्रहण नहीं करते क्योंकि साधु सर्व परिग्रह के त्यागी होते हैं।

4. **ब्रह्मचर्य महाव्रत :** वेद के उदय जनित मैथुन संबंधी संपूर्ण क्रियाओं का त्याग करना ब्रह्मचर्य महाव्रत है।

5. **अपरिग्रह महाव्रत :** 14 प्रकार का अंतरंग परिग्रह और दश प्रकार का बाह्य परिग्रह इनका मन, वचन, काय से सर्वथा त्याग करना अपरिग्रह या परिग्रह त्याग महाव्रत कहलाता है।

पंच समिति :

भली प्रकार गमनादिक में प्रवृत्ति समिति है। वह पाँच प्रकार की हैं-ईर्या, भाषा, एषणा, आदान निक्षेपण, प्रतिष्ठापना।

1. **ईर्या समिति :** जो मार्ग पशु मनुष्यादिक के गमनागमन से शुद्ध हो ऐसे प्रासुक मार्ग में ,सूर्य के प्रकाश में ,चार हाथ प्रमाण भूमि को भली प्रकार से निहारते हुए, सावधानतापूर्वक तीर्थ दर्शन, गुरु दर्शन अथवा यात्रादि धर्म कार्य तथा आहार, विहार,

[9]) मूला. गा. 2-3

निहार आदि आवश्यकीय कार्यों के निमित्त गमन करना ईर्या समिति है।

2. भाषा समिति : सर्व प्राणियों के हितकारी कोमल, मिष्ट, प्रिय, सत्य, प्रामाणिक, शास्त्रोक्त, मिथ्यात्व रूपी रोग को दूर करने वाले वचन बोलना भाषा समिति है।

3. एषणा समिति : छयालीस दोष, बत्तीस अंतराय और चौदह मल दोष टालकर, कुलीन श्रावक के घर, बल और देह पुष्टी के प्रयोजन से रहित, अपने निमित्त न कहकर बनाया हुआ अनुदिष्ट आहार ग्रहण करना एषणा समिति है।

4. आदान निक्षेपण समिति : रखी हुई वस्तु के ग्रहण करने को आदान कहते हैं और ग्रहण की हुई वस्तु के रखने को निक्षेपण कहते है जिससे किसी जीव को बाँधा न पहुँचे इस प्रकार ज्ञान के उपकरण शास्त्र, संयम के उपकरण पिच्छी, शौच के उपकरण कमण्डलु तथा संस्तर आदि को यत्नाचार पूर्वक उठाने, धरने को आदान निक्षेपण समिति कहते है।

5. प्रतिष्ठापन समिति : जीव-जंतु रहित तथा एकांत स्थान में अर्थात् जहाँ असंयमी पुरुषों का संचार न हो, अचित अर्थात् हरितकाय आदि रहित, शहर से दूर, गुप्त जगह, बिल छिद्र आदि से रहित, जीव रोध से रहित अथवा जहाँ किसी का आना-जाना न हो ऐसे निर्जन स्थान पर मल-मूत्र आदि का त्याग करना प्रतिष्ठापन समिति कहलाती है।

पंचेंद्रिय निरोध :

स्पर्शन आदि पंचेंद्रिय विषयों में राग, द्वेष रहित हो जाना पंचेंद्रिय निरोध कहा जाता है इसका स्वरूप इस प्रकार है-

1. स्पर्शन इंद्रिय निरोध : चेतन पदार्थ स्त्री पुत्र आदि, अचेतन पदार्थ शैय्या आदि स्पर्शन इंद्रिय के विषयभूत कठोर, कोमल, शीत, उष्ण, सच्चिकण और रूक्ष पदार्थों में राग-द्वेष नहीं करना स्पर्शन इंद्रिय निरोध है।

2. रसना इंद्रिय निरोध : अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य-ये चार प्रकार का आहार और दूध, दही, घी, नमक, शक्कर, तेल ये छः रस है और तीखे, खट्टे, कड़वे, कषायले, मीठे इन पाँच रस रूप इष्ट, अनिष्ट आहार में राग-द्वेष नहीं करना रसना इंद्रिय निरोध है।

3. घ्राण इंद्रिय निरोध : सुख व दुःख के कारण स्वरूप सुगंधित व दुर्गंधित पदार्थों में राग-द्वेष नहीं करना घ्राण इंद्रिय निरोध है।

4. चक्षु इंद्रिय निरोध : कुरूप, सुहावने, भय उत्पन्न करने वाले पदार्थों का रक्त, पीत, हरित, श्वेत आदि रंगों को देखकर राग-द्वेष नहीं करना चक्षु इंद्रिय निरोध है।

5. श्रोत इंद्रिय निरोध : चेतन स्त्री, पुरुष, पशु आदि और अचेतन मेघ, बिजली आदि और मिश्रित तबला, सारंगी आदि से उत्पन्न शुभ, प्रशंसा, निंदा आदि के शब्द सुनकर राग-द्वेष नहीं करना श्रोत इंद्रिय निरोध है।

षट् आवश्यक :

अवश्य करने योग्य क्रिया को आवश्यक कहते है। ये छः प्रकार की है। समता, वंदना, स्तवन, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय और कार्योत्सर्ग–इस प्रकार ये छः आवश्यक क्रियाएँ है।

1. समता : भेदज्ञान पूर्वक सांसारिक पदार्थों को अपने आत्मा से पृथक् जानकर जीवन– मरण, लाभ– अलाभ, संयोग–वियोग, शत्रु–मित्र, सुख–दुःख में समान भाव रखना तथा शुभाशुभ कर्मों के उदय में राग, द्वेष रूप परिणामों को न करना समता है।

2. वंदना : चतुर्विंशति तीर्थंकरों में से किसी एक की या पंचपरमेष्ठियों में से किसी एक की मुख्यता कर मन, वचन, काय की शुद्धता पूर्वक स्तुति करना वंदना है।

3. स्तवन : मुख्यता बिना चौबीस तीर्थंकरों की अथवा पंचपरमेष्ठियों की स्तुति करना स्तवन है।

4. प्रतिक्रमण : आहार, शरीर, शयन, आसन, गमनागमन और चित्त के व्यापार के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के आश्रयभूत काल में लगे हुए व्रत संबंधी अपराधों को शोधना, निंदा, गर्हा युक्त अपने अशुद्ध परिणाम पूर्वक किये हुए दोषों का परित्याग करना प्रतिक्रमण है।

5. कायोत्सर्ग : काय से निर्ममत्व होकर खड़े हुए या बैठे हुए शुद्धात्मा का चिंतवन करना कार्योत्सर्ग है।

6. स्वाध्याय : वाचना, पृच्छनादि पाँच प्रकार से शास्त्रों का अध्ययन अथवा शुद्धात्मा का चिंतवन करना स्वाध्याय है।

जिन्दगी के चित्र में चरित्र की खूबसूरती चाहिए। फूलों का सार 'इत्र' है और जीवन का सार 'चरित्र' है। जिसने 'इत्र' बटोर लिया, उसने ज्ञान पा लिया और उसने 'चरित्र' बटोर लिया, उसने भेद–विज्ञान पा लिया। पैदा हुए और वैसे ही मर गये, तो दुनियाँ में आने का औचित्य ही क्या हुआ?

–मृत्यु बोध–12

मेरा जीवन तुम्हीं को अर्पित है, मेरा तन मन तुम्हें समर्पित है,
और क्या भेंट दूँ तुम्हें गुरुवर, मेरी हर श्वांस तुम्हें समर्पित है ।
आपने अपना बनाया है मुझे, प्यार का अमृत पिलाया है मुझे,
गुरुवर जिंदगी मेरी कुर्बान आप पर, आपने ही जीना सिखाया है मुझे ।।

सात विशेष गुण

1) अस्नान गुण : जल तथा मल युक्त शरीर होने पर भी स्नान नहीं करने को तथा अन्य प्रकार से शरीर संस्कार नहीं करने को अस्नान गुण कहते हैं। परंतु साधु को शूद्र के स्पर्श हो जाने पर तथा दीर्घ शंका, लघु शंका आदि जाने के पश्चात् षटावश्यक शुद्धि के निमित्त यथायोग्य शुद्धता करना आवश्यक है।

2) भूमि शयन गुण : जीवादि रहित प्रासुक भूमि में अथवा जिससे संयम का घात न हो ऐसी चटाई, लकड़ी के पाटे तथा शिला आदि संस्तर पर एकांत स्थान में औंधे या सीधे रहित एक करवट से दंड अथवा धनुष के समान शयन करने को भूमि शयन गुण कहते है।

3) वस्त्र त्याग (अचेलक्य) गुण : मुनि धर्म के विराधक कपास, रेशम, सन या टाट आदि वनस्पति के वस्त्रों तथा मृगादिक से उत्पन्न मृगछाल आदि चर्म तथा वृक्षों के पत्र, छाल आदि से शरीर को आच्छादित न करना और न तत्संबंधित मन, वचन, काय आदि से राग करना वस्त्र त्याग गुण है।

4) केशलुंच गुण : अपने हाथ से सिर, दाढी, मूछों के केशों का उत्कृष्ट दो माह में, मध्यम तीन माह में, जघन्य चार माह में लोंच करना चौथा केशलोंच गुण है।

5) एक भुक्ति गुण : तीन घड़ी दिन चढ़ने के बाद, तीन घड़ी दिन रहने के पहले मध्य में तीन मुहूर्त काल के भीतर ही भीतर दिन में केवल एक बार ही अल्प आहार लेना एक भुक्ति गुण कहलाता है।

6) अदन्त धावन गुण : इंद्रिय संयम की रक्षा और वीतरागता को प्रकट करने के निमित्त हाथ की अंगुली से, नख से व दाँतों के द्वारा दाँतों का धोवन न करना अदंत धोवन गुण है।

7) स्थिति भोजन : दीवार आदि के आसरे के बिना, दोनों पाँवों में चार अँगुल का अंतर रखकर, 46 दोष, 32 अंतराय, चौदह मल दोष टालकर पाणि (दोनों हाथों रूपी) पात्र में आहार लेने को स्थिति भोजन कहते हैं।

मैं तुम्हारे हृदय पर बुहारी लगाने आ रहा हूँ। पर ख्याल रखिये, 'फूल-बुहारी' लगाने से पहले 'बुलडोजर' चलाऊँगा। पहले मैं तुम्हें मिटाऊँगा, पहले मैं तुम पर प्रहार करूँगा, चोट करूँगा। लेकिन इस प्रहार को प्रहार मत समझना, इसे संत का आशीर्वाद समझना। यदि तुमने इस प्रहार को आशीर्वाद समझा तो संत का यह 'प्रहार' तुम्हारे जीवन का 'उपहार' बन जायेगा, तो यह प्रहार तुम्हारे जीवन का 'त्यौहार' हो जायेगा।

-मृत्यु बोध 10, 11

III. दश धर्म[10]

दश धर्म :–उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव, उत्तम शौच, उत्तम सत्य, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आकिंचन्य और उत्तम ब्रह्मचर्य ये दश धर्म हैं।

1) **उत्तम क्षमा धर्म** : शरीर की स्थिति के कारण खोज करने के लिए आहारार्थ परकुलों में जाते हुए भिक्षु को दुष्ट जन गाली–गलौच करते है, उपहास करते है, तिरस्कार करते है, मारते–पीटते है और शरीर को तोड़ते–मरोड़ते है। तो भी उनके कलुषता का उत्पन्न न होना उत्तम क्षमा धर्म है।

2) **उत्तम मार्दव धर्म** : जाति आदि मदों के आवेश वश होने वाले अभिमान का अभाव करना उत्तम मार्दव धर्म है।

3) **उत्तम आर्जव धर्म** : योगों का वक्र न होना उत्तम आर्जव धर्म है।

4) **उत्तम शौच धर्म** : प्रकर्ष लोभ का त्याग करना उत्तम शौच धर्म है।

5) **उत्तम सत्य धर्म** : सज्जन पुरुषों के साथ साधु–वचन बोलना उत्तम सत्य धर्म है।

6) **उत्तम संयम धर्म** : समितियों में प्रवृत्ति करने वाले मुनि के, उनका परिपालन करने के लिए जो प्राणियों का और इंद्रियों का परिहार होता है वह उत्तम संयम धर्म है।

7) **उत्तम तप धर्म** : कर्म क्षय के लिए जो तपा जाता है वह उत्तम तप धर्म कहलाता है।

8) **उत्तम त्याग धर्म** : संयत के योग्य ज्ञानोपकरण शास्त्रादि, संयमोपकरण पिच्छी और शोचोपकरण कमण्डलु आदि का दान करना उत्तम त्याग धर्म है।

9) **उत्तम आकिञ्चन्य धर्म** : जिसका कुछ नहीं है वह आकिंचन है और आकिंचन का भाव या कर्म आकिञ्चन्य धर्म है या ''जो शरीरादिक उपात्त हैं उनमें भी संस्कार का त्याग करने के लिए यह मेरा है'' इस अभिप्राय का त्याग करना उत्तम आकिञ्चन्य धर्म है।

10) **उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म** : अनुभूत स्त्री का स्मरण न करने से, स्त्री विषयक कथा के सुनने का त्याग करने से और स्त्रीयों के स्थान में ठहरने, सोने व बैठने का त्याग करने से परिपूर्ण ब्रह्मचर्य होता है। अथवा स्वतंत्र वृत्ति का त्याग करने के लिए गुरुकुल में निवास करना ब्रह्मचर्य धर्म है।

[10]) स. सि. 9/6

IV. बारह तप एवं तीन गुप्ति

बारह तप :–कर्म क्षय के लिए जो तपा जाता है उसे तप कहते है। तप के दो भेद हैं- 1. बहिरंग 2. अंतरंग। अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्त शय्यासन और काय क्लेश ये छः प्रकार का बाह्य तप हैं।

1) अनशन : प्रतिज्ञापूर्वक चारों प्रकार के आहारों का त्याग या उपवास को अनशन कहते हैं।

2) अवमौदर्य: भूख से कम खाना अवमौदर्य तप है। भूख से एक, दो, तीन आदि ग्रास भी कम खाये तो वह अवमौदर्य तप कहलाता है।

3) वृत्ति परिसंख्यान : भिक्षा के इच्छुक मुनि का एक घर आदि विषयक संकल्प करना वृत्ति परिसंख्यान तप है।

4) रस परित्याग : कामोत्पादक घृत आदि गरिष्ठ रसों का त्याग करना रस परित्याग तप है।

5) विविक्त शय्यासन : प्राणियों की पीड़ा से रहित ऐसे शून्य घर, गुफा, पर्वतों की कन्दरा आदि में शयन, आसन करना विविक्त शय्यासन तप है।

6) कायक्लेश तप : पैदल चलना, नंगे पैर रहना, ठंडी–गर्मी, मच्छर विषयक कष्ट सहना, अथवा

(i) **आतापन योग :** ग्रीष्म ऋतु में धूप में खड़े रहना।

(ii) **वृक्ष मूल योग :** वर्षा ऋतु में वृक्ष मूल में निवास करना।

(iii) **अभ्रावकाश योग :** शीत ऋतु में निरावरण स्थान में शयन करना। इनके अलावा भी अनेक प्रकार के प्रतिमास्थान (आसन), सूर्य के सन्मुख खड़े रहना आदि सब करना काय क्लेश नामक बाह्य तप कहलाता है।

अंतरंग तप :

प्रायश्चित्त, विनय, वैय्यावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान यह छह प्रकार का आभ्यन्तर तप हैं।

1) प्रायश्चित्त तप : प्रमाद जन्य दोषों का परिहार करना प्रायश्चित्त तप है। प्रायः शब्द का अर्थ अपराध है और चित्त का अर्थ शुद्धि है, अतः प्रायश्चित्त का अर्थ अपराधों की शुद्धि करना होता है।

2) विनय तप : पूज्य पुरुषों का आदर करना विनय तप है।

3) वैय्यावृत्य तप : शरीर की चेष्टा या दूसरे द्रव्य द्वारा उपासना करना, पादमर्दन के द्वारा आराधना करना, सेवा करना वैय्यावृत्य तप है।

4) स्वाध्याय तप : आलस्य का त्याग कर ज्ञान की आराधना करना स्वाध्याय तप है।

5) व्युत्सर्ग तप : अहंकार और ममकार रूप संकल्प का त्याग करना व्युत्सर्ग तप है।

6) ध्यान तप : चित्त के विक्षेप का त्याग करना ध्यान तप है।

गुप्ति :

योगों का सम्यक् प्रकार से निग्रह करना गुप्ति कहलाती है। इसके तीन भेद है : 1) मनो गुप्ति 2) वचन गुप्ति 3) काय गुप्ति

1) मनो गुप्ति : संपूर्ण मानसिक व्यापारों का निरोध करना मनो गुप्ति हैं।

2) वचन गुप्ति : संपूर्ण वाचनिक व्यापारों का निरोध करना वचन गुप्ति हैं।

3) काय गुप्ति : संपूर्ण कायिक क्रियाओं या व्यापारों का निरोध करना काय गुप्ति हैं।

संत, आध्यात्मिक आकाश में इंसानियत का इन्द्रधनुष है। संत, सौहार्द के सितार पर सद्भाव का संगीत है। संत, विकृति के बाजार में संस्कृति का शंखनाद है। संत, प्यार की पेड़ी पर परमात्मा की प्रार्थना है। संत, शत्रुता के शूल नहीं चुभाता है। संत, कलह के कांटे नहीं उगाता है। संत, वासनाओं के बताशे नहीं बाँटता है। संत, षड्यंत्र के यंत्र नहीं बेचता है। संत, समाधिमरण का बीज देता है। संत, आचरण के आशीष देता है। संत, जागरण का ताबीज देता है। संत, कभी नष्ट न हो वह चीज देता है। संत, वह मानसरोवर है जिसमें 'कंस' जैसा अधम मनुष्य भी डुबकी लगाये तो 'हंस' और 'परमहंस' बनकर निकलता है। तो चले संत सत्संग के मानसरोवर में डुबकी लगाने।

-मृत्यु बोध 14,15

V. बाईस परीषहजय

परीषहजय :–मोक्ष मार्ग (धर्म मार्ग) में ली हुई प्रतिज्ञाओं से चलायमान ना होना तथा पूर्वबद्ध कर्मों की निर्जरा के लिए साधना काल में आए हुए विभिन्न कष्टों को समता और शांति से सहन करना परीषहजय है। वे 22 होते है[11] :-

1) क्षुधा : क्षुधा (भूख) के दुःख को शांत भाव से सह लेना क्षुधा परीषहजय है।

2)तृषा : प्यास के दुःख को शांत भाव से सह लेना तृषा परीषहजय है।

3) शीत : शीत की वेदना को शांत भाव से सहना शीत परीषहजय है।

4) उष्ण : गर्मी की वेदना को शांत भाव से सहना उष्ण परीषहजय है।

5) दंशमशक : डांश, मच्छर, चिन्टी आदि के काटने से उत्पन्न वेदना को शांत भाव से सहना दंशमशक परीषहजय है।

6) नाग्न्य : नग्न रहते हुए भी मन में किसी प्रकार का विकार नहीं करना नाग्न्य परीषहजय है।

7) अरति : अरति के कारण उपस्थित होने पर भी संयम में अरति (अप्रीति) नहीं होना अरति परीषहजय है।

8) स्त्री : स्त्रियों के हाव–भाव प्रदर्शन आदि उपद्रवों को शांत भाव से सहना, उन्हें देखकर मोहित नहीं होना स्त्री परीषहजय है।

9) चर्या : गमन करते समय खेद–खिन्न नहीं होना, निर्भय रहना चर्या परीषहजय है।

10) निषद्या : ध्यान के लिए नियमित काल पर्यन्त स्वीकृत आसन से विचलित नहीं होना निषद्या परीषहजय है।

11) शय्या : विषम, कठोर, ककरीले आदि स्थानों में एक करवट से निद्रा लेना और अनेक उपसर्ग आ जाने पर भी शरीर को चलायमान नहीं करना शय्या परीषहजय है।

12) आक्रोश : दुष्ट जीवों के द्वारा कहे हुये कठोर शब्दों को सुनकर शांत रहना आक्रोश परीषहजय है।

13) वध : तलवार आदि के द्वारा शरीर पर प्रहार करने वालों से द्वेष नहीं करना वध परीषहजय है।

14) याचना : प्राणों का वियोग होने पर भी आहारादिक नहीं माँगना याचना परीषहजय है।

15) अलाभ : भिक्षा के प्राप्त नहीं होने पर भी संतोष धारण करना अलाभ परीषहजय है।

16) रोग : अनेक रोग होने पर भी उसकी वेदना को शांत भाव से सह लेना रोग परीषहजय है।

[11]) स. सि. 9/9

17) तृण स्पर्श : चलते समय पगों में तृण, कण्टक वगैरह के चुभ जाने से उत्पन्न हुए दुःख को सहना तृण स्पर्श परीषहजय है।

18) मल : जल कायिक जीवों की हिंसा से बचने के लिए स्नान न करना तथा अपने मलिन शरीर को देखकर ग्लानि नहीं करना मल परीषहजय है।

19) सत्कार पुरस्कार : अपने में गुणों की अधिकता होने पर भी यदि कोई सत्कार पुरस्कार नहीं करें तो चित्त में कलुषता नहीं होना सत्कार पुरस्कार परीषहजय है।

20) प्रज्ञा : ज्ञान की अधिकता होने पर भी मान नहीं करना प्रज्ञा परीषहजय है।

21) अज्ञान : ज्ञानादिक की हीनता होने पर औरों के द्वारा किये हुए तिरस्कार को शांत भाव से सह लेना अज्ञान परीषहजय है।

22) अदर्शन : बहुत समय तक कठोर तपश्चर्या करने पर भी विशेष ज्ञान या ऋद्धियों की प्राप्ति नहीं होने पर भी अश्रद्धान के भाव नहीं होना अदर्शन परीषहजय है।

VI. चार उपसर्ग

उपसग : –साधुओं की साधना काल में विभिन्न अज्ञानी प्राणियों के द्वारा दिये गये असहनीय कष्ट एवं प्राकृतिक प्राणांतहारी विपदाओं में भी अपने धर्म व संयम के लिए नियमित अथवा अनियमित काल तक प्राणों का धर्म प्रतिज्ञा पूर्वक समता के साथ विसर्जन कर देना उपसर्ग जय है।

उपसर्ग के भेद :

1) देवकृत : भूत-व्यंतर आदि देवों के द्वारा धर्म साधना में उपद्रव किये जाने पर भी भयभीत नहीं होते हुए प्राणांत पर्यंत अपनी साधना में समता व शांति से संलग्न रहना देवकृत उपसर्ग जय है।

2) तिर्यंच कृत : विभिन्न प्रकार के सिंह, व्याघ्र, सर्प आदि क्रूर प्राणियों के द्वारा सताये जाने पर भी प्राणांत पर्यंत अपनी साधना में समता व शांति से संलग्न रहना तिर्यंच कृत उपसर्ग जय है।

3) मनुष्य कृत : अज्ञानी, कषायी एवं ईर्ष्यालु प्राणियों के द्वारा दिये गये विभिन्न कष्टों को भी सहन करते हुए प्राणांत पर्यंत अपनी साधना में समता व शांति से संलग्न रहना मनुष्य कृत उपसर्ग जय है।

4) अचेतन कृत : बिजली, शिलाओं, मकान आदि अचेतन पदार्थों का अपने ऊपर गिरने पर प्राप्त हुए कष्टों को प्राणांत पर्यंत अपनी साधना में समता व शांति से संलग्न रहना अचेतनकृत उपसर्ग जय है।

VII. मुनिराजों की आहार चर्या

दिगम्बर मुनि दिन में एक ही बार, खड़े होकर, करपात्र में अपनी विधि से आहार लेते हैं। जैन साधुओं की एक अपनी अलग ही आहार चर्या है। जहाँ वे आहार लेते हैं उसे चौका कहा जाता है। चौका का अर्थ है-द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की शुद्धि

I-द्रव्य शुद्धि में : 1) आहार सामग्री 2) बर्तन शुद्धि 3) वस्त्र शुद्धि 4) शरीर शुद्धि प्रधान होती है।

1) आहार सामग्री : यह घुनी, सड़ी (फंफूद)वाली नहीं होना चाहिए, भक्ष्य होना चाहिए। सर्व प्रथम उसे धो लेना चाहिए, गेहूँ आदि के कंकड आदि बीन लेना चाहिए, शुद्ध जल से धुली चक्की से ही पीसना चाहिए, मसाले गीले कपड़े से पोंछना चाहिए, सब्जी, फल आदि धो लेना चाहिए। जल शुद्ध वस्त्र पहिनकर ही भरना चाहिए, जलादि भरते समय चप्पल भी नहीं पहिनना चाहिए, सर्व प्रथम छने जल से बर्तन धो लेना चाहिए तथा जहाँ बर्तन रखना है । शुद्ध जल-स्नान कर, शुद्ध वस्त्र पहन कर, मजे (साफ किये) हुए बर्तनों में, कुएँ आदि से छने जल को, भूमि को देखते हुए लाना चाहिए और उसे तुरंत प्रासुक कर लेना चाहिए।

जल छानने की विधि :

1) जल छन्ने से ही छानना चाहिए, अन्य उपयोग में आने वाले वस्त्रों से नहीं।

2) छन्ना (जल छानने का वस्त्र) इतना मोटा होना चाहिए कि जिसमें सूर्य की किरणें भी प्रवेश न कर सकें। ऐसा छन्ना डबल (द्विगुण) होना चाहिए।

3) छन्ने को नल आदि की टोटी, पाईप आदि से बाँध कर नहीं छानना चाहिए अपितु उसे बर्तन के मुख पर ढ़ाक कर ही छानना चाहिए।

4) छन्ना बर्तन के मुख से तीन गुना बड़ा होना चाहिए। इससे कम होगा तो अनछना जल आ सकता है और बड़ा होगा तो जमीन से गंदा हो जाएगा अतः दुहरा छन्ना बर्तन के मुख से तीन गुना बड़ा होना चाहिए। सर्व प्रथम छन्ने को धो लेना चाहिए पश्चात् छने जल से बर्तन को भी 2-3 बार धोकर भरना चाहिए। ध्यान रखें, छने जल में अनछने जल की एक भी बूँद नहीं गिरना चाहिए और न ही अनछने जल से लिप्त हाथों को या बर्तन को छने जल में डालना या ऊपर रखना चाहिए, छन्ना भी ढ़ाकना हो तो प्रथम उसे छने जल से धो लेना चाहिए। छने जल के बर्तन को, बिना धोई हुई जमीन या अन्य अशुद्ध स्थान पर नहीं रखना चाहिए।

5) जहाँ तक बने जल किसी वाहन द्वारा नहीं लाना चाहिए।

जल की मर्यादा :

छने जल की मर्यादा 2 घड़ी अर्थात (48 मिनिट) की है यदि उस छने जल में 48 मिनिट के

भीतर (पहले) लोंग/इलायची, सोंप/हल्दी आदि ऐसे पदार्थ डालें जिससे जल का स्वाद, वर्ण, गंध आदि बदल जाए, तो उस जल की मर्यादा 6 घंटे की हो जाती है। सामान्य गर्म किये गये जल की मर्यादा 12 घंटे की है तथा उबले जल की मर्यादा चौबीस (24) घंटे की है प्रासुक किया हुआ जल पुनः प्रासुक नहीं किया जा सकता है।

शुद्ध दूध :

सर्व प्रथम अपने ही मजें पात्र (सूखी वाल्टी) माप तथा प्रासुक जल, जिससे दूध दुहने वाले के हाथ तथा गाय के थन/स्तन धोये जाते है। वस्त्र जिससे गाय के थन व दुहने वाले के हाथ पोछे जाते है।

-दूध दुहने वाला उच्च कुलीन, निरामिष तथा नसा न करने वाला होना चाहिए।
-वह नहाकर के ही दूध दुहें।
-दूध चौके वाली बाल्टी आदि में ही दुहे।
-बिना जूते-चप्पल या चमड़े आदि की वस्तु छुए बिना ही दुहे।
-दूध दुहते वक्त धुले हुए हाथों से शरीर या अन्य व्यक्ति, वस्तु आदि को न छुए, छु जाये तो पुनः हाथ धोले।
-दूध को चौके के बर्तन या माप से ही मापे या अन्य बर्तन या माप से नहीं।
-दूध को ढ़क कर ही रखना या लाना चाहिए।
-दूध को 2 घड़ी (48 मिनट) के अंदर ही छान कर गर्म कर लेना चाहिए।
-दूध के बर्तन को अशुद्ध स्थान पर नहीं रखना चाहिए।
-दूध को जूते-चप्पल पहिनें नहीं लाना चाहिए।

मावा – उपर्युक्त विधि से प्राप्त दुध का बना हुआ मावा ही चौके के उपयोग में लाना चाहिए।

घी– उपर्युक्त विधि से प्राप्त दूध को गर्म करके मावा द्वारा या दही द्वारा या मलाई द्वारा या क्रीम द्वारा घी बनाना चाहिए। (गर्म किये गये दूध की क्रीम से ही घी बनाना चाहिए, कच्चे दूध की क्रीम से नहीं)। जब तक उस घी का स्वाद नहीं बिगड़ता तभी तक वह शुद्ध व भक्ष्य माना जाता है।

- घी का पात्र सदैव अच्छी तरह से बंद करके रखना चाहिए ताकी उसमें चिंटी आदि न जा सके।
- चिंटी, मक्खी, मच्छर आदि घी में गिरकर मर जाने से वह अशुद्ध/अभक्ष्य हो जाता है।
- दही से बनाया हुआ घी आठ पहर अर्थात 24 घंटे के अंदर ही तैयार किया जाना चाहिए। इससे अधिक समय लगने पर भी वह अभक्ष्य हो जाता है।

दही– उपरोक्त विधि से लाया हुआ दूध को सिक्का/नींबू/नये जामन आदि को धोकर ही

जमाना चाहिए, पुराना दही आदि डालकर नहीं क्योंकि ऐसा दही अभक्ष्य हो जाता है। जिन वस्तुओं से जमाया है उन्हें अच्छी तरह धोकर सुखा लेना चाहिए, जो साफ न हो सकते हो तो उन्हें अलग कर देना चाहिए। दही की मर्यादा 24 घंटे की ही है इससे अधिक की नहीं। 24 घंटे के अंदर भी यदि उसका स्वाद बिगड़ जाय तो वह अभक्ष्य हो जाता है।

शुद्ध तेल:

तिल्ली, मूँगफली, नारियल आदि जिसका भी तेल निकालना हो उसे सर्वप्रथम देखना चाहिए कि इसमें जीव तो नहीं है, घुने तो नहीं, धुले या गीले कपड़े से पुछे है तभी वे तेल निकालने के योग्य होते है अन्य नहीं। जिस स्पेलर आदि से तेल निकाला जा रहा है वह भी शुद्ध जल से धुला व साफ होना चाहिए तथा कुछ तेल निकल जाने के बाद उसे अलग कर दे तथा बाद वाला निकला हुआ तेल चौके के काम में आ सकता है अन्य नहीं। यद्यपि अनेक जगह बहुत कुछ श्रावक, व्रती लोगों के लिए उक्त विधि से ही अधिक मात्रा में भी निकाल कर रखते है उसे व्रती जन उपयोग में लाते हैं।

गुड़:

प्रासुक जल से धुले गन्ने को धुली हुई मशीन से पेलकर प्राप्त रस को भी छान लेना चाहिए, पश्चात् जल से धोई गई कड़ाही आदि में रस डाल कर ही गुड़ बनाया जाता है। शुद्ध गुड़ को भी अनेक जगह के श्रावक बनाकर रखते है। गुड़ का जब तक स्वाद नहीं बदल जाता है या सीड़ कर पिघल नहीं जाता है तभी तक वही गुड़ शुद्ध है अन्य नहीं।

बूरा (शक्कर):

शक्कर को शोधकर उसमें शुद्ध जल डाल कर सर्व प्रथम छानकर उसे गर्म किया जाता है। कोई कोई उसमें दूध या फिटकरी डालकर उसका मैल दूर कर ही उसका बूरा बनाते है तभी वह शुद्ध कही जाती, सीड़ जाने पर वह पूरा अभक्ष्य हो जाता है।

मार्ग–चला भोजन :

कच्चा भोजन दाल, रोटी, भात, साग आदि या जिसमें पानी आदि पड़ा है उसे पंक्तिबद्ध सात गृहों से अधिक दूरी तक नहीं ले जाया जा सकता है।

नमक :

व्रतियों को अच्छा (असली) सेंधा नमक ही भक्ष्य माना गया है शेष नहीं, सीलन आने पर वह अभक्ष्य हो जाता है। पहले से बाँट कर नहीं रखना चाहिए अपितु जितना आवश्यक हो उतना ही बाँटना चाहिए। कहीं गर्म करने की भी पद्धति है।

2–बर्तन शुद्धि :

सभी बर्तन धातु (पीतल, तांबा, स्टील) आदि के ही होना चाहिए। काँच, प्लास्टिक, फायबर आदि की शुद्धि संभव नहीं है, अतः उन्हें चौके के काम में नहीं लेना चाहिए।

प्रत्येक बर्तन सूखी राख/ईंट आदि के चूरे से मांजना चाहिए। बर्तन में स्टीकर आदि चिपका हुआ नहीं होना चाहिए। बर्तन किसी अन्य मांसाहारी, शराबी आदि निम्न वर्ग के लोगों के उपयोग वाला या ऐसे लोगों से स्पर्शित नहीं होना चाहिये।

3– वस्त्र शुद्धि :

आहार देने वालों के आर्य वस्त्र (पुरुषों के धोती–दुपट्टा होना चाहिये तथा स्त्रियों के साड़ी एवं ब्लाउज) होना चाहिए। वस्त्र फटे हुए नहीं होना चाहिए। रेशम, कोशा आदि के वस्त्र नहीं होना चाहिए। धुले हुये, जो अन्य किसी अशुद्ध व्यक्ति से स्पर्शित नहीं होना चाहिए और अत्यंत भीगे भी नहीं होना चाहिए।

4–काय (शरीर) शुद्धि :

उच्च कुलीन व्यक्ति, जिसे सामाजिक या राजनैतिक कोई (महादोष नहीं लगा हो), अन्य समाज में शादी आदि नहीं हुई हो, जो धर्म विरुद्ध व्यापार आदि न करता हो, जिसने विधवा विवाह न किया हो, जिसने बिना विवाह के भी किसी स्त्री को रखा न हो, समाजादि से बहिष्कृत न हो, महारोगी न हो, सूतक–पातक की अशुद्धि न हो, नहाकर आया तो तथा पैरादि भी जिसने पूरे धो लिये हो, यज्ञोपवीत (जनेऊ) धारी हो, महिलायें लिपस्टिक, नख पॉलिस, स्टीक वाली (बेलबेट) बिंदी, लाख की चूड़ी न पहनें और न लगाकर जाए।

II-. क्षेत्र शुद्धि : जहाँ आहार बनाया जाता है या जहाँ साधुजन आहार लेते हैं उस स्थान की शुद्धि को क्षेत्र शुद्धि कहते हैं। अर्थात् वहाँ हड्डी, सीप, कोंढ़ी, चर्म, नख, पक्षी के पंख या वीट आदि नहीं होना चाहिये। उस स्थान को चौके लगाने के पूर्व की शाम एक दिन पहिले ही धो लेना चाहिए। फिर दूसरे दिन उसमें जूते, चप्पल आदि तथा अशुद्ध वस्त्र पहिने व्यक्ति नहीं जाना चाहिए। यदि रास्ता हो तो लाईन (सीमा) डाल देना चाहिए। वहाँ चींटी, चीटा, पंखी आदि जीव–जंतु नहीं होना चाहिए और न इन जीवों के बिल आदि होना चाहिए। यदि हो तो कोमल (फूल) झाड़ू से आस्ते से ही अलग करना चाहिए। वह स्थान किसी मांसाहारी, शराबी, जुआरी, वेश्या आदि का नहीं होना चाहिए।

वहाँ पंचेंद्रिय विषय वर्धक कोई सामग्री नहीं होना चाहिए। अर्थात् वहाँ दुर्गन्ध, वीभत्स, डरावना, विकारोत्पादक, हिंसक चित्रादि नहीं होना चाहिए, वहाँ पर्याप्त सूर्य प्रकाश होना चाहिए तथा साफ वस्त्र का चंदोवा (पाल) होना चाहिए।

III-. काल शुद्धि : आहारोचित् काल की शुद्धि काल शुद्धि है।

सूतक पातक समय अवधि

अर्थात् सूतक (जन्म विषयक अशुद्धि)

पातक (मरण विषयक अशुद्धि)

मासिक (महिलाओं के रजोधर्म विषयक 4–5 दिन की अशुद्धि)

दण्डित (सामाजिक दण्ड जिसमें जितने काल तक के लिए समाज से

अलग कर दिया जाता है वह काल)

तथा सूर्योदय से 3 घड़ी से लेकर सूर्यास्त से 3 घड़ी के पूर्व का काल आहार काल माना गया है।

IV. भाव शुद्धि : परिणामों की निर्मलता अर्थात् उस समय कषाय, विकार, उद्विग्नता, चिंता, खेद या प्रमाद (आलस्य) भावुकता नहीं होना भाव शुद्धि है।

सोला : यह सभी चारों प्रकार की शुद्धि मन, वचन, काय एवं आहार जल शुद्धि को परस्पर गुणा करने से (4x4)=16 हो जाते हैं।

अंतः सभी शुद्धि को सोला भी कहा जाता है।

पात्र : उत्तम पात्र-मुनि, मध्यम पात्र-आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक-क्षुल्लिका आदि व्रती श्रावक-श्राविका, जघन्य पात्र-अविरत सम्यग्दृष्टि, साधर्मीजन।

संत और असंत में क्या अतंर है जो छोटा भिखारी तुम्हारे पीछे भागे वह असंत है और जहाँ छोटा –बड़ा दोनों भिखारी जिसके पीछे भागे वह संत होता है। जो रोटी के पीछे भागता है वह असंत होता है और जिसके पीछे रोटी भागे वह संत होता है। जो पद, पैसा, प्रतिष्ठा के लिये दौड़ लगाए वह असंत होता है और जिसके पीछे पद, पैसा, प्रतिष्ठा दौड़ लगाये वह संत होता है। जो भीड़ के पीछे भागे वह असंत होता है और जिसके पीछे भीड़ भागे वह संत होता है। जो मौत से डरता है वह असंत होता है और मौत जिससे डरती है वह संत होता है। जो मन के अनुसार चलता है वह असंत होता है और जिसके अनुसार मन चलता है वह संत होता है। जिसके अंदर संसार रहता है वह असंत होता है और जो संसार में रहकर भी संसार में नहीं रहता वह संत होता है। संत बनना अलग बात है संतत्वपना लाना ये दूसरी बात है।

–इंसान क्यों दुःखी है ?

भक्ष्य पदार्थों की मर्यादा[12]

क्र. पदार्थों के नाम	अगहन से फागुन तक (शीतकाल)	चैत्र से आषाढ़ तक (ग्रीष्मकाल)	श्रावण से कार्तिक (वर्षाकाल)
1) बूरा	एक मास	15 दिन	7 दिन
2) दूध दुहने के पश्चात (कच्चा)	दो घड़ी (48 मिनट)	दो घड़ी (48 मिनट)	दो घड़ी (48 मिनट)
3) दूध उबालने के बाद	24 घण्टे	24 घण्टे	24 घण्टे
4) दही (गर्म दूध का)	24 घण्टे	24 घण्टे	24 घण्टे
5) छाछ (बिलोते समय गर्म पानी डालें)	12 घण्टे	12 घण्टे	12 घण्टे
6) छाछ (बिलोते समय ठंडा पानी डालें)	48 मिनट	48 मिनट	48 मिनट
7) कच्चे दूध के दही से बनी छाछ	अभक्ष्य	अभक्ष्य	अभक्ष्य
8) घी, गुड़, तेल स्वाद बिगड़ने पर	1 साल अभक्ष्य	1 साल अभक्ष्य	1 साल अभक्ष्य
9) सर्व प्रकार का आटा, बेसन	7 दिन	5 दिन	3 दिन
10) सर्व प्रकार का पिसा हुआ मसाला	7 दिन	5 दिन	3 दिन
11) नमक पिसा हुआ	48 मिनट	48 मिनट	48 मिनट
12) पीसकर गरम किया नमक	24 घंटे	24 घंटे	24 घंटे
13) मसाला मिला नमक	6 घंटे	6 घंटे	6 घंटे
14) गर्म किया हुआ मसाला मिला नमक	24 घंटे	24 घंटे	24 घंटे
15) अधिक जल वाले पदार्थ- रोटी, पूड़ी, हलवा, बड़ा, कचौड़ी, सेव, बूँदी आदि तेल या घी में तले हुये पदार्थ- पापड़, बड़ी, सेमइया आदि	12 घंटे	12 घंटे	12 घंटे
16) खिचड़ी, कड़ी, दाल-भात रायता, तरकारी आदि	6 घंटे	6 घंटे	6 घंटे
17) बिना पानी के पकवान	7 दिन	5 दिन	3 दिन
18) मौन वाले पकवान	24 घंटे	24 घंटे	24 घंटे
19) लाई, काजू आदि कुटे गर्म किये मेवा	7 दिन	5 दिन	3 दिन
20) गुड़ मिला दही व छाछ	अभक्ष्य	अभक्ष्य	अभक्ष्य
21) मीठे पदार्थ मिला दही चलित रस	48 मिनट स्वाद बदल गया हो	48 मिनट बदबूदार पदार्थ	48 मिनट सर्वथा त्याज्य है

[12]) जिन.सं.प्र.

भक्ष्या भक्ष्य दर्पण

क्र.	पदार्थों के नाम	अभक्ष्य	भक्ष्य
1)	हल्दी, सोंठ (अदरक).	हरी	सूखने के बाद
2)	वर्षा ऋतु छोड़कर सर्व पत्ते वाला साग	हरी	वर्षाकाल छोड़कर
3)	लवंग का फूल ,केशर, जावित्री	हरी	सूखने पर
4)	तुरई, ककड़ी, भिण्डी आदि फल का अखण्ड पकाना		काटकर पकाने पर
5)	सुपाड़ी, इलायची, छुहारा, काजू	अखण्ड	फोड़कर
6)	केले के पत्ते, अरबी के पत्ते तुच्छफल और पत्ता		

व्यवहार गत सूतक पातक शुद्धि का काल प्रमाण[13]

अवसर	जन्म	मरण	मरण
1) 3 पीढ़ी तक	10 दिन	12 दिन	1 महीने तक का बालक 1 दिन
2) 4 पीढ़ी तक	10 दिन	10 दिन	8 वर्ष तक का बालक 3 दिन
3) 5 पीढ़ी तक	5 दिन, (6 दिन)	5 दिन, (6 दिन)	3 मास तक का गर्भपात 3 दिन
4) 6 पीढ़ी तक	4 दिन	4 दिन	इसके के बाद जितने मास का गर्भपात हो उतने दिन
5) 7 पीढ़ी तक	3 दिन	3 दिन	3 दिन
6) 2 पीढ़ी तक	24 घंटे	24 घंटे	गृह त्यागी 1 दिन
7) 9 पीढ़ी तक	6 घंटे	6 घंटे	गृहस्थी परदेश में मरे तो खबर आने के पीछे शेष दिन
8) 10 पुत्री, दासी, दास (अपने घर)		3 दिन	
9) गाय, भैंस आदि (अपने घर में)		1 दिन	1 दिन
10) अनाचारी स्त्री पुरुष के घर		सदा अशौच	

मुनि महाराज खाना नहीं खाते हैं, मुनि महाराज भोजन नहीं करते हैं, मुनि महाराज यदि कुछ ग्रहण करते हैं तो वह आहार ग्रहण करते हैं। खाना, भोजन और आहार इन तीनों में जमीन आसमान का अंतर होता है। खाना वह होता है जहाँ सभ्यता, संस्कृति व आदर,सत्कार नहीं होता सिर्फ खानापूर्ति होती है। भोजन वह होता है जहाँ पर सभ्यता-संस्कृति तो होती है पर आदर-सत्कार नहीं होता है सिर्फ सभ्यता व संस्कृति को कायम रखने के लिये एक-दूसरे को खिलाया जाता है। किन्तु आहार वह होता है जहाँ पर सभ्यता और संस्कृति के अलावा आदर और सत्कार एवं बार-बार आग्रह-प्रत्याग्रह किया जाता है वह आहार कहलाता है। मुनि महाराज खाना व भोजन नहीं सिर्फ श्रावक के घर में आहार ग्रहण करते हैं।

-इंसान क्यों दुःखी

[13]) आरा.

संक्षिप्त सूतक विधि[14]

सूतक में देव- शास्त्र- गुरु का पूजन, प्रक्षालादिक तथा मंदिर जी की जाप, वस्त्रादि को स्पर्श नहीं करना चाहिए। सूतक का समय पूर्ण होने के बाद पूजनादि करके, पात्र दान आदि करना चाहिए।

1) जन्म का सूतक 10 दिन तक माना जाता है।

2) यदि स्त्री का गर्भपात (पाँचवें, छठे महीने में) हो तो जितने महीने का गर्भपात हो, उतने दिन का सूतक माना जाता है।

3) प्रसूति स्त्री को 45 दिन का सूतक होता है, कहीं-कहीं 40 दिन का भी माना जाता है। प्रसूति स्थान 1 महीने तक अशुद्ध है।

4) रजस्वला स्त्री चौथे दिन पति के भोजन आदि के लिए शुद्ध होती है, परंतु देव पूजन, पात्रदान के लिए पाँचवें दिन शुद्ध होती है। व्यभिचारिणी स्त्री के सदा ही सूतक रहता है।

5) मृत्यु का सूतक 3 पीढ़ी तक 12 दिन का माना जाता है, चौथी पीढ़ी में 6 दिन का, पाँचवीं, छठी पीढ़ी तक 4 दिन का, सातवीं पीढ़ी में 3, आठवीं पीढ़ी में 1 दिन-रात, नवमी पीढ़ी में स्नान मात्र में शुद्धता हो जाती है।

6) जन्म तथा मृत्यु का सूतक गोत्र के मनुष्य का 5 दिन का होता है। तीन दिन के बालक की मृत्यु पर 1 दिन का, 8 वर्ष के बालक की मृत्यु का 3 दिन का माना जाता है, इसके आगे 12 दिन का।

7) अपने कुल के किसी गृहत्यागी का सन्यास मरण या किसी कुटुम्बी का संग्राम में मरण हो जाये तो एक दिन का सूतक माना जाता है।

8) यदि अपने कुल का कोई देशांतर में मरण करें और 12 दिन पहले खबर सुनें तो शेष दिन का ही सूतक मानना चाहिये। यदि 12 दिन पूर्ण हो गये हों तो स्नान मात्र सूतक जानों।

9) गौ, भैंस, घोड़ी आदि पशु अपने घर में जनै तो 1 दिन का सूतक और घर के बाहर जनै तो सूतक नहीं होता। घर में दासी तथा पुत्री के प्रसूति होय तो 1 दिन, मरण हो तो 3 दिन का सूतक होता है। यदि घर से बारह हो तो सूतक नहीं। जो कोई अपने को अग्नि आदिक में जलाकर वा विष, शस्त्रादि से आत्म हत्या करें, तो 6 महीने तक का सूतक होता है। इसी प्रकार और भी विचार हैं सो आदि पुराण से जानना।

10) बच्चा हुए बाद भैंस का दूध 15 दिन तक, गाय का 10 दिन तक, बकरी का 8 दिन तक अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है। देश भेद से सूतक विधान में कुछ न्यूनाधिक भी होता है। परंतु शास्त्र की पद्धति मिलाकर ही सूतक मानना चाहिए।

दायक दोष :

जो स्त्री बालक का श्रृंगार कर रही हो, मदिरा पीने में लंपट हो, रोगी हो, मुरदे को

[14]) जिन.सं.प्र.

जलाकर आया हो, नपुंसक हो, रोगादि से पीड़ित हो, वस्त्रादि ओढ़े हुए न हो, मूत्रादि करके आया हो, मूर्छा से गिर पड़ा हो, वमन करके आया हो, लोहू सहित हो, दास या दासी हो, अर्जिका रक्त पटिका आदि हो, अंग को मर्दन करने वाली हो, इन सबों के हाथ से मुनि आहार न लें। (8 वर्ष से कम अति बालक हों, अधिक बूढ़ी हो, भोजन करती झूँठे मुँह हो, पाँच महीना आदि के गर्भ से युक्त हो, अंधी हो, भीत आदि के आँतरे से या सहारे से बैठी हो, ऊँची जगह पर बैठी हो, नीची जगह पर बैठी हो। मुँह से फूँककर अग्नि जलाना, काठ आदि डालकर आग जलाना, काठ को जलाने के लिए सरकाना, राख से अग्नि को ढँकना, जलादि से अग्नि का बुझाना तथा अन्य भी अग्नि को निर्वातन व छट्टन आदि करने रूप कार्य करते हुये भोजन देना, गोबर आदि से भीति का लीपना, स्नानादि क्रिया करना, दूध पीते बालक को छोड़कर आहार देना, इत्यादि क्रियाओं से युक्त होते हुये आहार दे तो दायक दोष जानना।[15])

दाता के गुण :

पात्र में ईर्ष्या न होना, त्याग में विषाद न होना, देने की इच्छा करने वाले में तथा देने वालों में या जिसने दान दिया है उन सबमें प्रीति होना, कुशल अभिप्राय वाला होना, प्रत्यक्ष फल की आकांक्षा न करना, निदान नहीं करना, किसी से विसंवाद नहीं करना आदि दाता की विशेषताएँ हैं।[16]

दाता के 7 गुण :[17]

1) **श्रद्धावान :** धर्म एवं गुरु पर श्रद्धा रखता हो।
2) **भक्ति :** नवधा भक्ति करना एवं विनयपूर्वक उनके गुणों में हार्दिक अनुराग रखना।
3) **तुष्टि :** उत्तम, मध्यम तथा जघन्य पात्रों में से और जितने भी पात्र प्राप्त हों, उनमें संतोष रखना।
4) **विज्ञान :** बाल, वृद्ध या रोगी साधुओं की प्रकृति के अनुसार, उनके योग्य, मात्रा एवं क्रम का ध्यान रखना।
5) **अलुब्धता :** निर्लोभ भाव से आहार देना।
6) **क्षमा :** देते समय क्रोधादि नहीं करना व अपनी शक्ति से अधिक भी नहीं देना।
7) **शक्ति :** दान देने में आलस्य नहीं करना शक्ति है।

आहार के 5 दूषण :[18]

1) विलम्बता से दान देना
2) उदास होकर दान देना
3) दुर्वचन कहकर दान देना
4) निरादर से दान देना
5) दान देकर पश्चाताप करना

[15]) मूला.49-52
[16]) रा. वा. 7/39/4/559/29
[17]) गुण.श्रा. 151
[18]) बा.वि., भा. ।।

आहार के 5 भूषण :[19]

1) आनंद पूर्वक दान देना

2) आदर पूर्वक दान देना

3) प्रिय वचन पूर्वक दान देना

4) निर्मल भाव पूर्वक दान देना

5) दान देकर अपना अहोभाग्य मानना

नवधा भक्ति :

1) प्रतिग्रह : मंगल द्रव्य, कलश आदि हाथ में ले, साफ-शुद्ध स्थान पर खड़े होकर प्रसन्नता से पात्र को सामने आता देख- (मुनियों को)

हे स्वामी ! नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु, अत्र, अत्र, अत्र, तिष्ठ,तिष्ठ, तिष्ठ ।

आर्यिकाओं को-हे माताजी ! वंदामी, वंदामी, वंदामी, अत्र ,अत्र ,अत्र, तिष्ठ, तिष्ठ, तिष्ठ।

ऐलक, क्षुल्लकों को -हे स्वामी ! इच्छामि, इच्छामी, इच्छामी, अत्र, अत्र, अत्र, तिष्ठ,तिष्ठ, तिष्ठ ।

क्षुल्लिकाओं को -हे माताजी ! इच्छामी, इच्छामी, इच्छामी, अत्र, अत्र, अत्र, तिष्ठ, तिष्ठ, तिष्ठ बोलना ।

जब वे आकर खड़े हो जायें, तो मुनि, आर्यिकाओं की तीन प्रदक्षिणा लगाना, किन्तु शेष लोगों की परिक्रमा नहीं लगाई जाती है । पश्चात् मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि, आहार जल शुद्धि, भोजन शाला में प्रवेश कीजिये । इतना बोलकर आगे-आगे भूमि शुद्धि करते हुए विनय के साथ आगे चलते हुए चौके के दरवाजे के बाहर खड़े होकर पुनः मनशुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि, आहार जल शुद्धि, हे स्वामी ! (हे माताजी) भोजनशाला में प्रवेश कीजिये । शुद्ध प्रासुक जल से पैर धोकर भोजन शाला में प्रवेश करें ।

2) उच्चासन : किसी पाटे आदि उचित स्थान की ओर संकेत करते हुए निवेदन करना कि- हे स्वामी ! उच्चासन ग्रहण कीजिये ।

3) पाद प्रक्षालन : जब महाराज/माताजी पाटे पर बैठ जायें, तब उनके चरणों के आगे थाली रखकर प्रासुक जल से पैर धोना और चरणोदक को सविनय सिर पर लगाना ।

4) पूजा : अष्ट द्रव्य से पूजा करना । यथा-

ॐ हूँ श्रीं परम पूज्य.....(जिनकी पूजा की जा रही हो यदि उनका नाम याद हो तो नाम बोलें यदि नाम याद न हो तो मात्र मुनिराज बोलें) मुनिराज/माताजी चरणाग्रे अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण ।

ॐ हूँ श्रीं परम पूज्य मुनिराज जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय **जलं** निर्वपामीति स्वाहा

[19]) बा. वि., भा. ।।

ॐ ह्रूँ श्रीं परम पूज्य मुनिराज संसार ताप विनाशनाय **चंदनं** निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रूँ श्रीं परम पूज्य मुनिराजअक्षय पद प्राप्तये **अक्षतान्** निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रूँ श्रीं परम पूज्य मुनिराज कामबाण विनाशनाय **पुष्पं** निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रूँ श्रीं परम पूज्य मुनिराज क्षुधारोग विनाशनाय **नैवेद्यं** निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रूँ श्रीं परम पूज्य मुनिराज मोहान्धकार विनाशनाय **दीपं** निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रूँ श्रीं परम पूज्य मुनिराज अष्टकर्म दहनाय **धूपं** निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रूँ श्रीं परम पूज्य मुनिराज मोक्षफल प्राप्तये **फलं** निर्वपामीति स्वाहा

उदक-चंदन तंदुल पुष्पकैः, चरु सुदीप-सुधूप फलार्घरकैः।
धवल मंगल गान रवाकुलैः, मम् गृहे मुनिराज महं यजे।

ॐ ह्रूँ श्रीं परम पूज्य.....मुनिराज/माताजी चरणाग्रे अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐलक, क्षुल्लक, क्षुल्लिकाओं के पाद-प्रक्षालन कर अर्घ चढ़ाना चाहिये।

5. नमस्कार : पूजा के बाद गवासन से सविनय नमस्कार करना।

आहार सामग्री दिखाकर प्रत्येक वस्तु को इसलिए बताना चाहिए,ताकि यदि किसी वस्तु का महाराज ने त्याग किया हो तो, उनके निषेध करने पर (उठवाने पर) यह समझ सकें कि अमुक वस्तु का महाराज ने त्याग किया है, उसे नहीं देना चाहिए, उसे अलग कर हाथ आदि धो लेना चाहिये।

जहाँ महाराज का उच्छिष्ट गिरता है, वहाँ बाल्टी, तसला, गंजिया आदि रखना चाहिये, किसी वस्त्र आदि से उस बर्तन को ढ़क देना चाहिये, ताकि छींटे न उचटें, तथा कोई जीव गिरे भी तो, उसे आसानी से जीवित निकाला जा सके।

6) मन शुद्धि : निर्मल मन रखना।

7) वचन शुद्धि : कठोर, कर्कश आदि अशुभ, अनुचित, अपशब्द नहीं बोलना।

8) काय शुद्धि : शरीर, वस्त्र आदि की शुद्धि रखना, जहाँ पर आहार देने हेतु खड़े है, आहार सामग्री रखी है, उच्छिष्ट गिर रहा है वहाँ जीव-जंतु नहीं होना चाहिये।

9) आहार जल शुद्धि : भक्ष्य, शुद्ध, प्रासुक एवं मर्यादित आदि आहार जल शुद्धि है, नवधा भक्ति से आहार देता हूँ, आप आहार स्वीकार करें, मेरे रात्रि भोजन, आलू, प्याज आदि अभक्ष्य वस्तुओं का त्याग हैं, अष्ट मूल गुण के नियम हैं, यज्ञोपवीत है, मिथ्यात्व का त्याग है आदि, यदि नियम न हो तो यथाशक्ति नियम ले लेना चाहिए।

इस प्रकार शुद्धि बोलकर शुद्ध जल ले, महाराज से प्रार्थना करना कि-हे स्वामी! मुद्रा छोड़कर, अंजलि बाँध(बना)कर, आहार ग्रहण करें, फिर उनके हाथ धुलाना, जब वे अंजलि ले खड़े हो जाएँ, तब उन्हें सविनय ध्यान से आहार जल का संशोधन करते हुए तथा क्रम से क्रमशः आहार कराना। आहार को बड़ी सावधानी से देख शोधकर ही देना

चाहिए। आहार में बाल, नख, मृत जीव, कंकड़, कच्चा बीज, त्यागी हुई वस्तु नहीं होना चाहिए, यदि हो तो उस वस्तु को अलग कर दें और हाथ धो लें।

आहार के बाद प्रसन्नता से मुनिराज के हाथ-पैर धुलाना तथा उनके कमण्डलु में (उबला हुआ) प्रासुक पानी भर उन्हें उचित स्थान तक पहुँचाना।

कहीं-कहीं आहार के बाद मुनिराज को दूसरे किसी उचित कमरे आदि में बैठाकर उनकी पूजा या अर्घ्य अथवा आरती की पद्धति है, कहीं मुनिराज के मुख से धर्म के दो शब्द सुनने का भी रिवाज देखा जाता है।

'मैं' और 'मूर्च्छा' का मिट जाना ही सन्यास है और 'मैं' ही संसार है। मूर्च्छा और आसक्ति ही संसार हैं, पत्नी और बच्चे नहीं हैं। फिर भी पत्नि और बच्चों के प्रति जो आसक्ति है-वह संसार है। संसार बड़ी मानसिक घटना है। संसार पूर्व और पश्चिम, उत्तर और दक्षिण में नहीं अपितु तुम्हारे मन में है इसलिए जंगल की तरफ भागने की जरूरत नहीं है बल्कि मन में जो संसार है उसे निकाल फेंकने की जरूरत है और यदि भीतर से संसार निकल जाये, तो फिर ये घर, मकान 'साधना स्थल' बन सकते हैं यही घर-द्वार 'आश्रम' बन सकते हैं।

-मृत्यु बोध 35

काले कलौ चले चित्ते, देहे चन्नादि कीटके।
एतच्चित्त चमत्कार: जिन रूप धरा नरा: ।।

यह बड़ा आश्चर्य है कि इस कलिकाल में जब मनुष्यों का मन चंचल रहता है और शरीर अन्न का कीड़ा बना रहता है, आज भी जिन रूप के धारक मनुष्य पाये जाते है।

-उपासकाध्ययन

VIII. 46 दोष[20]

उद्गम दोष : जो दातार के अभिप्राय से प्रगट होवें ,उद्गम दोष कहलाते है।

1) **अध:कर्म दोष** :षट्काय के जीवों के वध द्वारा आहार उत्पन्न करना अधः कर्म दोष है।

2) **उद्देशिक दोष** : साधु का नाम लेकर भोजन तैयार करना उद्देशिक दोष है।

3) **अध्वसाय दोष** : संयमी का आगमन जानकर भोजन बनाने का आरम्भ करना अध्वसाय दोष है।

4) **पूति दोष** : प्रासुक भोजन में अप्रासुक भोजन मिला देना पूति दोष है।

5) **मिश्र दोष** : संयमी के ग्रहण योग्य भोजन में असंयमी के योग्य भोजन का मिलाना मिश्र दोष है।

6) **स्थापित दोष** : रसोई के स्थान से अन्यत्र पक ये हुए या दूसरे के स्थान में रक्खा हुआ भोजन लाकर देना स्थापित दोष है।

7) **बलि दोष** : यक्ष, नागादि के निमित्त बनाया हुआ भोजन देना बलिदोष है।

8) **प्रावर्तित दोष** : पात्र को पडगाह कर, पीछे काल (समय) की हानि-वृद्धि करना अथवा नवधा भक्ति में शीघ्रता व विलम्ब करना प्रावर्तित दोष है।

9) **प्राविशकरण दोष** : अंधेरा जानकर मंडप आदि को प्रकाश रूप करना प्राविशकरण दोष है।

10) **प्रामिशिक दोष** : अपने घर में किसी वस्तु के विद्यमान न होने पर दूसरे से उधार लाकर देना प्रामिशिक दोष है।

11) **परिवर्तक दोष** : जो वस्तु अपने घर में मौजूद ना हो उसको दूसरे गृहस्थों से अपनी वस्तु के बदले में लाकर देना परिवर्तक दोष है।

12) **अमिघट दोष** : तत्काल दूरदेश से आई हुई वस्तु देना अमिघट दोष है।

13) **उद्भिन्न दोष** : बंधी व सील लगी हुई वस्तु को खोलकर देना उद्भिन्न दोष है।

14) **मालारोहण दोष** : रसोई के स्थान से ऊपर की मंजिल में रखी हुई वस्तु का सीढ़ी पर चढ़कर लाकर देना मालारोहण दोष है।

15) **आच्छेद्य दोष** : उद्वेग, वास, भय के कारण भोजन देना आच्छेद्य दोष है।

16) **अनिसार्थ दोष** : दातार का असमर्थ होना अनिसार्थ दोष है।

उत्पादन दोष : जो आहार प्राप्त करने में अभिप्राय संबंधी दोष पात्र के आश्रय लगते हैं।

1) **धात्री दोष** : गृहस्थ को मंजन, मंडल, क्रीडनादिधात्री कर्म का उपदेश देकर आहार ग्रहण करना धात्री दोष है।

2) **दूत दोष** : दातार को अन्य देश का समाचार सुनाकर आहार ग्रहण करना दूत दोष है।

[20]) मूला. 3-59

3) **निमित्त दोष** : अष्टांग निमित्त ज्ञान, दातार को बताकर आहार ग्रहण करना निमित्त दोष है।

4) **आजीविक दोष** : अपनी जाति, कुल, तपश्चरणादि बतला कर आहार लेना आजीविक दोष है।

5) **वनीपक दोष** : दातार की अभिरुचि के अनुकूल वचन कहकर आहार लेना वनीपक दोष है।

6) **चिकित्सा दोष** : दातार को औषधि बताकर आहार का ग्रहण करना चिकित्सा दोष है।

7) **क्रोध दोष** : क्रोध पूर्वक आहार ग्रहण करना क्रोध दोष है।

8) **मान दोष** : मान पूर्वक आहार ग्रहण करना मान दोष है।

9) **माया दोष** : माया पूर्वक अहार ग्रहण करना माया दोष है।

10) **लोभ दोष** : लोभ पूर्वक आहार ग्रहण करना लोभ दोष है।

11) **पूर्व स्तुति दोष** : भोजन के पहले दातार की प्रशंसा कर आहार ग्रहण करना पूर्व स्तुति दोष है।

12) **पश्चात स्तुति दोष** : आहार ग्रहण करने के पश्चात् दाता की प्रशंसा करना पश्चात स्तुति दोष है।

13) **विद्या दोष** : आकाशगामिनी, जलगामिनी आदि विद्या दातार को बताकर आहार ग्रहण करना विद्या दोष है।

14) **मंत्र दोष** : सर्पविषधारी बिच्छू आदि जीवों के विष दूर करने वाला मंत्र बताकर आहार ग्रहण करना मंत्र दोष है।

15) **चूर्ण दोष** : शरीर की सुंदरता तथा पुष्टता के निमित्त चूर्णादि बताकर आहार ग्रहण करना चूर्ण दोष है।

16) **मूलकर्म दोष** : दातार को अवश के वश करने की युक्ति बताकर आहार लेना मूलकर्म दोष है।

एषणा समिति सम्बन्धी 10 दोष : जो दोष भोजन के आश्रय से लगते है।

1) **शंकित दोष** : यह भोजन योग्य है, अयोग्य है, खाद्य है या अखाद्य है भोजन में ऐसी शंका का होना शंकित दोष है।

2) **मृक्षित दोष** : सचिक्कन (चिकने) हाथ तथा बर्तन में रखते हुए भोजन को ग्रहण करना मृक्षित दोष है।

3) **निक्षिप्त दोष** : सचित्त पात्रादि पर धरा हुआ भोजन ग्रहण करना निक्षिप्त दोष है।

4) **पिहित दोष** : सचित्त पात्रादि में ढ़का हुआ भोजन ग्रहण करना पिहित दोष है।

5) **संव्यवहरण दोष** : दान देने की शीघ्रता से भोजन को न देकर या अपने वस्त्रों को संभाल कर आहार देना संव्यवहरण दोष है।

6) **दायक दोष** : सूतक आदि दोष युक्त अशुद्ध आहार ग्रहण करना दायक दोष है।

7) **उन्मिश्र दोष** : सचित्त मिश्रित आहार ग्रहण करना उन्मिश्र दोष है।

8) **अपरिणत दोष** : अग्नि से परिपूर्ण नहीं पका हुआ है, जला हुआ अथवा तिल, तंदुल, हरण आदि से स्पर्श, रस, गंध, वर्ण बदले बिना जल ग्रहण करना अपरिणत दोष है।

9) **लिप्त दोष** : हरताल, गेरु, खड़िया आदिक अप्रासुक द्रव्य से लिप्त हुए भोजन व हस्त द्वारा दिया हुआ आहार ग्रहण करना लिप्त दोष है।

10) **परित्यजन दोष** : दातार द्वारा पात्र के हस्त में स्थापन किया हुआ आहार जो पाणिपात्र में गिरता हो अथवा अपने पाणिपात्र में आये हुए आहार को छोड़ और आहारग्रहण करना परित्यजन दोष है।

4. **आहार दोष :–** 1) **संयोजन दोष** : शीतल भोजन या जल में उष्ण वस्तु अथवा उष्ण भोजन व जल में शीतल वस्तु मिलाना संयोजन दोष है।

2) **अप्रमाण दोष** : प्रमाण से अधिक गृद्धता से भोजन करना अप्रमाण दोष है।

3) **अंगार दोष** : अति गृद्धता सहित आहार लेना अंगार दोष है।

4) **धूम दोष** : 'यह भोजन प्रकृति विरुद्ध है' ऐसा संक्लेश या ग्लानि करते हुए आहार लेना धूम दोष है।

अध:कर्म दोष : अपने निमित्त स्वतः भोजन तथा उसकी सामग्री तैयार करना अधःकर्म दोष है। यह 46 दोषों के अतिरिक्त महान दोष कहलाता है।

बत्तीस अंतराय : अंतराय सिद्ध भक्ति होने के पश्चात् माना जाता है।



किसी ने मुझसे पूछा–मोक्ष का रास्ता कैसे मिलता है ? मैंने कहा–मोक्ष का रास्ता उन्हीं को खुलता व मिलता है जिनका प्रभु और गुरु से वास्ता रहता है, जिनकी प्रभु व गुरु के प्रति आस्था रहती ,उन्हीं को मोक्ष का रास्ता खुलता है। ध्यान रहे, किसी आस्तिक की आस्था न टूटे, जिंदगी में ऐसा काम न करना। मकान तोड़ देना, घर तोड़ देना और मंदिर–मस्जिद तोड़ देना पर किसी आस्तिक की आस्था को मत तोड़ना क्योंकि घर, मकान, मंदिर तो टूटकर दुबारा बन सकते हैं पर आस्था टूटकर दुबारा नहीं बन सकती है, आँख से गिरा आँसू, नजरों से गिरा आदमी और आस्था से फिसला आस्तिक दुबारा कभी उठ नहीं सकता है।

–इंसान क्यों दुःखी हैं ?19

IX. बत्तीस अन्तराय[21]

आहार के अन्तराय : मुनियों की आहारचर्या जितनी कठोर है उससे भी अधिक उसके दोषों को टालना। श्रमण धर्म के मूलभूत अहिंसा मूलगुण तथा विविध प्रकार के उत्तरगुणों का निर्विघ्न पालन करना इसका उद्देश्य है। आहार त्याग के बत्तीस अन्तराय हैं।

1) काक अन्तराय : आहारार्थ गमन करते हुए अथवा आहार ग्रहण करते समय काक, बक, बाज आदि बीट कर दें तो वह काक अन्तराय है।

2) अमेध्यान्तराय : आहार को जाते समय अशुचि पदार्थ मल आदि से यदि पैर लिप्त हो जाए तो अमेध्य नामक अन्तराय होता है।

3) छर्दिका (वमन) अन्तराय : यदि मुनिराज को वमन हो जाए तो वमन या छर्दिका नामक अन्तराय होता है।

4) रोधन अन्तराय : आहार को जाते समय यदि कोई रोक दें कि तुम आहार के लिए नहीं जा सकते तो वह रोधन अन्तराय है।

5) रुधिर अन्तराय : यदि अपने या अन्य के शरीर से रुधिर निकलता हुआ दिख जाए तो वह रुधिर अन्तराय है।

6) अश्रुपात अन्तराय : दुःख से यदि अपने अथवा समीप में स्थित किसी अन्य के अश्रु आ जाने पर अश्रुपात नाम का अन्तराय होता है।

7) जान्धवः परामर्श : घुटनों से नीचे के भाग का यदि हाथ से स्पर्श हो जाए तो वह जान्धवः परामर्श नामक अन्तराय होता है।

8) जानूपरि-व्यतिक्रम : घुटनों से ऊपर के भागों (अवयवों) का स्पर्श हाथ से हो जाए तो जानू परिव्यतिक्रम अन्तराय होता है।

9) नाभ्यधो-निर्गमन : नाभि से नीचे मस्तिष्क करके यदि निकलना पड़े तो वह नाभ्यधो निर्गमन नामक अन्तराय है।

10) प्रत्याख्यात सेवन अन्तराय : जिस वस्तु का त्याग है यदि उसका भक्षण हो जावे तो प्रत्याख्यात सेवनान्तराय है।

11) जन्तुवधअन्तराय : यदि अपने से या अन्य के द्वारा किसी जन्तु का वध हो जाए तो जन्तुवध अन्तराय है।

12) काकादि पिण्ड हरण अन्तराय : यदि कौआ आदि हाथ से ग्रास हरण कर ले जाए तो काकादि पिण्ड हरण नाम का अन्तराय है।

13) पिंड पतन अन्तराय : यदि आहार करते हुए साधु के हाथ से ग्रास पतन हो जाए तो पिण्ड पतन नाम का अन्तराय होता है।

[21] मूला 76-81

14) पाणौ जन्तुवध अन्तराय : यदि आहार करते समय पाणिपुट में कोई जन्तु आकर स्वयं मर जाए तो पाणौ जन्तुवध नामक अन्तराय होता है।

15) मांसादि दर्शन अन्तराय : यदि मृत पंचेंद्रिय जीव के शरीर का मांस आदि दिख जावे तो मांस दर्शन नामक अन्तराय है।

16) उपसर्ग अन्तराय : यदि देव, मनुष्य, तिर्यंच कृत उपसर्ग हो जाए तो उपसर्ग अन्तराय होता है।

17) पादान्तरे जीव अन्तराय : यदि पंचेंद्रिय जीव पैरों के अन्तराल से निकल जावे तो पादान्तरे जीव नामक अन्तराय होता है।

18) भाजन–सम्पात अन्तराय : आहार प्रदाता के हाथ से बर्तन छूटकर गिर जावे तो भाजन सम्पात नामक अन्तराय होता है।

19) उच्चार अन्तराय : यदि मुनि के अपने उदर से मल च्युत हो जाए तो उच्चार नामक अन्तराय होता है।

20) प्रस्रवण अन्तराय : आहार करते समय यदि मूत्र आदि हो जावे तो प्रस्रवण नामक अन्तराय होता है।

21) अभोज्य गृह प्रवेश : आहार हेतु पर्यटन करते हुए मुनि का चांडाल आदि अभोज्य घर में प्रवेश हो जाए तो अभोज्य गृह प्रवेश नामक अन्तराय होता है।

22) पतन अन्तराय : यदि थकावट, मूर्च्छा आदि आने पर साधु गिर जाए तो पतन नामक अन्तराय है।

23) उपवेशन अन्तराय : आहार करते समय मुनि को यदि बैठना पड़ जाए तो उपवेशन नाम का अन्तराय होता है।

24) सदंश अन्तराय : आहार चर्या के समय यदि कुत्ता आदि काट ले तो सदंश नाम का अन्तराय होता है।

25) भूमि स्पर्श अन्तराय : सिद्ध भक्ति कर लेने के पश्चात् यदि हाथ से भूमि का स्पर्श हो जाए तो भूमि स्पर्श नाम का अन्तराय होता है।

26) निष्ठीवन अन्तराय : यदि मुनि के मुख से थूक, कफ आदि निकल जाए तो निष्ठीवन नामक अन्तराय होता है।

27) उदरकृमि निर्गमन अन्तराय : यदि उदर से कृमि निकल पड़े तो उदर कृमि निर्गमन नामक अन्तराय होता है।

28) अदत्त ग्रहण अन्तराय : श्रावक के द्वारा न दी गई वस्तु का ग्रहण साधु के द्वारा हो जाए तो अदत्त ग्रहण नाम का अन्तराय होता है।

29) प्रहार अन्तराय : आहार के समय साधु के ऊपर या अन्य किसी के ऊपर तलवार, छुरी आदि से प्रहार हो जाए तो प्रहार नामक अन्तराय होता है।

30) ग्राम दाह अन्तराय : यदि ग्राम में अग्नि लग जाए तो ग्राम दाह नामक अन्तराय होता है।

31) पादेन किंचित् ग्रहण अन्तराय : आहार के समय यदि पैर से कुछ ग्रहण कर लिया जाए तो पादेन किंचित ग्रहण नाम का अन्तराय होता है।

32) करेण किंचित् ग्रहण अन्तराय : आहार के समय यदि हाथ से कुछ वस्तु भूमि पर से साधु के द्वारा ग्रहण कर ली जाए तो करेण किंचित ग्रहण नाम का अन्तराय होता है।



साधुसङ्गमनासाद्य, यो ना मुक्त्यालय व्रजेत।
स चान्धः प्रसखलन्मार्गे, कथं मेरुं समारुहेत्।।

जो मनुष्य साधु संघ की संगति किये बिना ही मोक्ष को जाना चाहता है, वह अन्ध पुरुष अच्छे मार्ग में ही लड़खड़ाता हुआ मेरु पर कैसे चढ़ सकता है ?

-सुभाषित रत्नावली

X. दाता के प्रकार, दान एवं फल

कृत: पात्रता हो तो स्वयं अपने हाथ से आहार देना।

कृत का फल: निर्ग्रंथ दिगम्बर मुनियों को मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने आहार दान दिया जिसके प्रभाव से मोक्ष को प्राप्त हुये। सीताजी ने मुनियों को आहार दिया, जिससे वे स्वर्ग (अनुत्तरों) में देव हुई।

कारित : पात्रता के अभाव में दूसरों से आहार दिलाना।

कारित का फल: श्री कृष्ण ने आहार दिलाया जिससे वे भविष्य में तीर्थंकर हो निर्वाण प्राप्त करेंगे।

अनुमोदना : कृत व कारित की भी पात्रता के अभाव में अर्थात् जो न स्वयं आहारादि दे सकता और न दूसरों से दिला सकता है वह आहार देखकर प्रसन्न होता है भावना भाता है कि अमुक या सभी साधुजनों के आहार निरंतराय हो ताकि वे स्वपर कल्याण कर सके। आदि अथवा दाता आदि की प्रशंसा करना कि आपने अच्छा कार्य किया, यह आपका सौभाग्य है, आप बड़े भाग्यशाली है आदि।

आहार दान का फल : तीनों पात्रों को आहारादि की कृत, कारित, अनुमोदना करने से परंपरा से मोक्ष या स्वर्ग आदि की प्राप्ति होती है। अथवा–उत्तम पात्र के लिए आहारादि दान की कृत/कारित/अनुमोदना करने से उत्तम भोग भूमि की प्राप्ति होती है। मध्यम पात्र के लिए आहारादि दान की कृत/कारित/अनुमोदना करने से मध्यम भोग भूमि की प्राप्ति होती है।

जघन्य पात्र को आहारादि दान की कृत/कारित/अनुमोदना करने से जघन्य भोग भूमि की प्राप्ति होती है।

भोग भूमि: जहाँ पर दीर्घ काल तक कल्पवृक्षों से यथेष्ठ जो और जैसा चाहे, वह और वैसा सुख सामग्री मिलती है।

अनुमोदना का फल: जब वन में चारण ऋद्धिधारी मुनियों को वज्रजंघ चक्रवर्ती और श्रीमती महारानी आहार दे रहे थे उस समय शूकर, व्याध्र, नकुल (नेवला), बंदर आदि ने आहार दान की अनुमोदना की थी जिससे वे यथा क्रम से उत्तम भोग भूमि व स्वर्ग को प्राप्त हुए, बाद में वहाँ से आकर क्रमशः व्याध्र का जीव अनंत वीर्य पुत्र, शूकर का जीव अच्युत नाम का पुत्र, नेवला का जीव वीर नामका पुत्र, बंदर नाम का जीव वरवीर नाम का पुत्र हुआ/[A] सुअर ने वसतिका (रुकने का स्थान) में मुनि की रक्षा करते हुए सिंह से मुकाबला कर प्राण तक विसर्जन कर दिये, जिससे वह स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ उसने वसतिका दान व मुनि सेवा का ऐसा अचिंत्य फल जान वहाँ से आकर मुनिराज की चरण वंदना/पूजा की।

शास्त्रों में ऐसे बहुत से उदाहरण देखने में मिलते है।

(A)आ.पु.पर्व 16, पृ–346, गा.–3

आहार दान का फल : –

कथितं च गणेशेन तत्रत्ये प्रगुणा जनाः ।

साधु दान समायुक्ता भवन्त्येते सुमानुषाः ।।[22]

उत्तर में गणधर भगवान कहने लगे कि जो सरलचित्त के धारी मनुष्य मुनियों के लिए आहार आदि दान देते है वे ही इन भूमियों में उत्तम मनुष्य होते हैं ।

नितान्तं मृदुनि क्षेत्रे दूरं कृष्टे हलाननैः ।

क्षिप्तं बीजं यथानन्तगुणं सस्यं प्रयच्छति ।।[23]

जिस प्रकार हल की नोकं से दूर तक जुते और अत्यंत कोमल क्षेत्र में बोया हुआ बीज अनन्तगुण धान्य प्रदान करता है ।

यथा चेक्षुषु निक्षिप्तं माधुर्यं वारि गच्छति ।

पीतं च धेनुभिस्तोयं क्षीरत्वेन विवर्तते ।।[24]

जिस प्रकार ईखों में दिया हुआ पानी मधुरता को प्राप्त होता है और गायों के द्वारा पिया हुआ पानी दूध रूप में परिणत हो जाता है ।

आदमी बड़ा बेईमान है झुकने को कहो तो झुकता नहीं है पर वक्त की जब मार पड़ती है तो अपने आप झुक जाता है वैसे तो मस्तक झुकता नहीं है । वक्त की मार स्वयं कमर झुका देती है कमर झुकते ही व्यक्ति का सारा शरीर झुक जाता है । पर मान्यवर ! तन के झुकने से कुछ नहीं होता, तन के साथ-साथ मन भी झुकना चाहिए । क्योंकि मन के झुकने से ही मानव महान होता है और सिर्फ महान ही नहीं अपितु भगवान भी हो जाता है । शर्त है कि मन झुके, एक बार तन न झुके कोई बात नहीं, तन झुके बिना यदि मन झुकता है तो तुम्हारा वह झुकना ही है ।

–इंसान क्यों दुःखी है ?20

[22]) प. पु. 3/65 [23]) प. पु. 3/67 [24]) प. पु. 3/68

XI. तप से प्राप्त होने वाली ऋद्धियाँ

सच्चे साधकों की सम्यक् निश्चल साधना के बल से अनेक सहज सिद्धियाँ/शक्तियाँ उत्पन्न हो जाती है। जैसा कि सर्वार्थ सिद्धि ग्रन्थ में श्री पूज्य पादाचार्य ने लिखा है कि-

उनके शापानुग्रह शक्ति उत्पन्न हो जाती है यद्यपि वे किसी को अभिशाप देते नहीं है। फिर भी उनका अनादर, अविनय या निंदा करने वालों का बुरा होता है।

जैसे ब्रह्मचर्य व्रत से, जाप से, एक बार शुद्ध भोजन करने से, अहर्निश भगवत् भक्ति करने से, नग्नता विषयक अनेक डांस, मच्छर, पशु व अज्ञानियों के द्वारा प्राप्त कष्ट को अपनी सहिष्णुता से सहन करने से, पैदल तीर्थयात्रा करने से, केशलुंचन करने से, अहर्निश ज्ञान-ध्यान में निरत रहने से, प्राणीमात्र पर करुणा करने से, प्रत्येक प्राणी हित चिंतक रहने से, विभिन्न प्रकार का त्याग व उपवास आदि कठोर तपश्चर्या करने से विभिन्न ऋद्धियाँ भी प्राप्त हो जाती है। शास्त्रों में साधुओं को प्राप्त होने वाली 64 ऋद्धियों का वर्णन प्राप्त होता हैं। क्षुद्र विद्याओं कि सिद्धियाएँ तो अन्य भी सामान्य जनों को हो जाती है। किन्तु विशेष ऋद्धियाँ एक मात्र तपस्वी मुनि जनों को ही होती है। ऋद्धियों का सामान्य परिचय निम्न प्रकार से है-

ऋद्धियों की परिभाषाएँ

प्रथम बुद्धि ऋद्धि 18 प्रकार की है।

1) केवल ऋद्धि : केवलज्ञान व केवलदर्शन होना जिसके द्वारा त्रिकालवर्ती सभी रूपी- अरूपी द्रव्य के समस्त गुण व पर्याय को एक साथ जाना तथा देखा जाता है।

2) मनः पर्याय ऋद्धि : यह ऋद्धि- ऋजुमति तथा विपुलमति दो प्रकार की है। पर के मन में स्थित पदार्थ को किसी की बिना सहायता से जाने लेना मनः पर्याय ऋद्धि है।

3) अवधि ऋद्धि : त्रिकाल गोचर रूपी पदार्थों को देश-काल की मर्यादा लिए जान लेना अवधि ऋद्धि है। यह देशावधि, सर्वावधि, परमावधि नाम से तीन प्रकार की है।

4) बीज बुद्धि ऋद्धि : किसी ग्रन्थ के एक श्लोक को ग्रहण करके सम्पूर्ण ग्रंथ का ज्ञान होना।

5) कोष्ठ बुद्धि ऋद्धि : जिस प्रकार कोठे में नाना प्रकार की वस्तुएँ रखी रहती हैं और आवश्यकता होने पर अलग-अलग वस्तु निकाल कर देते हैं इसी प्रकार मुनीश्वर जो कुछ पढ़े अथवा सुने, वह भिन्न-भिन्न याद रहे, एक वार्ता का अक्षर, दूसरी वार्ता में न मिले उसको कोष्ठ बुद्धि ऋद्धि अथवा कोष्ठस्याधान्योपम् ऋद्धि कहते हैं।

6) संभिन्न स्रोतृ ऋद्धि : बारह योजन लंबे, नौ योजन चौड़े क्षेत्र के मनुष्य, पशुओं के शब्दों को एक काल में पृथक्-पृथक् रूप से श्रवण करना।

7) पदानुसारिणी ऋद्धि : आदि मध्यान्त के एक-एक पद से ही समस्त ग्रन्थ का कंठाग्र हो जाना।

8) दूरात्स्पर्श ऋद्धि : आठ प्रकार के स्पर्श का ज्ञान पवन आदि के स्पर्श होने से हो जाना।

9) दूरास्स्वादन ऋद्धि : मनुष्य क्षेत्र तक के रसों का स्वाद बिना चखे ही जान लेना।

10) दूराद्घ्राण ऋद्धि : बहुत दूर के सुगन्ध व दुर्गन्ध का जान लेना।

11) दूराद्दर्शन ऋद्धि : दूरवर्ती प्रत्येक पदार्थ को दूर से देख तथा जान लेना।

12) दूराच्छ्रवण ऋद्धि : सात प्रकार के स्वर और पाँच प्रकार की वादित्र ध्वनि को दूर से सुनना तथा जानना।

सप्तस्वर नाम :–1) ऋषभ (गाय का शब्द) 2) निषाद् (मेघ गर्जना) 3) गन्धार (बकरी की बोली) 4) षडज (गरूड की बोली) 5) मध्यम (क्रौंच पक्षी की बोली) 6) धैवत् (घोड़े का स्वर) 7) पंचम (कोयल की बोली) ये सात स्वर हैं।

पंच वादित्र :–1) चर्म (मृदंग आदि) 2) फूँक (बाँसुरी आदि) 3) ताँततार (वीणा आदि) 4) ताल (मंजीरा आदि) 5) जल लहर (पानी का शब्द) ये पाँच प्रकार के वादित्र है।

13) दस पूर्व ऋद्धि : दस पूर्व के पढ़ने से रोहणी आदि 500 तथा अंगुष्ठादि 600 क्षुद्र देवता आज्ञा मानें।

14) चौदह पूर्व ऋद्धि : जिससे सम्पूर्ण आगम में निष्णातता तथा श्रुतकेवलीपना प्राप्त हों।

15) प्रत्येक ऋद्धि : पाँच इंद्रियों को दमन कर बिना गुरु के भी ज्ञान व तपश्चरण में वृद्धि हो।

16) वादित्व ऋद्धि : दूसरे को वाद में जीतना।

17) प्रज्ञा ऋद्धि : तत्त्वार्थ अथवा पदार्थों के भेद को बिना शास्त्र को पढ़े स्वयं जान लेना।

18) निमित्तक बुद्धि ऋद्धि : इसके आठ भेद हैं–पशु, पक्षियों की भाषा सुनकर उस भाषा से शुभाशुभ फल को जानना, सो स्वर भेद है ।। 1 ।।

ग्रह नक्षत्रादिक को देखकर शुभाशुभ को जानना सो अंतरिक्ष है ।। 2 ।।

पृथ्वी कम्पनादि लक्षणों को जानकर शुभाशुभ फल को बताना अंगभूत है ।। 3 ।।

वैद्यक सामुद्रिक आदि से मनुष्य तथा चौपायों का शुभाशुभ जानना सो मंड है ।।4 ।।

वस्त्र, शस्त्र, पशु, पक्षी और अग्नि आदि से शुभाशुभ जानना चिन्ह है ।। 5 ।।

तिल, मस्सा, लहसन आदि अंग के चिन्हों को देखकर उनके शुभाशुभ को जानना सो व्यंजन है ।। 6 ।।

श्री वत्स, शंख, चक्रादि चिन्ह को देखकर उनके शुभाशुभ को जानना सो लक्षण है ।। 7 ।।

स्वप्न से शुभाशुभ जानना सो स्वप्न चिन्ह है ।। 8 ।।

ये अठारह भेद बुद्धि ऋद्धि के हैं।

दूसरी औषधि ऋद्धि आठ प्रकार की हैं:

1) मलौषधि ऋद्धि : मुनि की विष्ठा रोगी के शरीर से लग जाए तो सर्व रोगों का नाश होना।

2) क्ष्वेल ऋद्धि : मुनि का कान, नाक आदि का मल रोगी के लग जाए तो सर्व रोगों का नाश होना।

3) आमर्षौषधि ऋद्धि : रोगी या दरिद्री को मुनिमहाराज के शरीर का स्पर्श हो जाए तो सर्व रोगों का वा दरिद्रता समाप्त हो जाती है।

4) जल्लौषध ऋद्धि : मुनि के शरीर का पसेव, दरिद्री अथवा रोगी के लग जाए तो दरिद्रता और रोग ठीक हो जाता है।

5) क्ष्वेलौषध ऋद्धि : दरिद्री वा रोगी मनुष्य के मुनि का मूत्र, कफ, थूक लग जाये तो दरिद्रता वा रोग ठीक हो जाता है।

6) सर्वौषधि ऋद्धि : मुनि के शरीर का स्पर्श कर जो पवन आवे, उसके लगते ही रोगी का सर्व रोग नाश हो जाता है।

7) दृष्टि विष ऋद्धि : किसी को किसी साँप ने काटा हो अथवा किसी ने विष खा लिया हो तो मुनि के देखते ही निर्विष हो जाता है।

8) आस्याविष ऋद्धि : विष मिश्रित भोजन भी जिस ऋद्धि के प्रभाव से निर्विष हो जाता है।

तीसरी क्षेत्र ऋद्धि है उसके दो भेद होते हैं :

1) अक्षीण महानस ऋद्धि : मुनि जिसके घर में आहार लें तो उस दिन भोजन अटूट हो जाता है।

2) अक्षीण महालय ऋद्धि : मुनि जिस चौके में आहार ले उसमें चक्रवर्ती की सेना अगर बैठकर भोजन करे तो भी कमी नहीं होती।

चौथी बल ऋद्धि के तीन प्रकार हैं :

1) मनोबल ऋद्धि : जिसके बल से द्वादशांग वाणी का अंतर्मुहूर्त में मन से पाठ कर लिया जाए।

2) वचन बल ऋद्धि : जिसके बल से द्वादशांश वाणी का अंतर्मुहूर्त में वचन द्वारा पाठ कर लिया जाए।

3) काय बल ऋद्धि : द्वादशांश वाणी का पाठ अंतर्मुहूर्त में काय द्वारा कर लेना अथवा पहाड़ समान भारी बोझ को उठा लेना।

पाँचवीं तप ऋद्धि सात प्रकार की हैं :

1) **घोर तप ऋद्धि :** श्मशान आदि भयानक स्थानों में निःशंक ध्यान लगा कर परिषह सह लेना।

2) **महत् ऋद्धि :** निर्विघ्न 108 व्रत का क्रम पूर्वक पालन करना और उपवास करना।

3) **उग्रतप ऋद्धि :** एक, दो अथवा तीन दिन तथा पक्ष, मासादिक का उपवास प्रारंभ कर मरणासन्न होने पर भी विचलित नहीं होना।

4) **दीप्ति ऋद्धि :** घोर तप करने से भी देह की कांति न घटना।

5) **महा तप ऋद्धि :** जो वस्तु ग्रहण की जाए अथवा पान की जाए उसका मल, मूत्र, मांस कुछ भी न बने। जिस प्रकार अग्नि में गिरने से सब पदार्थ भस्म हो जाते हैं उस प्रकार भोजन का मल, मूत्र आदि रूप में परिणमन न होना।

6) **घोर गुण ऋद्धि :** रोग आदि के होने पर भी अनशन आदि व्रत का अतिचार रहित पालन करना।

7) **घोर ब्रह्मचर्य ऋद्धि :** ऐसा ब्रह्मचर्य का पालन करना कि जिससे स्वप्न में भी चित्त चलायमान न हो।

छठी रस ऋद्धि के 4 भेद हैं :

1) **पयस्त्रवा ऋद्धि :** मुनि जिस गृहस्थ के घर भोजन करें तो उनके पाणिपात्र में रुक्ष-भोजन भी क्षीर रस रूप में परिणमन हो जाए और उस दिन समस्त रसोई दुग्धमय हो जाए।

2) **घृतस्त्रवा ऋद्धि :** मुनि जिस गृहस्थ के घर भोजन करें तो उस दिन समस्त रुक्ष भोजन भी घृत सहित हो जाए।

3) **मिष्टास्त्रवा ऋद्धि :** मुनि जिस गृहस्थ के घर भोजन करे तो उस दिन रसोई मिष्टरस हो जाए।

4) **अमृतस्त्रवा ऋद्धि :** मुनि जिस गृहस्थ के घर भोजन करे उस दिन रसोई अमृत हो जाए।

सातवीं विक्रिया ऋद्धि ग्यारह प्रकार की हैं :

1) **अणिमा ऋद्धि :** जिसके बल से अपना शरीर छोटा कर सकते हैं।

2) **महिमा ऋद्धि :** जिससे पर्वत के समान दीर्घ शरीर धारण कर सकते हैं।

3) **लघिमा ऋद्धि :** जिसके बल से आक वृक्ष के तूल (कपास) के समान हलका शरीर धारण कर सकते हैं।

4) **गरिमा ऋद्धि :** जिसके बल से पर्वत के समान भारी शरीर धारण कर सकते हैं।

5) **प्राप्ति ऋद्धि :** जिससे पृथ्वी पर बैठे मेरु आदि को पादाँगुष्ठ से स्पर्श कर सकते हैं।

6) **प्राकाम्य ऋद्धि :** जिससे समुद्र सरोवर आदि के जल में पृथ्वी पर गमन करने के

समान गमन करे।

7) ईशत्व ऋद्धि : जिससे अपनी इच्छानुसार वैभव धारण कर सकते हैं।

8) वशित्व ऋद्धि : जिससे मनुष्य, पशु आदि को इच्छानुसार वश में कर सकते हैं।

9) अप्रतिपात ऋद्धि : जिससे पर्वत, कोटि आदि को भेदकर अनिरुद्ध आकाशवत् चले जावें।

10) अन्तर्ध्यान ऋद्धि : जिससे अन्य मनुष्यों से दृष्टि अगोचर होकर स्वंय सब मनुष्यों को देख सकते हैं।

11) कामरूपित्व ऋद्धि : जिससे पशु, पक्षी आदि का रूप इच्छानुसार बना सकते।

आठवीं क्रिया ऋद्धि के दो मूल भेद और दश उत्तर भेद हैं।

दो मूल भेद :

1) चारण ऋद्धि 2) आकाशगामिनी ऋद्धि

चारण ऋद्धि आठ प्रकार की हैं :

1) जल चारण ऋद्धि : जिसमें भूमि, वायु और जल पर गमन कर सकते हैं।

2) जंघा चारण ऋद्धि : जिससे पृथ्वी से चार अंगुल ऊपर चल सकते हैं।

3) पुष्प चारण ऋद्धि : पुष्पों पर पाँव रखते हुए गमन करे परंतु फिर भी फूल न टूटे।

4) फल चारण ऋद्धि : जिससे फलों पर पैर रखकर चलने पर भी फल न टूटे।

5) पत्र चारण ऋद्धि : जिससे पत्तों पर पैर रखकर चलने पर भी पत्र न टूटे।

6) शयन चारण ऋद्धि : जिससे कोमल तन्तु वाली बेल पर पैर रखकर चलने पर भी बेल न टूटें।

7) तन्तु चारण ऋद्धि : जिससे मकड़ी के तन्तु पर पैर रखकर चलने पर भी तन्तु न टूटें।

8) अग्निशिखा चारण ऋद्धि : जिससे अग्नि शिखा पर पैर रखकर चलने पर भी पैर न जले।

आकाशगामिनी ऋद्धि दो प्रकार हैं :

1) पद्मासन ऋद्धि : जिससे पद्मासन बैठे हुए आकाश में गमन कर सकते हैं।

2) कायोत्सर्ग ऋद्धि : जिससे खड़े हुए आकाश में जा सकते हैं।

आठ प्रकार की चारण ऋद्धि और दो प्रकार आकाशगामिनी ऋद्धि–इस प्रकार क्रिया ऋद्धि के दश भेद हैं।

जिंदगी में धर्म ध्यान की किरण होनी चाहिए। जिंदगी में परम उत्सव होना चाहिए। मैत्री, प्रेम और सद्भाव के फूल तथा परमात्मा एवं सत्य के फल जीवन के वृक्ष पर होने चाहिए। जीवन आनंद की यात्रा होनी चाहिए तथा उसमें यात्रा का आनंद भी होना चाहिए। जिंदगी बेशक एक यात्रा है जिसमें चलना ही चलना है। सुबह से शाम तक की बिना रुकी यात्रा ही तो जिंदगी की यात्रा है, जिसमें पौ जन्म है, प्रभात बचपन, दोपहर जवानी है, संध्या बुढ़ापा और रात मृत्यु है। रात जीवन की कहानी का उपसंहार है, विराम है, पटाक्षेप है।

–मृत्यु बोध 17

बुद्धि ऋद्धि	–	18
औषध ऋद्धि	–	8
क्षेत्र ऋद्धि	–	2
बल ऋद्धि	–	3
तप ऋद्धि	–	7
रस ऋद्धि	–	4
विक्रिया ऋद्धि	–	11
चारण क्रिया ऋद्धि	–	8
आकाशगामिनी ऋद्धि	–	2
		63



3. प्राचीन-विभिन्न दर्शन
एवं
साहित्यों में दिगम्बर जैन मुनि

अभी तक हम दिगम्बर जैन साहित्यों में दिगम्बर जैन मुनि एवं उनकी चर्या व महिमा को समझ चुके है अब हम हमारे भारतीय विभिन्न दर्शनों,साहित्यों एवं विद्वानों की दृष्टि में दिगम्बर जैन मुनि व उनकी महिमा को देखेंगे।

विश्व के प्रायः सभी दर्शन, मत, सम्प्रदाय व धर्म ग्रंथ इस बात के साक्षी है कि दिगम्बर नग्न साधुओं का बहुत प्राचीन इतिहास है। वे प्राग् ऐतिहासिक काल से है तथा उन्हें सभी ने पर्याप्त आदर-सम्मान दिया है, इसे ही हम अब देखने, जानने और समझने का एक लघु प्रयास करेंगे।

अनन्त शास्त्रं बहुलाश्च विद्याः, अल्पश्च कालो बहुविघ्नता च।
यत्सार भूतं तदुपासनीयं, हंसो यथा क्षीरमिवाम्बु मध्यात्।।

-चाणक्य

शास्त्र अनेक हैं, विद्याएँ भी बहुत हैं, समय थोड़ा है, विघ्न-बाधाएँ भी बहुत सी हैं। अतएव जैसे हंस जल-मिश्रित दूध में से जल को अलग करके केवल दूध को ले लेता है, उसी प्रकार निरर्थक बातों को छोड़कर जो कुछ सारभूत हो, उसी को ग्रहण कर लेना चाहिए।

मैं नरक में भी उत्तम पुस्तकों का स्वागत करूँगा, क्योंकि इनमें वह शक्ति है कि जहाँ ये होंगी, वहाँ आप ही स्वर्ग बन जायेगा।

-बाल गंगाधर तिलक

जो हमें मोक्ष की ओर बढ़ाता है वह शास्त्र है, और जो संयम की शिक्षा दे वह धर्म है।

-मो. क. गाँधी

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा, शास्त्रं तस्य करोति किम्।
लोचनाभ्यां विहीनस्य, दर्पणः किं करिष्यति।।

-चाणक्य

जिसके स्वयं कुछ बुद्धि नहीं है, उसको शास्त्र क्या लाभ पहुँचा सकता है ? अंधें मनुष्य को दर्पण क्या दिखलायेगा ?

4. श्वेताम्बर साहित्य में दिगम्बर जैन मुनि

श्वेताम्बर साहित्य कल्पसूत्र इस बात को प्रगट करते हैं कि दिगम्बर (नग्न) धर्म का पालन प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव नें किया था, तथा वे स्वयं दिगम्बर थे।[25] तथा आचारांग सूत्र में कहा है–

"Those are called naked, who in this world, never returning (to a wordly state), (follow) my religion according to the commandment. This highest doctrine has here been declared for men"[26]

अर्थात् दिगम्बर भेष इतर भेषों में श्रेष्ठ भेष है। प्रवचन सारोद्धार में कहा है कि–

''आउरण बज्जियाणं विसुद्ध जिण कप्पियाणन्तु।''[27]

वस्त्राभूषण से युक्त साधुओं से जिनकल्प अर्थात् वस्त्राभूषणों से रहित साधु विशुद्ध हैं और भी देखिये

''सजहानामए अज्जोमए समणाण निग्गंथाणं नग्ग भावे मुण्ड भावे अण्हाणए अदन्तवणे अच्छत्तए अणुवाहणए भूमिसेज्जा फलगसेज्जा कट्ठ सेज्जा केसलोए बंभचेरवासे लद्धावलद्ध वित्तीओ जाव पण्णत्ताओ एवामेव.... वित्तीओ जाव पन्नवेहिंत्ति।''[28]

भगवान महावीर कहते है कि श्रमण निर्ग्रंथों को नग्नभाव, मुण्ड भाव, अस्नान, छत्र नहीं करना, पगरखी नहीं पहनना, भूमि शैय्या, केशलौंच, ब्रह्मचर्य पालन, अन्य के घर में भिक्षार्थ जाना तथा आहार की वृत्ति जैसी मैंने कही है वैसी ही महापद्म (भविष्य काल में होने वाले प्रथम तीर्थंकर) अरहंत भी कहेंगे। इसी अर्थ को निम्न वाक्य भी पुष्ट करते हैं–

नगिणापिंडोलगाहमा। मुण्डाकण्डू विणट्ठण।।[29]
अहाइ भगवं एवं–से दंते दविए वोसढकाएत्रिवच्चे–
माहणोत्ति वा, समणेत्ति वा, भिक्खूत्ति वा, णिग्गंथेत्ति वा
पडिभाह देते।[30]

तथा श्वेताम्बराचार्य श्री आत्माराम जी ने भी अपने 'तत्व निर्णय प्रसाद' नामक ग्रंथ में निर्ग्रंथ शब्द की व्याख्या निम्न प्रकार से दी है, यथा–

[25]) 'कल्पसूत्र'-J.S. P.t. 1. P.285A [26]) J.S I.P56 [27]) संवत् 1134 में मुद्रित प्रवचन सारोद्धार, भा. 3, पृ. 13 [28]) ठाणा, पृ. 813 [29]) सूत्रकृतांग[72] [30]) सूत्रकृतांग[258]

कथा कौपीनोत्तरा संगादीनाम् त्यागिनों यथा जातरूप धरा निर्ग्रंथा निष्परिग्रहाः'।[31]

श्वेताम्बर ग्रंथ चतुर्विंशति प्रबंध में दिगम्बर मुनियों की प्रशंसा भी की गई है। यथा– उज्जयिनी में विशालकीर्ति नामक दिगम्बराचार्य (शिष्य मदनकीर्ति) नामक एक दिगम्बर साधु थे। उन्होंने वादियों को पराजित करके महा प्रामाणिकता पाई थी, और कर्नाटक देश में जाकर विजयपुर नरेश श्री कुंति भोज के दरबार में भी आदर पाया था तथा अनेक विद्वानों को पराजित किया था।[32]

गुजरात में चालुक्य, राष्ट्रकूट आदि राजाओं के समय में दिगम्बर जैन धर्म उन्नतशील था। सोलंकियों की राजधानी अणहिलपुर पट्टन में अनेक दिगम्बर मुनि थे। श्री चन्द्र नामक दिगम्बर जैन मुनि ने वहीं (अपने अनेकों) ग्रंथों की रचना की थी।[33]



दुनियाँ में वे लोग अभागे नहीं हैं जिनके पास धन, धरती, दौलत नहीं है, जगत में वे लोग अभागे नहीं है, जिनके पास पुत्र, परिवार, पैसा नहीं है जगत् में वे लोग अभागे नहीं है जिनके पास पद, पैसा प्रतिष्ठा, पुत्र, कुल, मित्र नहीं हैं । अरे ! दुनियाँ में तो वे लोग बड़े अभागे हैं जिनके ऊपर प्रभु की छत्रछाया व गुरु की कृपा नहीं है।

इंसान क्यों दुःखी हैं ? 14

[31] –1, H.Q.III 245 [32]) भाग्रारा, भा. 1,पृ. 157 व सागार भूमिका, पृ. 9

[33]) वीर वर्ष 1 पृ. 637

5. महात्मा बुद्ध पूर्व में दिगम्बर मुनि थे

भगवान महावीर स्वामी के समकालीन मगध के कपिलवस्तु नरेश शुद्धोधन का पुत्र गौतमबुद्ध नामक राजकुमार हुआ। जिसने वैदिक पशु यज्ञ के विरुद्ध अहिंसा के प्रचार की भावना से संसार से विरक्त होकर राजपाठ एवं लघु पुत्र तथा पत्नी का त्याग कर पलाश नगर में भगवान पार्श्वनाथ की शिष्य परंपरा के पिहितास्रव नामक दिगम्बर जैन मुनि से दिगम्बर जैन मुनि दीक्षा ली थी तब आपका नाम ''बुद्ध कीर्ति'' रखा गया था किन्तु बाद में भूख को सहन न करने के कारण आप जैन मुनि दीक्षा से विचलित हो गये-अतः आपने गेरुआ वस्त्र पहिनकर मध्यम मार्ग अपनाया, तब आपका नाम ''महात्मा बुद्ध'' प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ इस विषय में आचार्य श्री देवसेन ने लिखा है कि-

सिरिपासणाहतित्थे सरयूतीरे पलासणयरत्थो।
पिहियासवस्स सिस्सो महासुदो बुड्ढकित्तमुणी।।
तिमिपूरणासणेहिं अहिगयपबज्जाओ परिब्भहो।
रत्तंबरं धरित्ता पवहियं तेण एयंतं।।[34]

अर्थ :-श्री पार्श्वनाथ भगवान के तीर्थकाल में (भगवान महावीर के धर्म प्रचार होने से पहले) सरयू नदी के किनारे पलाश नगर में विराजमान श्री पिहितास्रव मुनि का शिष्य बुद्धकीर्ति मुनि हुआ। वह मरी हुई मछली के मांस को निर्दोष समझकर खा जाने से साधुचर्या से भ्रष्ट हो गया। तब उसने (अपना नग्न वेश छोड़कर) लाल कपडे पहन लिये और क्षणिक एकान्त मत (बौद्धमत) की स्थापना की।

इस बात को बौद्ध ग्रंथ में वे स्वयं लिखते हैं कि -मैं पहिले

अचेलको होमि.... हत्थापलेखना.... नामिहंत न उद्दिस्सकतं न निमंतणं सादियामि, सो न कुम्भीमुखा परिगण्हामि, न कलोपि मुखा परिगण्हामि, न एलकमंतरं न दण्डमंतरं न मुसलमंतरं, न द्विन्नं भंज मानानं न गब्भनिया, न पायमानया न पुरिसंतरगताम्, न संकित्तिस न यथ सा उपट्ठितो होति, न यथ भक्खिका संड संड चारिनी, न मच्छं न मासं न सुरं न भरेयं न थुसोदकं पिवामि सो एकागारिको वाहोमि, एकालोपिका, द्वागारिको होमि द्वालोपिको सत्तागारिकोवा होमि सत्तालोपिको, एकाहं व आहारं आहारेमि द्वीहिकं व आहारं आहारेमिसत्ताहिकम्पि आहारं आहारेमि। इति एयरूपं अद्धमासिकंपि परियाय मत्तभोजनानुयोगं अनुयुतो विहरामि... केस्स मस्सुलोचको विहोमि केसयस्सु लोचनानुयोगं अनेयुत्तो यावउद विन्दुम्हि पिमे दया पच्च पट्ठिताहोति। माहं सुद्दके पाणे विसमगते संघातं आयादेस्संति।[35]

अर्थ :-मैं वस्त्र रहित रहा, मैंने आहार अपने हाथों में किया। न लाया हुआ भोजन

[34]) दर्शन सार गा. 6-7

[35]) मज्झिम निकाय महासीद नाद का 12वाँ सूत्र

लिया, न अपने उद्देश्य से बना हुआ लिया, न निमंत्रण से जाकर भोजन किया, न बर्तन से खाया, न थाली में खाया, न घर की डयोढी में (within athre shold) खाया, न खिड़की से लिया, न बच्चे को दूध पिलाने वाली से लिया, न भोग करने वाली से लिया, न मलीन स्थान से लिया, न वहाँ से लिया जहाँ कुत्ता पास खड़ा था, न वहाँ से लिया जहाँ मक्खियां भिनभिना रहीं थी, न मछली, न मांस, न मदिरा, नअंडा खाया, न तुस-का मैला पानी पिया। मैंने एक घर से भोजन लिया, सो भी एक ग्रास लिया, या मैंने दो घर से भोजन लिया सोभी दो ग्रास लिये। इस तरह मैंने सात घरों से लिया, सो भी सात ग्रास एक घर से एक ग्रास लिया। मैंने कभी दिन में एक दफे भोजन किया, कभी पन्द्रह दिन भोजन ही नहीं किया। मैंने मस्तक दाढी व मूछों के केशलोंच किये। उस केशलोंच की क्रिया को चालू रक्खा। मैं एक बूंद पानी पर भी दयालु रहता था। क्षुद्र जीव की हिंसा भी मेरे द्वारा न हो, ऐसा मैं सावधान था।

सो तत्तो सो सीनो, एको मिसनके वने।

नग्गो न च आगी असीनो, एकनापसुतो मुनीति।।

अर्थ :-इस तरह कभी गर्मी ,कभी ठंडक को सहता हुआ भयानक वन में नग्न (नंगा) रहता था। मैं आग से तापता नहीं था। मुनि अवस्था में ध्यान में लीन रहता था। इस प्रकार महात्मा बुद्ध के कथन से श्री देवसेनाचार्य के कथन की पुष्टि होती है कि महात्मा बुद्ध पहले दिगम्बर जैन मुनि थे क्योंकि नग्न रहना, अनुदिष्ट भोजन करना, दिन में एकबार भोजन करना, हाथ में भोजन करना तथा केशलोंच करना आदि दिगम्बर जैन मुनि की चर्या है इसे वे करते थे किन्तु बाद में जब यह चर्या उन्हें कठिन लगी तो फिर उन्होंने मध्यम मार्ग अपनाया क्योंकि वे न तो उत्कृष्ट दर्जे के तपस्वी रहना चाहते थे और न ही निम्न दर्जे के तपस्वी रहना चाहते थे। अतः उन्होंने पिच्छि, कमण्डल छोड़कर गेरुआ वस्त्र धारण कर भोजन के लिये एक कटोरा ग्रहण कर मध्यम मार्ग की स्थापना कर तपस्या करने लगे।

उसी समय जब कुण्डलपुर नरेश सिद्धार्थ के पुत्र राजकुमार महावीर ,दिगम्बर जैन मुनि दीक्षा ले तपस्या कर केवलज्ञान प्राप्त कर सर्वज्ञ हो गये, तब इस विषय को महात्मा बुद्ध ने जो कहा उसे इस प्रकार लिखा है।

एकेमिदाहं महानाम समयं राजगहे बिहरामि गिज्झकूटे पत्वते। तेन खोपन समयेन संबहुला निगण्ठा इसिगिलियस्से कालसिलायं उब्भत्थका होंति आसन परिक्खित्ता ओपक्कमिका दुक्खातिप्पा, कटुका वेदना वेदयंति। अथखोहं महानाम सामव्ह समयं पटिसल्लाण बुड़डितो येन इसिगिलि पस्सय काण सिला येन ते निग्गंठा तेन उप संकमिमम उपसंकमिता ते निग्गंठे एतदवोचम:। किन्हु तुम्हे आवुसो निग्गंठा उब्भहका आसनपहिक्खित्ता ओक्कमिका दुक्खा तिप्पा कटुका वेदना वेदिययाति एवं बुत्ते महानाम ते निग्गंठा मं एतदवोचुं, निगांठो आवु सो

नाठपुत्तो सव्वण सव्वदस्सावी अपरिसेसं ज्ञान दस्सनं परिजानाति चरतो च तिट्ठतो च सुत्तस्स च सततं समितं ज्ञानदम्सनं पक्खुपट्ठितंति, सो एवं आह अत्थि खो वो निग्गंठा पुव्वे पापं कम्मं कतं, तं हमाय कटुकाय दुक्करिकारिकाय निज्जेरथ यं पतेत्य एतरिह कायेन संवुता, वाचाय संवुता, मनसा संवुता तं आयतिं पापस्स कम्मस्स अकरणं, इति पुराणानं कम्मानं तपसा कंतिभाभा, नवानं कम्मानं अकारण आयति अनवस्सवो आयति अनवस्वसा कम्मख्खयो, कम्मक्खया दुक्खक्खयो, दुक्खक्खया वेदना क्खयो वेदनाक्खया सव्वं दुक्खं निज्जिण्णं भविस्सति । त च पन अम्हाकं रुच्चति देव खमति च तेन च अम्हा अत्ति मनाति ।[36]

अर्थ :–(महात्मा बुद्ध कहते है कि) हे महानाम ! मैं एक समय राजगृह के गृद्धकूट पर्वत पर घूम रहा था । तब ऋषिगिरि के समीप कालशिला पर बहुत से निर्ग्रंथ (जैन साधु) आसन छोड़कर उपक्रम कर रहे थे और तीव्र तपस्या में लगे हुए थे । मैं सायं काल उनके पास गया और उनसे बोला भी निर्ग्रन्थों ! तुम आसन छोड़कर उपक्रम कर ऐसी कठिन तपस्या की वेदना का अनुभव क्यों कर रहे हो? जब मैंने उनसे ऐसा कहा तब वे साधु इस तरह बोले कि निर्ग्रंथ ज्ञातृ पुत्र भगवान महावीर सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हैं वे सब कुछ जानते हैं और देखते हैं ।

चलते, ठहरते, सोते, जागते सब हालतों में सदा उनका ज्ञानदर्शन उपस्थित रहता है । उन्होंने कहा है कि निर्ग्रंथों ! तुमने पहले पाप कर्म किये हैं उनकी इस कठिन तपस्या से निर्जरा कर डालों । मन–वचन–काय को रोकने से पाप नहीं बन्धता और तप करने से पुराने पाप सब दूर हो जाते हैं । इस तरह नये पापों के न होने से कर्मों का क्षय होता है, कर्मों के क्षय से दुःखों का क्षय होता है, दुःखों के नाश से वेदना नष्ट होती है और वेदना के नाश से सब दुख दूर हो जाते हैं । (तब बुद्ध कहते हैं) यह बात मुझे अच्छी लगती है मेरे मन को ठीक मालूम होती है ।

बौद्धशास्त्र मज्झिमनिकाय के ये वाक्य इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि महात्मा बुद्ध, भगवान महावीर के उपदेश को ठीक समझते थे ।

भगवान महावीर की सर्वज्ञता का भी उन्हें ज्ञान था ।

भगवान महावीर के विषय में दीर्घनिकाय में लिखा है :–

णिगण्ठो नातपुत्तो संघी चेव गणी चेव गणाचार्यो च ज्ञातो यसस्सी तित्थकरो साधु सम्मतो बहुजनस्स रत्तस्सू चिर पव्वजितो अद्धगतो वयो अनुप्पत्ता ।[37]

यानि निर्ग्रंथ ज्ञातृपुत्र (भगवान महावीर) संघ के नेता हैं, गणाचार्य हैं, दर्शन विशेष के प्रणेता हैं, विशेष विख्यात हैं, तीर्थंकर हैं, बहुत मनुष्यों द्वारा पूज्य हैं, अनुभवशील हैं , बहुत समय से साधु चर्या करते हैं, और अधिक वय वाले हैं ।

Nattputta is all knowing and all seeing Posessing an infinite knolwedge.

[36]) मज्झिम निकाय पृ. 192–193

[37]) दीर्घ निकाय भा. । पृ. 48

यानि मज्झिमनिकाय में महात्मा बुद्ध कहते हैं कि नाथ ! पुत्र (भगवान महावीर) सब कुछ जानते हैं, समस्त पदार्थों को देखते हैं, उनका ज्ञान असीम हैं। 38

इस प्रकार महात्मा बुद्ध स्वयं भगवान महावीर को सर्वज्ञ सर्वदर्शी मानते थे।

श्री मेजर जनरल जे. सी. आर. फार्लांग (Farlong. F.A.B.E.F.R.A.S.M.A.I.)

It is clear that Gotam of early Tibetans, Mangols and Chineses must have been a Jain, for the latter says he lived in the 10th and 11th Centuries B.C. Tibetans say he was born in 916, became a Budha in 881. preached from his 35th year and died in 831 B.C. which closely corresponds with the saintly Parsva.[39]

यानि –यह बात स्पष्ट है कि प्राचीन तिब्बती जनता का तथा मंगोल चीनी लोगों का गौतम कोई 'जैन' होना चाहिए क्योंकि चीनी कहते हैं कि वह ईसवी पूर्व 10वीं तथा 11वीं शताब्दी में था। तिब्बत वाले कहते हैं कि वह ईसवी सन् से 616 वर्ष पूर्व जन्मा था, 881 (ई. पूर्व) में बुद्ध (पूर्ण ज्ञानी) हुआ।

35वें वर्ष में उसने धर्म–उपदेश दिया तथा ई. पूर्व 531में उसका निर्वाण हुआ। उनका यह कथन पार्श्वनाथ साधु से लगभग मिल जाता है।

डॉ. ए. गिरनाट पेरिस लिखते हैं कि जैन धर्म और बौद्ध की प्राचीनता के संबंध में मुकाबला करने पर जैन धर्म, बौद्ध धर्म से वास्तव में बहुत प्राचीन है। मानव समाज की उन्नति के लिये जैन धर्म में सदाचार का बड़ा मूल्य है। जैन धर्म के एक मौलिक, स्वतंत्र और नियमित सिद्धांत है।

डॉ. बलदेव उपाध्याय, हिन्दू विश्वविद्यालय काशी लिखते हैं–

ऐतिहासिक गवेष्णा के अनुसार बुद्ध धर्म का उदय जैन धर्म के अनन्तर हुआ। बौद्ध निकायों में अंतिम जैन तीर्थंकर नाथपुत्र (भगवान महावीर) के नाम, सिद्धान्त तथा निर्वाण के उल्लेख अनेक स्थलों पर पाये जाते हैं।[40]

पूर्ववर्ती 23 बुद्ध

बुद्ध ग्रंथों में बुद्ध के पूर्ववर्ती 23 बुद्धों का भी वर्णन मिलता है किन्तु उनमें किसी एक का भी वर्णन नहीं मिलता है। इससे प्रतीत होता है कि गौतम बुद्ध से पहले जो भगवान ऋषभनाथ, अजितनाथ आदि 23 तीर्थंकर हुए हैं उन्हें ही उन्होंने बुद्ध शब्द से कहा है अमर कोश में भी बुद्ध सर्वज्ञ आदि को पर्यायवाची नाम के रूप में गिनाया है यथा

सर्वज्ञः सुगतो बुद्धो, धर्मराजस्तथागतः।

समन्त भद्रो भगवान्मारजिल्लोकजिज्जिनः ।।23।।

यानि सर्वज्ञ, सुगत, बुद्ध, धर्मराज, तथागत, समन्तभद्र, भगवान, मारजित्,

38) Majhima Nikaya I. P. 92-93

39) साइन्स ऑफ कम्वेरेटिव रिलीजन्स, पहली जिल्द पृ. 19. सन 1897

40) भारतीय दर्शन पृ. 188

लोकजित्, ये सब पर्यायवाची (एक व्यक्ति के) वाचक शब्द हैं।

तदनुसार गौतम बुद्ध से पहले जो 23 बुद्ध होने की वार्ता बौद्ध ग्रन्थों में है उसका अभिप्राय भगवान ऋषभनाथ से लेकर गौतम बुद्ध के दीक्षागुरु (शिष्य परम्परा की अपेक्षा) भगवान पार्श्वनाथ तक 23 बुद्धों या जिनेन्द्रों से हैं।

यह निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध के पहले जैनों के तेईस तीर्थंकर हो चुके हैं।[41]

बौद्ध विद्वान धर्मकीर्ति ने जैन तीर्थंकरों की सर्वज्ञता स्वीकार करते हुए लिखा है–

यः सर्वज्ञ आप्तो वा सज्योतिर्ज्ञानादि कमु पदिष्टवान् यथा ऋषभ वर्धमानदिरिति।[42]

यानि जो सर्वज्ञ या आप्त हुआ है उसी ने ज्ञान आदि का उपदेश दिया है। जैसे ऋषभ वर्धमान (महावीर) आदि।

इससे अनुमान है कि ऋषभनाथ आदि 23 तीर्थंकरों को ही 23 बुद्ध माना गया है।

महात्मा बुद्ध की भविष्य वाणी

न च महामतेऽकृत मकारितमसंकल्पितं नाम मांसं कल्प्यमस्ति यदुपायानुजानियं श्रावकेभ्यः। भविष्यति तु पुनर्महामतेऽनागतेऽध्वनि ममैव शासने प्रव्रजित्वा शाक्य पुत्रीयत्वं प्रतिजानानाः कषाय–ध्वजधारिणो मोहपुरुषा मिथ्यावितर्कोपहतचेतसो विविधविनयकल्ववादिनः सत्काय दृष्टियुक्ताः रसतृष्णाध्ववसितासां तां मांसभक्षणहेत्वाभार्सा ग्रन्थयिष्यन्ति । मम चामूताख्यानं दातव्यं मनस्यन्ते तत्तद्र्थोत्पत्तिनिदानं कल्पयित्वा वध्यन्ति। इयं अर्थोत्पत्तिरस्मिन्निदाने भगवता मांसभोजनमनुज्ञातं कल्प्यमिति। प्रणीतभोजनेषु चोक्तं स्वयं च किलतथागतेन परिमुक्तमिति। न च महामते चुत्रचित्सूत्रे प्रतिसेवितत्यमित्यनुज्ञातं प्रणीत भोजनेषु वा देशितं कल्प्यमिति।

हे महामते! कोई मांस अकृत, अकारित व असंकल्पित लेने योग्य नहीं है, जिसे लेकर मैं श्रावकों को आज्ञा करुं। हे महामते! भविष्य में मेरे ही शासन में ऐसे व्यक्ति होंगे जो साधु दीक्षा लेकर शाक्य-पुत्र की आज्ञा मानने वाले होकर गेरुआ रंग की ध्वजा धारने वाले होकर, मोही पुरुष मिथ्या तर्क चित्त में उठाकर आचार के विविध भेद कहेंगे। शरीर में ही जिनकी दृष्टि होगी, रस की तृष्णा में रोगी होंगे, वे मांस भक्षण के लिये खोटे हेतुओं को बनालें गे। जो बात मैंने नहीं कही है उसे वे मानेंगें व जिससे मांसाहार पुष्ट हो, ऐसी बात

[41]) इम्पीरियल गजेटियर आफ इंडिया. पृ. 54

[42]) न्याय बिन्दु. अ.3

कहेंगे-'इसी कारण भगवान ने मांस की आज्ञा दी है ऐसी कल्पना करेंगे। भक्ष्य भोजनों में मांस कहा हैं व स्वयं भगवान ने मांस खाया हैं। परंतु हे महामते ! मैंने किसी भी सूत्र में मांस को सेवन योग्य नहीं कहा है न आज्ञा दी है, न उत्तम भोजन में कहा है, न लेने योग्य कहा है।'

नोट-आज बुद्ध-भक्त व बुद्धेतर जनता बुद्ध के नाम पर मांस खाने का असंख्य प्रचार कर रही है। अतः बुद्ध की भविष्य वाणी सत्य हो रही है।

"न हि महामते आर्यश्रावकाः प्राकृत मनुष्याहारमाहरन्ति कुत एव मांसरुधिराहारमकल्प्यं। धर्माहारा हिमहामते मम श्रावकाः प्रत्येकबुद्ध बोधिसत्वाश्च नामिषाहाराः प्रागेव तथागताः धर्मकाया हि महामते तथागता धर्माहारस्थितयो नामिषकाया न सर्वामिक्षाहारस्थितयो वान्तसर्वभपोपकरणतृष्णै षणवासनासर्वक्लेश दोषवासनापगताः सुविमुक्तचित्त प्रज्ञाः सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनः सर्वसत्वैकपुत्रकसमदर्शिनो महाकारुणिकाः। सोऽहं महामते सर्वसत्वैकपुत्रकसंज्ञी सम् कथमिव स्वपुत्रमांसमनुज्ञास्यामि परिभोक्तुं श्रावकेभ्यः कुत एव स्वयं परिमोक्तुम्। महामते नेदं स्थानं विद्यते।"

हे महामते ! आर्य श्रावकगण (धर्मात्माव्यक्ति) स्वभाविक मनुष्य का आहार भी नहीं लेते हैं तब फिर वे असेवने योग्य मांस रुधिर का आहार कैसे लेंगे ? हे महामते ! मेरे श्रावक, धर्म पर चलने वाले हैं। ऐसे ही प्रत्येक बुद्ध व बोधि सत्व है, मांसाहारी नहीं है पहले भी तथागत ऐसे ही थे। हे महामते ! तथागत धर्मरूप शरीर धारते हैं उनकी स्थिति धार्मिक आहार से है, उनका शरीर मांसाहारी नहीं है। सर्व प्रकार के मांस को वे नहीं लेते हैं, उन्होंने सर्व संसार की वस्तुओं की तृष्णा की वासना का त्याग कर दिया है, वे सर्व क्लेशकारी दोष की वासना से दूर हैं। वैराग्यवान व प्रज्ञावान है, सर्वज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं, सर्व प्राणियों को एक पुत्रवत् देखने वाले हैं हा दयावान हैं। हे महामते ! सो ही मैं सर्व प्राणीमात्र पर पुत्र की बुद्धि रखने वाला कैसे अपने ही पुत्र के मांस की आज्ञा दूंगा, श्रावकों को खाने के लिये व कैसे स्वयं मांस खाया है ? महामते ! इसका कोई स्थान नहीं है।

बुद्ध के वचन और लंकावतार देखने से मालूम पड़ता है कि स्वयं महात्मा बुद्ध ने मांस नहीं खाया और अपने भक्त और साधुओं को भी सर्वथा त्याज्य और हेय बतलाया।

मद्यं मांसं पलांडु च न भक्षयेयं महामते।
बोधिसत्वैर्महासत्वैर्मांषादि वज्जिपुंगवैः ।।1।।
मांसानि च पलांडूंश्च मद्यानि विविधानि च।
गृंजानं लशुनं चैव योगी नित्यं विवर्जयेत् ।।5।।
लाभार्थं हन्यते सत्वो मांसार्थ दीयते धनं।
उभौ तौ पाप कर्माणौ पच्येते रौरवादिषु ।।6।।

हस्तिकक्ष्ये महामेघे निर्वाणांगुलिमालिके।
लंकावतार सूत्रे च मया मांसंविवर्जितम् ।।16।।
यथैव रागो मोक्षस्य अन्तरायकरो भवेत्।
तथैव मांस मद्याद्य अन्तराय करो भवेत् ।।10।।
तस्मान्न भक्षयेन्मांसमुद्वेजनकरं नृणाम्।
मोक्षधर्म विरुद्धत्वादार्यांषामेष वै ध्वजः ।।24।।

भावार्थ :–हे महामते ! बौद्ध मती, महाबौद्ध मती किसी को भी मांस, मदिरा, प्याज नहीं खाना चाहिए ऐसा जिनेन्द्रों ने कहा है।। 1 ।।

मांस, प्याज, नाना प्रकार की मदिरा, गाजर, लशुन का योगी को सदा निषेध हैं ।। 5 ।।

जो प्राणी लोभ के लिये प्राणी को मारते हैं व मांस के लिये धन देते हैं। दोनों ही पापी रौरवादि नरकों में जायेंगे ।। 6 ।।

हस्यिक रथ में, महामेघ में, निर्वाणांगुलि मालिका में व लंकावतार सूत्र में मैंने मांस का निषेध किया है ।। 16 ।।

जैसे मोक्ष के लिये राग विघ्नकारी है वैसे मांस, मद्यादि विघ्नकारी हैं ।। 10 ।।

इसलिए मांस को नहीं खाना चाहिए । यह प्राणियों को भयोत्पादक है। यह मोक्ष धर्म के विरुद्ध है। मांस न खाना यही आर्यों की ध्वजा है ।। 28 ।।

सुत्तनिपात धम्मिक सुत्त

पाणां न हाने च घातयेय्य न चानुजंञ्य हनतं परेसं सत्वेसु भूतेसु निधाय दंडं ये थावरा ये चेतसंति लोके।

भावार्थ :–सर्व प्राणियों पर दया रख–के लोक में स्थावर जीव हो या त्रस जीव हो उनमें से किसी के प्राण न लेना चाहिये, न उनका घात कराना चाहिये, न घात होने की अनुमोदना करना चाहिये।

नोट :–उपरोक्त कथन पढ़ने से सिद्ध होता है कि महात्मा बुद्ध ने मांस नहीं खाया और अपने शिष्यों को भी मांस खाने का उपदेश भी नहीं दिया तथा मांस खाने में महान् पाप बतलाया। परन्तु धर्मान्नद कौसाम्बी ने भगवान बुद्ध नामक किताब में बुद्ध पर मांस खाने का आरोप किया है। कौसाम्बी ने एक तरफ बुद्ध को महात्मा भगवान बतलाया है और दूसरी तरफ मांसाहारी बतलाया है। मांसाहारी कभी भी महात्मा नहीं हो सकता । यदि मांसाहारी को महात्मा कहा जावे तो सिंह को भी महात्मा कहने में क्या दोष हैं ?

6. बौद्ध साहित्य में दिगम्बर जैन मुनि

बौद्ध साहित्य में दिगम्बर मुनियों का वर्णन अनेकों स्थानों में मिलता है यथा

''पाटिक पुत्र अचेलो'' अर्थात् पाटिक पुत्र नामक साधु वस्त्र रहित अचेलक अर्थात् दिगम्बर जैन मुनि थे।

चीनी त्रिपिटक नामक ग्रंथ में भी 'अचेलक' शब्द से दिगम्बर जैन मुनि/साधु ही उद्घोषित किया है।

बौद्ध टीकाकार बुद्ध घोष भी-अचेलक शब्द का अर्थ भाव नग्न ही करते है।

जैसा कि दिगम्बर जैन शास्त्रों में अचेलक्य की परिभाषा दो प्रकार से दी है-1) द्रव्य (बाहर) से अचेलक्य 2) भाव (अंतर) से अचेलक्य। यथा-द्रव्य अचेलक्य की परिभाषा ''मूलाचार ग्रंथ में इस प्रकार से ही है-

''वत्थाजिण वक्केण य अहवा पत्ताइणा असंवरणं।

णिब्भूसण णिग्गंथं अच्चेलक्कं जगदि पूज्जं।।[43]

अर्थात् वस्त्र, वक्कल अथवा पत्र आदि के आवरण से रहित तथा सभी प्रकार के आभूषणों से रहित निर्ग्रंथ ही जगत पूज्य अचेलक कहे जाते हैं।

बौद्ध साहित्य में दिगम्बर जैन मुनियों को निर्ग्रंथ और अचेलक ही कहा है और निर्ग्रंथ तथा 'अचेलक' शब्द को एक ही भाव (Sense) में प्रयुक्त किया है यथा दीर्घ निकाय में लिखा है कि-

Pasendi, King of Kosal saluted Nigantnas.[44]

अर्थात-कौशल देश का राजा पसनदी (प्रसेन जित) निर्ग्रंथों (दिगम्बर जैन मुनियों) को नमस्कार करता था।

महावग्ग में भी कहा है कि एक बड़ी संख्या में निर्ग्रंथ गण (दिगम्बर जैन मुनि) वैशाली में सड़क-सड़क और चौराहे-चौराहे पर शोर मचाते दौड़ रहे थे अर्थात् स्तोत्र पाठादि करते हुए तेजी से जा रहे थे।

इस उल्लेख से दिगम्बर मुनियों का उस समय निर्बाध रूप से राजमार्गों से विचरण करने का समर्थन होता है। वे अष्टमी और चतुर्दशी को इकट्ठे होकर उपदेश दिया करते थे।

'दाठावंसो' में 'अहिरिका' शब्द के साथ-साथ निगण्ठ शब्द का प्रयोग जैन साधु के लिए हुआ मिलता है।

'इसमें अहिरिका सव्वे सद्धादिगुण वज्जिता। यद्धा सठाच दुप्पज्ञा सग्गमोक्ख वि बन्धका।। 88।। इति सो चिन्तयित्वान गृहसीवो नराधिपो। पव्वाजेसि सकारट्ठा निगण्ठे ते अपेसके।।[45]

बौद्ध शास्त्रों में ऐसे भी उल्लेख मिलते हैं जो भगवान महावीर के पहले दिगम्बर मुनियों का होना सिद्ध करते है। बौद्ध साहित्य में अंतिम तीर्थंकर निर्ग्रंथ महावीर के अतिरिक्त श्री सुपार्श्व, अनन्तजिन और पुष्पदंत के भी नामोल्लेख मिलते हैं।

[43]) मूला. पृ. 30 [44]) I.H.Q. Vol. I.P. 153 [45]) दाठा. पृ. 14

''महावग्ग'' (1/22-23 SEB. P. 144) में लिखा है कि बुद्ध राजगृह में जब पहले-पहले धर्म प्रचार को आए तो लाठी वन में ''सुप्पतिष्य'' सुपार्श्वनाथ (तीर्थंकर) के मंदिर में ठहरे। इसके बाद इस मंदिर में ठहरने का उल्लेख नहीं मिलता है। इसका कारण यही है कि इस जैन मंदिर के प्रबन्धकों ने जब यह जान लिया कि महात्मा बुद्ध अब जैन मुनि नहीं रहे तो उन्होंने उनका आदर करना रोक दिया। (विशेष के लिए देखो भमबु)[46]

उपक आजीवक अनंतार्जन (अनंतनाथ तीर्थंकर) को अपना गुरु बताता है आजीविकों ने जैन धर्म से बहुत कुछ लिया था। अतः यह अनंतजिन तीर्थंकर ही होना चाहिए।[47]

आरिय-परियेषण-सुत

'महावस्तु' में पुष्पदंत (पुष्पदंत तीर्थंकर) को एक बुद्ध और 32 लक्षणयुक्त महापुरुष बताया गया है।[48]

यद्यपि उनके सम्बन्ध में यह स्पष्ट उल्लेख नहीं है, कि वे जैन तीर्थंकर और नग्न थे, किन्तु जब जैन साहित्य में उस नाम के दिगम्बर भेषधारी तीर्थंकर महामुनीश मिलते है, तब उन्हें जैन और नग्न मानना अनुचित नहीं है। वैसे बौद्ध साहित्य भगवान पार्श्वनाथ के तीर्थवर्ती मुनियों को नग्न प्रगट करता है।

भरी जवानी में ही महावीर स्वामी ने राजपाट का मोह त्याग कर दिगम्बर मुनि का भेष धारण किया था। और तीस वर्ष तक कठिन साधना करके वह सर्वज्ञ और सर्वदर्शी तीर्थंकर हो गये थे। 'मज्झिमनिकाय' नामक बौद्ध ग्रंथ में उन्हें सर्वज्ञ, सर्वदर्शी और अशेष ज्ञान तथा दर्शन का ज्ञाता लिखा है।

एक समय नेपाल के तांत्रिक बौद्धों में नग्न साधुओं का अस्तित्व हो गया था। नेपाल में गूढ़ और तांत्रिक नाम की एक बौद्ध धर्म की शाखा है। मि. हासन ने लिखा है कि इस शाखा में नग्न यति रहा करते हैं।

जेम्स एल्वी. प्रो. जैकोबी तथा डॉ. बुल्हर इस ही बात का समर्थन करते हैं कि दिगम्बरत्व महात्मा बुद्ध से पहले से ही प्रचलित था और आजीविक आदि तीर्थकों पर जैन धर्म का प्रभाव पड़ा यथा-

In James d'Alwis' Paper (Ind. Anti. VIII) on the six Tirthankar the "Digambaras" appear to have been regarded as an old order of aseeties & all of these heretical teachers betray the influence of Jainism in their doctrines".[49]

Prof. Jacobi remarks : "The preceding four Tirthankas (Makkhalli Coastal etc.) appear all to have adopted some or other doctrines or practices, which makes part of the Jaina system,

[46]) भमबु. पृ. 50-51 [47]) I.H.Q. III.247 [48]) A.S.M.P. 30 [49]) I.A.IX 161

probably from the Jains themselves.....It appears from the preceding remarks that Jaina ideas & practices must have been current at the time of Mahavira & Independently of him. This combined with other arguements, leads us to the existence long before Mahavira."[50]

Prof. T. W. Rhys Davids notes in the "Vinaya Texts that "the sect now called Jains are divided into the classes. Digambaras & Swetambaras the later of which in naked. They are known to be the successors of the school called Niganthas in the Pali Pitakas".[51]

Dr. Buhler writes, "From Buddhist accounts in their colonical works as well as in other books, it may be seen that this rival (Mahavira) was a dangerous & influential one & that even in Buddha's time his teaching had spread, considerably.....Also they say in their description of other rivals of Buddha that there in order to gain esteem copied the Nirhanthas & went unclothed or that they were looked upon by the people as Nirgrantha holy ones, because they happened to lost their clothes".[52]

सम्बन्ध बौद्ध ग्रंथों के आधार से इस विषय में डॉ. स्टीवेन्सन लिखते हैं-

जैसिभा, I A2 & 3A 24 the people bought clothes in an abundance for him, but he (Kassapa) refused them as he thought that if he put them on, he would not be treated with the some respect Kassapa said, "Clothes are for the covering of shame & shame is the effect of sin. I am an Arahat As I am Free evil desires, I know no Shame" etc.[53]

''(एक तीर्थक नग्न हो गया) लोग उसके लिए बहुत से वस्त्र लाये, किन्तु उनको उसने स्वीकार नहीं किया। उसने यही सोचा कि 'यदि मैं वस्त्र स्वीकार करता हूँ, तो संसार में मेरी अधिक प्रतिष्ठा नहीं होती। वह कहने लगा कि लज्जा रक्षक के लिए ही वस्त्र धारण किया जाता है और लज्जा ही पाप का कारण है, हम अर्हत् है, इसलिए विषय-वासना से अलिप्त होने के कारण हमें लज्जा की कुछ भी परवाह नहीं।' इसका यह कथन सुनकर बड़ी प्रसन्नता से वहाँ इसके पाँच सौ शिष्य बन गये, बल्कि जम्बूद्वीप में इसी को लोग सच्चा बुद्ध कहने लगे।''

यह उल्लेख संभवतः मक्खलि गोशाल अथवा पूर्ण काश्यप के सम्बन्ध में है। ये दोनों साधु भगवान पार्श्वनाथ की शिष्य परम्परा के मुनि थे।[54]

मक्खलि गोशाल भगवान् महावीर से रुष्ट होकर अलग धर्म प्रचार करने लगा था, और वह ''आजीविक'' सम्प्रदाय का नेता बन गया था। इस सम्प्रदाय का विकास प्राचीन जैन धर्म से हुआ था।[55] और इसके साधु भी नग्न रहते थे।[56]

[50]) I. A. IX. 162 [51]) SBE XIII 41 [52]) AISJ, P. 36 [53]) B.S. pp 74-75 [54]) भमबु., पृ. 17-21
[55]) वीर, वर्ष 3, पृ. 312 व भमबु. 17-21 [56]) आजीविको ति नग्न-समणको/ पप च-सूदनी 1/209, IHQ, III, 24

पूरण-कश्यप गोशाल का साथी था, और वह भी दिगम्बर रहा था, जिसका प्रभाव इन लोगों पर पड़ा था। उस पर भगवान महावीर के अवतीर्ण होते ही दिगम्बरत्व का महत्व और भी बढ़ गया। यहाँ तक कि दूसरे सम्प्रदायों के लोग भी नग्न वेष धारण करने को लालायित हो गये जैसा कि ऊपर प्रकट किया गया है।

बौद्ध शास्त्रों में निर्ग्रंथ (दिगम्बर) महामुनि महावीर के विहार का उल्लेख भी मिलता है। 'मज्झिम निकाय' के 'अभय राजकुमार सुंत' से प्रगट है कि वे राजगृह में एक समय रहे थे।[57]

'उपालीसुत' से भगवान महावीर का नालन्दा में विहार करना स्पष्ट है। उस समय उनके साथ बड़ी संख्या में निर्ग्रंथ साधु थे।[58]

"The M. N. tells us that once Nigantha Nathaputta was at Nalanda with a big retinue of the Niganthas"[59]

दीर्घनिकाय का ''पासादिक सूत्र'' भी इस बात का समर्थन करता है।[60]

''संयुक्त निकाय'' से भगवान महावीर का संघ रहित ''मच्छिका खण्ड'' में विहार करना स्पष्ट है।[61]

ब्रह्मजाल सूत्र में राजगृह के राजा अजात शत्रु को भगवान महावीर स्वामी के दर्शन के लिए ऐसा लिखा गया है।[62]

''विनय पिटक'' के महावग्ग ग्रंथ से भगवान महावीर का वैशाली में धर्म प्रचार प्रमाणित है।[63]

एक ''जातक'' में भगवान महावीर को ''अचेलक नातपुत्र'' कहा गया है।[64]

''महावस्तु'' से प्रकट है कि अवंति के राज पुरोहित का पुत्र नालक बनारस आया था। वहाँ उसने नातपुत्र (महावीर को) धर्म प्रचार करते पाया।[65]

दीर्घनिकाय से स्पष्ट है कि कौशल के राजा पसेनदी ने निर्ग्रंथ नातपुत्र (महावीर) को नमस्कार किया था।[66]

उसकी रानी मल्लिका ने निर्ग्रन्थों के उपयोग के लिए एक भवन बनवाया था।[67]

सारांशतः बौद्धशास्त्र श्री भगवान महावीर के दिगन्त व्यापी और सफल विहार की साक्षी देते है।

सम्राट हर्ष के समय में (7वीं श.) चीन देश से ह्यूनसांग नामक यात्री भारत आया था। उसने भारत और भारत के बाहर दिगम्बर जैन मुनियों का अस्तित्व बतलाया है।

"Hieun Tsang found them (Jains) spread through the whole of India and even beyond its boundaries.[68]

वह उन्हें निर्ग्रन्थ और नंगे साधु लिखता है, तथा उनकी केशलुञ्चन क्रिया का भी

[57]) मज्झिम(P.T.S.) भा. 1, पृ.392 व भमबु. पृ. 191 [58]) मज्झिम 1/371 [59]) AIT P.147 [60]) दीर्घ III 117-118 भमबु. पृ.214 [61]) संयुक्त 4/287 भमबु. पृ. 216 [62]) भमबु.पृ.222 [63]) महावग्ग 6/31-11-भमबु. पृ. 231-236 [64]) जातक 2/182 [65]) ASM...P. 159 [66]) दीर्घ 1/78-79-IHQ.I.153 [67]) L.W.B.P. 109 [68])AISJP. 45 विशेष के लिए ह्वेनसांग का भारत भ्रमण (इन्डियन प्रेस लि.)

उल्लेख करता है।"The Li-hi (Nirgranthas) themselves by leaving their bodies naled and pulling out their hair. Their skin is all cracked their bodies naled and pulling out their hair. Their skin is all cracked their feet are hard and chapped like cotting trees."[69]

वह पेशावर की ओर से भारत में घुसा था, और वहीं सिंहपुर में उसने नंगे जैन मुनियों को पाया था।[70]

''बौद्धों और जैनियों की भी संख्या बहुत अधिक थी। .....बहुत से प्रांतीय राजा भी इनके अनुयायी थे। इनके धार्मिक सिद्धांत और रीति-रिवाज भी तत्कालीन समाज में महत्वपूर्ण स्थान रखते थे साधुओं, तपस्वियों, भिक्षुओं और यतियों का एक बड़ा भारी समुदाय था, जो उस समय के समाज में विशेष महत्व रखता था। .....(हिन्दुओं में) बहुत से साधु अपने निश्चित स्थानों पर बैठे हुये ध्यान-समाधि करते थे, जिनके पास भक्त लोग उपदेश सुनने आया करते थे। बहुत से साधु शहरों व गाँवों में घूम-घूमकर लोगों को उपदेश व शिक्षा दिया करते थे। यही हाल बौद्ध भिक्षुओं और जैन साधुओं का भी था। .....साधारणतः लोगों के जीवन को नैतिक एवं धार्मिक बनाने में इन साधुओं, यतियों और भिक्षुओं का बड़ा भारी भाग था।''[71]

फलतः उस देश का राजकुमार आर्द्रक निर्ग्रन्थ साधु हो गया था।[72]

बौद्ध शास्त्र वैशाली के दिगम्बर मुनियों के सुणक्खत्त एक 'लिच्छवि' राजपुत्र था और वह बौद्ध धर्म को छोड़ कर निर्ग्रन्थ मत का अनुयायी हुआ था।[73]

वैशाली के सन्निकट एक कण्डरमसुक नामक दिगम्बर मुनि के आवास का भी उल्लेख बौद्ध शास्त्रों में मिलता है। उन्होंने यावत् जीवन नग्न रहने और नियमित परिधि में विहार करने की प्रतिज्ञा कर ली थी।

''अचेलो कन्उरमसुको वसोलियम् पटिवसति लाभग्ग-प्पतोच एव पसंग्ग, प्पत्तोच वज्जिगा में। तस्स सत्तवत्त-पदानि समत्तानि समादिन्नानि होन्ति- 'यावजीवम् अचेलको अस्स्म, नटत्थम् परिद्हेय्यम् यावजीवम् ब्रह्मचारी अस्स्म् न मेथनुम पटिसेवेय्यम्.....इत्यादि।[74]

श्रावस्ती के कुलपुत्र (Councillor's son) अर्जुन भी दिगम्बर मुनि होकर सर्वत्र विचरे थे।[75]

यह दिगम्बर मुनि और उसके साथ जैन साध्वियाँ भी सर्वत्र धर्मोपदेश देकर मुमुक्षुओं को जैन धर्म में दीक्षित करते थे।[76]

इस उद्देश्य को लेकर वे नगरों के चौराहों पर जाकर धर्मोपदेश देते और वादभेरी बजाते थे। बौद्ध शास्त्र कहते हैं कि, ''उस समय तीर्थंकर साधु प्रत्येक पक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी

[69]) St. Julien, Vienna, P. 224 [70]) हुआ. पृ. 143 [71]) हर्ष कालीन भारत त्याग भूमि वर्ष 2, खण्ड 1, पृ. 301

[72]) ADJB I. P. 92 [73]) भमवु. पृ.225 [74]) दीर्घ निकाय (P.T.S) भा. 3, पृ. 9-10 व भमवु पृ. 213

[75]) P.B.P. 83 व भमवु.पृ.237 [76]) भमवु. पृ. 256-268

और पूर्ण मासी को एकत्र होते थे और धर्मोपदेश करते थे। लोग उसे सुनकर प्रसन्न होते और उसके अनुयायी बन जाते थे।[77]

भगवान महावीर और महात्मा गौतम बुद्ध दोनों ने ही अहिंसा धर्म का उपदेश दिया था। किन्तु भगवान महावीर की अहिंसा में मन, वचन, काय पूर्वक जीव हत्या से विलग रहने का विधान था–भोजन या मौज, शौक के लिए भी उसमें जीवों का प्राण व्यपरोपण नहीं किया जा सकता था। इसके विपरीत महात्मा बुद्ध की अहिंसा में बौद्ध भिक्षुओं को मांस और मत्स्य भोजन ग्रहण करने की खुली आज्ञा थी। एक बार नहीं, अनेक बार स्वयं महात्मा बुद्ध ने मांस भक्षण किया था।[78]

ऐसे ही अवसरों पर दिगम्बर मुनि, बौद्ध भिक्षुओं को आड़े हाथों लेते थे। एक मरतबा जब भगवान महावीर ने बुद्ध के इस हिंसक कर्म का निषेध किया। तो बुद्ध ने कहा, 'भिक्षुओं, यह पहला मौका नहीं है, बल्कि नातपुत्र (महावीर) इससे पहले भी कई मरतबा खास मेरे लिये पके हुये मांस को मेरे भक्षण करने पर आक्षेप कर चुके हैं।[79]

एक दूसरी बार जब वैशाली में महात्मा बुद्ध ने सेनापति सिंह के घर पर मांसाहार किया तो बौद्ध शास्त्र कहता है, कि ''निर्ग्रन्थ एक बड़ी संख्या में वैशाली में सड़क–सड़क, चौराहे–चौराहे पर यह शोर मचाते कहते फिरे, कि आज सेनापति सिंह ने एक बैल का वध किया है और उसका आहार श्रमण गौतम बुद्ध के लिए बनाया है। श्रमण गौतम बुद्ध जानबूझकर कि यह बैल मेरे आहार के निमित्त मारा गया है, यह जान कर भी वह पशु का मांस खाता है, इसलिए वही उस पशु को मारने के लिए वधक है।''

At the time a great number of the Nigathas (Running) through Vaisali, from road to road, cross-way to cross-way, with outstretched arms cried. "Today Simha, the General has killed a great ox and has made a meal for the Sarmana Gotama. The Sarmana Gotama knowingly eats this meat of an Animal killed for this very purpose and has that become virtually the author of that diet."[80]

[77]) महावग्ग 2/1/1 व भमवु.पृ. 240 [78]) भमवु.पृ. 170 [79]) भमवु.पृ. 170 [79]) Cowell Jatakas II,182, भमवु. पृ. 246
[80]) Vinaya Texts. SBE, Vol. XVII, P. 116 & HG., P. 85

7. वेदों, उपनिषदों में दिगम्बर जैन मुनि

भारतवर्ष का ठीक-ठीक इतिहास ईस्वी पूर्व आठवीं शताब्दी तक माना जाता है। इसके पहले की कोई भी बात विश्वसनीय नहीं मानी जाती है। यद्यपि भारतीय विद्वान अपनी-अपनी धार्मिक वार्ता इस काल से भी बहुत प्राचीन मानते और उसे विश्वसनीय स्वीकार करते हैं। उनकी यह वार्ता 'इतिहासातीत काल' की वार्ता समझनी चाहिए। दिगम्बर मुनियों के विषय में भी यही बात है। भगवान ऋषभदेव द्वारा एक अज्ञात अतीत में दिगम्बर मुद्रा का प्रचार हुआ और तब से वह ईस्वी पूर्व आठवीं शताब्दी तक ही नहीं बल्कि आज तक निर्बाध प्रचलित है।

'अथर्व वेद' के पन्द्रहवें अध्याय में जिन व्रात्य और महाव्रात्य का उल्लेख है उनमें महाव्रात्य दिगम्बर साधु के अनुरूप है।

ऋग्वेद में भी दिगम्बर मुनियों का उल्लेख है।[81]

"मुनयो वातरशना:, पिशंगा वसते मला:।
वातस्यानु ध्राजिं, यन्ति यद्देवासो अविक्षत।।"

यजुर्वेद में भी कहा है कि-

"आतिथ्य रूपं मासरं महावीरस्य नग्नहु:।
रूपमुपसदा मेतत्तिस्त्रो रात्री: सुरासुता"।।[82]

यजुर्वेद (अ. 19 मंत्र 14) में, जो इस परिच्छेद के आरंभ में दिया हुआ है, अंतिम तीर्थंकर महावीर का स्मरण नग्न विशेषण के साथ किया गया है। 'महावीर' और 'नग्न' शब्द जो उक्त मन्त्र में प्रफुल्ल हुये है उनके अर्थ कोश ग्रंथों में अंतिम जैन तीर्थंकर और दिगम्बर ही मिलता है।[83]

इसलिए इस मंत्र का सम्बन्ध भगवान महावीर का मानना ठीक है वैसे बौद्ध साहित्यादि से स्पष्ट है कि महावीर स्वामी नग्न साधु थे। इस अवस्था में उक्त मंत्र में 'महावीर' शब्द 'नग्न' विशेषण सहित प्रफुल्ल हुआ, जो इस बात का द्योतक है कि उसके रचयिता को तीर्थंकर महावीर का उल्लेख करना इष्ट है। इस मंत्र में जो शेष विशेषण है वह भी जैन तीर्थंकर के सर्वथा योग्य है और इस मंत्र का फल भी जैन शास्त्रानुकूल है। अतः यह मंत्र भगवान महावीर को दिगम्बर मुनि प्रकट करता है।

उपनिषदों में भी दिगम्बर जैन मुनियों के विषय में अनेकों उल्लेख मिलते है जैसे- 'जाबालोपनिषद्' निर्ग्रंथ शब्द का उल्लेख करके दिगम्बर साधु का अस्तित्व उपनिषद् काल में सिद्ध करता है-

[81]) ऋग्वेद 10/11/36 [82]) यजुर्वेद अ 19 मंत्रा 14 [83]) वेजै. पृ. 55-60

''यथाजात रूप धरो निर्ग्रंथो निष्परिग्रहः.....
शुक्लध्यान परायणः।''.....(सूत्र 6)

निर्ग्रंथ साधु यथाजातरूप धारी तथा शुक्ल ध्यान परायण होता है। सिवाय निर्ग्रंथ (जैन) मार्ग के अन्यत्र कहीं भी शुक्ल ध्यान का वर्णन नहीं मिलता, इससे विदित होता है कि उक्त वाक्य दिगम्बर जैन मुनियों से ही संबंध रखते हैं। 'मैत्रेयोपनिषद्' में 'दिगम्बर' शब्द का प्रयोग भी इसी बात का द्योतक है।

''देशकालविमुक्ततोऽस्मि, दिगम्बर सुखोस्म्थहम्''[84]

उपनिषदों में भी दिगम्बर मुनियों का अनेक स्थानों पर उल्लेख हुआ है, जिसमें परमहंस, भिक्षु, परिव्राजक तथा सन्यासी को नग्न रहना आवश्यक बताया गया है। परमहंस के विषय में जावाल उपनिषद् में लिखा है कि जो निर्ग्रंथ दिगम्बर मुद्राधारी तथा परिग्रह रहित होकर ब्रह्म के मार्ग में सम्यक् प्रकार से संलग्न है, वह शुद्ध मनोवृत्ति वाला है, प्राण रक्षण के लिए भिक्षा द्वारा आहार ग्रहण करता है तथा लाभ-अलाभ में समदृष्टि रखता है वह परमहंस है।

''यथाजात-रूपधरो निर्ग्रन्थो निष्परिग्रहस्तत्तद ब्रह्ममार्गे
सम्यक् सम्पन्नः शुद्धमानसः प्राणसंधारणार्थं.....
विमुक्तो भैक्षमाचरन्.....लाभालाभयोः समो भूत्वा
.....स परमहंसो नाम''।

इसी ग्रंथ में लिखा है कि परमहंस मुनि आकाश रूपी वस्त्र को धारण करता है।[85]

.....''सः परमहंस आकाशाम्बरो न नमस्कारो न स्वाहाकारो,
न निंदा, न स्तुतिर्यादृच्छिको भवेत् स भिक्षुः।''
यथाजातरूप धरो निर्ग्रंथो निष्परिग्रहस्तत्तद् ब्रह्ममार्गे सम्यक्संपन्नः इत्यादि''।[86]

यथाविधिश्चेज्जातरूपधरोभूत्वा.....जातरूपधरश्चरेदात्मानन्विच्छेद्यथाजातरूपधरो निर्द्वन्दो निष्परिग्रहस्तत्व ब्रह्ममार्गे सम्यक् सम्पन्न।[86] तृतीयोपदेशः।[87]

''तुरीयः परमोहंसः साक्षान्नारायणो यतिः। एकरात्रं वसेत् ग्रामे नगरे पञ्चरात्रकम्।। 14।। वर्षाभ्योऽन्यत्र वर्षासु मासांश्च चतुरो वसेत्। मुनि कौपीनवासाः स्यान्नग्गो वा ध्यानतत्परः। 32।.....जातरूपधरो भूत्वा.....दिगम्बराः चतुर्थोपदेशः।[88]

''भिक्षुकोपनिषद्'' में भी लिखा है-

अथ जातरूपधरा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः शुक्लध्यानपरायणा.....[89]

'तुरीयातीतोपनिषद्' में भी उल्लेख इस प्रकार है-

[84]) दिमु. पृ. 10 [85]) ईशाद्य. [88]) ईशाद्य. पृ. 131 [87]) ईशाद्य. पृ. 267-268 [88]) ईशाद्य. पृ. 268-269 [89]) ईशाद्य. पृ. 368

''संन्यस्य दिगम्बरो भूत्वा विवर्णजीर्णवल्कलाजिनपरिग्रहमपि संप्यज्य.....[90]
ॐ सुवः स्वाहेत्वा तेन जातरूपधरो भूत्वा स्वं.....[91]

यथा जातरूपधरा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहास्तत्त्वब्रह्ममार्गेसम्यक् संपन्नाः शुद्धमानसाः प्राणसंधारणार्थं यथोक्तकाले विमुक्तो भैक्षनाचरन्नुदरपात्रेण लाभा-लाभौ समो भूत्वा करपात्रेण मा कमण्डलूकदयो भैक्षमाचरन्नुदर मात्र संग्रहः ।.....आशाम्बरो न नमस्कारो न दारपुत्राभिलाषि लक्ष्यालक्ष्य निर्वर्तकः परिव्राट परमेश्वरो भवति ।[92]
(उपर्युक्त वाक्यों का अर्थ सुगम है)

''तदेतद्विज्ञाय ब्राह्मणः पात्रं कमण्डलुं कटिसूत्रं कौपीनं च तत्सर्वमप्सुविसृज्याथ जात ररूपधरश्चरेदात्मान मन्विच्छेत्''[93]

अर्थ :-ऐसा जानकर ब्राह्मण (ब्रह्मज्ञानी) पात्र, कमण्डलु ,कटिसूत्र और लंगोटी आदि सर्व वस्तुओं को पानी में छोड़ दे और जन्म समय के वेष (नग्न वेष) को अंगीकार कर विचरण करें और आत्मशोधन करें।

पहले इस देश को ग्रंथों ने बाँटा, फिर पंथों ने बाँटा और फिर अब संतों ने बाँट दिया है हमको वसीयत में बाँटना ही मिला है अब इससे भी बुरी बात और क्या हो सकती है कि घर बाँटा, मोहल्ला बाँटा, नगर बाँटा, शहर बाँटा, देश बाँटा और कुछ आगे न मिला तो धर्म को भी बाँट दिया। तुम्हारी नसीहत बाँटने की नहीं बटोरने की है बाँटों नहीं बटोरों। काटों नहीं अमृत बांटों, दो की खाइयों को पाटो। अब पंथ की बात नहीं, पथ की बात करों। अब अर्थ की नहीं, परमार्थ की बात करो। अब संत की नहीं, सत्य मार्ग की बात करो।

-इंसान क्यों दुःखी हैं ? 26

[90]) ईशाद्य. पृ. 410 [91])परमहंस परिव्रजकोपनिषद [92]) ईशाद्य. पृ. 524 [93]) परमहंसोपनिषद्

8. हिन्दू पुराणों में दिगम्बर जैन मुनि

अब 'रामायण' काल में दिगम्बर मुनियों के अस्तित्व को देखिये। 'रामायण' के 'बालकाण्ड' (सर्ग 14 श्लोक 22) में राजा दशरथ श्रमणों को आहार देते बताये गये हैं (तापसा भुञ्जते चापि श्रमण भुञ्जते तथा'') और 'श्रमण' शब्द का अर्थ 'भूषण टीका' में दिगम्बर मुनि किया गया है।[94]

जो ठीक है, क्योंकि दिगम्बर मुनि का एक नाम 'श्रमण' भी है, तथापि जैन शास्त्र राजा दशरथ और रामचंद्रजी आदि को जैन भक्त प्रकट करते हैं।[95]

'योगवशिष्ट' में श्री रामचन्द्र जी 'जिन भगवान' के समान होने की इच्छा प्रकट करके अपनी जैन भक्ति प्रकट करते हैं।[96]

''नाहं रामो न मे वाञ्छा भावेषु न च मे मनः।
शान्ति मास्थातु-मिच्छामि स्वात्मन्येव जिनो यथा।।''[97]

अर्थ :-(गुरु वशिष्ठ को श्री राम कहते हैं) मैं राम नहीं हूँ मेरी कुछ इच्छा नहीं है और भावों व पदार्थों में मेरा मन नहीं है। मैं तो जिनदेव के समान ही अपनी आत्मा में शान्ति स्थापना करना चाहता हूँ।

अतः रामायण के उक्त उल्लेख से उस काल में दिगम्बर मुनियों का होना स्पष्ट है।

इसी 'पद्मपुराणां' में (भूमि खंड अ. 66)[98] में राजा वेण की कथा है। उसमें लिखा है कि एक दिगम्बर मुनि ने उस राजा को जैन धर्म में दीक्षित किया था। मुनि का स्वरूप यूँ लिखा है-

''नग्नरूपो महाकायः सितमुण्डो महाप्रभः।
मार्ज्जनीं शिखिपत्राणां कक्षायां स हि धारयन्।।
गृहीत्वा पानपात्रश्च नारिकेलमनी करे।
पठमानो मरच्छास्त्रं वेदशास्त्रविदूषकम्।।
यत्र वेणो महाराजस्तत्रो पापात्त्वरान्वितः।
सभायां तस्य वेणस्य प्रविवेश सपापवान्।।''

यह नग्न साधु, महाराज वेण की राज सभा में पहुँच गये और धर्मोपदेश देने लगे।[99]

उन्होंने बताया कि मेरे मत में-

''अर्हंतो देवता यत्र निर्ग्रंथो गुरुरुच्यते।
दया वै परमो धर्मस्तत्र मोक्षः प्रदृश्यते।''

यह सुनकर वेण जैनी हो गया। (एवं वेणस्य वै राज्ञः सृष्टिरेस्व महात्मनः। धर्माचार परित्यज्य कथं पापे महिर्भवेत्।।) जैन सम्राट खारवेल के शिलालेख से भी राजा वेण का जैनी होना प्रमाणित है।

इससे प्रकट है कि दिगम्बर मुनि राज सभा में भी बेरोक-टोक पहुँचते थे। वेण, ब्रह्मा से छठवीं पीढ़ी में थे।[100]

[94]) श्रमण दिगम्बराः श्रमणा वातवसनाः [95]) प.पु. [96]) यो.व.अ.15 श्लो.8 [97]) यो. व. अ. 14 श्लो.8 [98]) R.C. Dutt, HinduShashtras Pt. VIII. PP. 213-22 & J.G. XIV-89 [100]) (जर्नल ऑफ दी बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, भा. 13 पृ. 224) [100]) J.G. XIV. 162

श्री भागवत पुराण में ऋषभ अवतार के संबंध में कहा गया है–

वर्हिषी तस्मिन्नेव विष्णु भगवान् परमर्षिभिः प्रसादतो नाभेः प्रियचिकीर्षया तदवरोधायने मरुदेव्यां धर्मान् दर्शयतु कामो वातरशनानां श्रमणानां ऋषीणा– मूर्धा मन्थिना शुक्लया तनु वाववतार।

अर्थ–"हे राजन्! परीक्षित वा यज्ञ में परम ऋषियों करके प्रसन्न हो नाभि के प्रिय करने की इच्छा से वाके अन्तःपुर में मरुदेव में धर्म दिखायवे कि कामना करके दिगम्बर रहिवेवारे तपस्वी ज्ञानी नैष्ठिक ब्रह्मचारी उर्ध्वरिता ऋषियों को उपदेश देने को शुक्लवर्ण की देहधार श्री ऋषभदेव नाम का (विष्णु ने) अवतार लिया।"[101]

स्कंध पुराण–प्रभास खण्ड (अ. 16 पृ. 221) में शिव को दिगम्बर लिखा है।[102]

"वामनोपि ततश्चक्रे, तत्र तीर्थावगाहनम्।
यादृग्रूपः शिवः दिष्टः, सूर्यबिम्बे दिगम्बरः" ।।94।।

श्री भर्तृहरि जी "वैराग्यशतक" में लिखते हैं–[103]

"एकाकी निस्पृहः शान्तः, पाणिपात्रा दिगम्बरः।
कदा शम्भो भविष्यामि, कर्मनिर्मूलनक्षमः" ।।58।।

अर्थ–"हे शम्भो! मैं अकेला, इच्छा रहित, शांत, पाणिपात्र और दिगम्बर होकर कर्मों का नाश कब कर सकूँगा?" वह और भी कहते है–[104]

अशीमहि वयं भिक्षा माशावासो वसीमहि।
शयीमहि मही पृष्ठे कुर्वीमहि किमीश्वरैः ।।90।।

अर्थ–अब हम भिक्षा ही करके भोजन करेंगे, दिशा के ही वस्त्र धारण करेंगे अर्थात् नग्न रहेंगे और भूमि पर ही शयन करेंगे। फिर भला धनवानों से हमें क्या मतलब?

पुराण एवं पुराणेत्तर साहित्य में भी इसी संबंध में महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होती है–"शिव जी ने दिगम्बर मुद्रा धारण कर देवदारु वन के आश्रम का निरीक्षण किया था। उनके हाथ में मयूर पंख की पिच्छिका भी थी।[105]

"मयूर चन्द्रिका पुंज पिच्छिकां धारयन्.....।।

कूर्मपुराण[106]

पद्मपुराण[107] में भी दिगम्बरत्व समर्थक सामग्री उपलब्ध होती है।

शंकराचार्य के विवेक चूड़ामणि में ब्रह्मनिष्ठ की स्वाधीन वृत्ति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि उनके वस्त्र दिशारूपी होते हैं जिन्हें धोने और सुखाने की आवश्यकता मालूम नहीं पड़ती है।[108]

"चिंता शून्य मदैन्यभैक्षमशनं पान सरिद् वारिषु, स्थितिरमीनिद्रा श्मशाने वने स्वातणै निरंकुशा। वस्त्रं क्षालन शोषणादि रहितं दिग्वास्तु शय्या मही। संचारो निगमान्त वीथिषु विदां क्रीड़ा परे ब्रह्मणी।।"

[101]) वेजै. पृ. 3 [102]) वेजै. पृ. 34 [103]) वेजै. पृ. 46 [104]) वेजै. पृ. 47
[105]) शिवपुराण 10/80, 82 [106]) कूर्म पुराण 37/7 [107]) प.पु.–पाताल खण्ड 72,73 [108]) वि. चू.

9. ब्राह्मण वर्ण और दिगम्बर जैन मुनि

भगवान महावीर स्वामी का ब्राह्मण वर्ण पर भी बहुत अच्छा प्रभाव था। यही कारण था कि उनके प्रमुख शिष्यों में अधिकतर उनके नाम मिलते है, जिन्होंने मुनि दीक्षा लेकर आत्मसाधना कर मोक्ष प्राप्त किया।

भगवान के विहार और धर्म प्रचार से जैन धर्म का विशेष उद्योत हुआ था। जैन शास्त्र कहते हैं कि उनके संघ में चौदह हजार दिगम्बर मुनि थे। जिनमें 9,900 साधारण मुनि, 300 अंग पूर्वधारी मुनि, 1,300 अवधि ज्ञानधारी मुनि, 900 विक्रिया ऋद्धि युक्त, 800 चार ज्ञान के धारी, 700 केवलज्ञानी और 900 अनुत्तरवादी थे। भगवान महावीर स्वामी के संघस्थ दिगम्बर मुनि दस गणों में विभक्त थे और ग्यारह गणधर उनकी देखरेख करते थे।[109] इन गणधरों का संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है-(1) इन्द्रभूति गौतम (2) वायुभूति (3) अग्निभूति, ये तीनों गणधर मगध देश के गौर्वर ग्राम के निवासी वसुभूति (शांडिल्य) ब्राह्मण की स्त्री पृथ्वी (स्थिण्डिला) और केसरी के गर्भ से जन्मे थे। गृहस्थाश्रम त्यागने के बाद ये क्रम से गौतम, गार्ग्य और भार्गव नाम से प्रसिद्ध हुए थे। जैन होने के पहले ये तीनों वेद धर्म परायण ब्राह्मण विद्वान थे। भगवान महावीर के निकट इन तीनों ने अपने कई सौ शिष्यों सहित जैन धर्म की दीक्षा ग्रहण की थी और ये दिगम्बर मुनि होकर मुनियों के नेता हुए थे। देश देशांतर में विहार करके इन्होंने खूब धर्म प्रभावना की।[110]

चौथे गणधर व्यक्त कोल्लग सन्निवेश निवासी धनमित्र ब्राह्मण की वारूणी[111] नामक पत्नी की कोख से जन्मे थे। दिगम्बर मुनि होकर यह भी गणनायक हुए थे।

पाँचवें सुधर्म नामक गणधर भी कोल्लग सन्निवेश के निवासी धम्मिल ब्राह्मण के सुपुत्र थे। इनकी माता का नाम भद्दिला था। भगवान महावीर के उपरांत इनके द्वारा जैन धर्म का विशेष प्रचार हुआ था।[112]

छटे माण्डिक नामक गणधर मौर्य्याख्य देश निवासी धनदेव ब्राह्मण की विजयादेवी स्त्री के गर्भ से जन्मे थे। दिगम्बर मुनि होकर यह वीर संघ में सम्मिलित हो गये थे और देश-विदेश में धर्म प्रचार किया था।

सातवें गणधर मौर्यपुत्र भी मौर्य्याख्य देश के निवासी मौर्य्यक ब्राह्मण के पुत्र थे। इन्होंने भी भगवान महावीर के निकट दिगम्बरीय दीक्षा ग्रहण करके सर्वत्र धर्म प्रचार किया था।

आठवें गणधर अकम्पन थे, जो मिथिलापुरी निवासी देव नामक ब्राह्मण की जयन्ती नामक स्त्री के उदर से जन्मे थे, इन्होंने भी खूब धर्म प्रचार किया था।

नवें धवल नामक गणधर कोशलापुरी के वसुविप्र के सुपुत्र, इनकी माँ का नाम नन्दा था। इन्होंने भी दिगम्बर मुनि हो सर्वत्र विहार किया था।

दसवें गणधर मैत्रेय थे। वह वत्सदेशस्थ तुगिंकाख्य नगरी के निवासी दत्त ब्राह्मण की स्त्री करूणा के गर्भ से जन्मे थे। इन्होंने भी अपने गण के साधुओं सहित धर्म प्रचार किया।

[109]) भम.117 [110]) वृजैश. पृ. 60-61 [111]) वृजैश. पृ. 8 [112]) वृजैश. पृ. 8

ग्यारहवें गणधरप्रभाव राजगृह निवासी बल नामक ब्राह्मण की पत्नी भद्रा की कुक्षि से जन्मे थे और दिगम्बर मुनि तथा गणनायक होकर सर्वत्र धर्म का उद्योत करते हुए विचरे थे [113]

इन गणधरों की अध्यक्षता में रहे उपर्युक्त चौदह हजार दिगम्बर मुनियों ने तत्कालीन भारत का महान उपकार किया था। विद्या, धर्मज्ञान और सदाचार उनके सद्उद्योग से भारत में खूब फैले थे।

"The Buddhist and Jaina texts tell us that the intincrant of the time wandered about in the country, engaging themselves wherever they stopped in serious discussion on matters relating to religion, philosophy ethics and polity." [113B]

भवार्थ–बौद्ध और जैन शास्त्रों से ज्ञात होता है कि तत्कालीन धर्म गुरु देश में सर्वत्र विचरते थे, और जहाँ वे ठहरते थे वहाँ धर्म सिद्धांत, आचार, नीति और राष्ट्र वार्ता विषयक गम्भीर चर्चा करते थे। सचमुच उनके द्वारा जनता का महान हित हुआ था।

सम्राट श्रेणिक बिम्बसार के पुत्र राजकुमार अभय दिगम्बर मुनि हो गये थे। यह बात बौद्धशास्त्र भी प्रकट करते है।[114]

उन राजकुमार ने ईरान देश के वासियों में भी धर्म प्रचार किया था।

कलियुग में ही नहीं सतयुग में भी विरोध होता था यदि विरोध न होता तो, बाहुबली और भरत में कभी तकरार न होता, कौरव और पाण्डवों में महाभारत न होता, कृष्ण और कंस में कभी संघर्ष न होता, राम और रावण के बीच युद्ध न होता, कैकयी और दशरथ के बीच दीवार खडी नहीं होता, दुर्योधन और युधिष्ठिर के मध्य रेखा न बनती तो विरोध तो होता रहा और आगे भी होता रहेगा लेकिन सतयुग और कलियुग के विरोध में सिर्फ इतना अंतर है कि कलयुग में संघर्ष परमात्मा से नहीं, पदार्थ से संबंधित होते है। धर्म से नहीं, धन से सम्बंधित होते हैं। सत्य से नहीं ,सत्ता से सम्बंधित होते हैं। किन्तु सतयुग में धन के लिये नहीं,धर्म के लिये विरोध व विवाद होते थे। पदार्थ के लिये नहीं परमार्थ के लिये विरोध होते थे। आज हर मजहब में लडाई- झगडे हैं। हर मंदिर- मस्जिद में नफरत की दीवार खडी हुई है, दुनियाँ को अधर्म से उतना खतरा नहीं है जितना कि तुम्हारे द्वारा बनाये गये धर्म से हैं।

–इंसान यों दु खी है ? 29

113A) वृजैश. पृ. 9 113B) वृजैश. पृ. 8 114) P.B. P. 30 व भमबु. पृ. 266

10. इस्लाम धर्म और दिगम्बर जैन मुनि

इस्लाम धर्म में भी दिगम्बर जैन मुनियों को यथोचित् सम्मान दिया गया है तथा यथायोग्य रीति से उनके क्वचित् सिद्धांतों को अंगीकार कर दृढ़ता से उसका प्रचार किया है। यथा-

इस्लाम धर्म से संबंधित एक शायर जलालुद्दीन ने दिगम्बरत्व को दिव्य ज्योति से अलंकृत बताते हुए वस्त्रधारी को कहा है-

महतसिव से काम जो होगा, क्या नंगे से तू ओहदा बरा है।
नजर धोबी पै जमापोस की, है तजल्ली जेवेरे उरितांतनी ।।

अर्थात् नग्न दरवेश कहता है-अरे भाई, तू जा और अपना काम कर, तू दिगंबर सा नहीं बन सकता। वस्त्र पहनने वाले की दृष्टि सदा धोबी की ओर रहती है। दिगंबर की शोभा दैवी-प्रकाश रूप है। या तो तुम नग्न दरवेशी से कोई संबंध नहीं रखो अथवा उनके सदृश दिगंबर और स्वाधीन बन जाओ। यदि तुम पूर्णतया दिगंबर नहीं बन सकते तो अपने वस्त्रों को थोड़े परिमाण में रखो।

आज से लगभग 300 वर्ष पूर्व शाहजहाँ बादशाह के राज्य में मुस्लिम सूफी फकीर मुहम्मद अली नग्न रूप में रहते थे। उनकी मजार दिल्ली की जामा मस्जिद के वाम भाग में है। उनका कहना था कि परमात्मा जिसमें दोष देखता है, उसे वस्त्र पहना देता है किन्तु जो निर्दोष है उसे नग्न रहने देता है।

अब्दुल कासिम लिखते हैं- पोशाद लिबास हरकरा एबेदीक।
बे एबारा लिबास उदियानी दाद ।।

और भी ऐसे कई उल्लेख मिलते हैं जिनसे यह कहा जा सकता है कि इस्लाम धर्म में भी नग्नत्व को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त रहा है।

इस्लाम धर्म में भगवान के लिए प्रचलित 'मुहम्मद' शब्द की व्याख्या एक शब्द कोष में तथा कुरान शरीफ में बड़े सुंदर ढंग से की गई है। कहा है-जिसने मोह और मद को नष्ट कर दिया है वह मुहम्मद है और ऐसे ही व्यक्ति आराधना करने योग्य हो सकते हैं; यही पूर्ण सत्य एवं तथ्य है।

तुर्किस्थान में 'अब्दल' (Abdal) नामक दरवेश मादरजात नंगे रहकर अपनी साधना में लीन रहते बताये गये हैं।

"The higher saints of Islam, called 'Abdals' generally went about perfectly naked; as described by Miss Lucy M. Garnet in her excellent account of the lives of Muslims Dervishes entitled "Mysticisms and Magic in Turkey".[115]

इस्लाम के महान सूफी तत्ववेत्ता और सुप्रसिद्ध 'मनस्वी' नामक ग्रंथ के रचयिता श्री जलालुद्दीन रूमी दिगंबरत्व का खुला उपदेश निम्न प्रकार देते हैं-

[115]) N.J.P. 10

1) 'गुफ्त मस्त ऐ महतब बगुजार रब-अज बिरहना के तवां बुरदन गख।''[116]

2) ''जामा पोशांरा नजर परगाज रास्त-जामै अरियाँ रा तजल्ली जेवरअस्त।''[117]

3) ''याज अरियानान बयकसू बाज ख-या चूँ ईशां फारिग व बेजामा शव।''

4) ''वरनमी तानी कि कुल अरियाँ शबी-जामा कम कुन ता रह औरत रवी।''[118]

इनका उर्दू में अनुवाद 'इल्हामे मन्जून' नामक पुस्तक में इस प्रकार दिया हुआ है-

1) मस्तबोला, महतब, कर काम जा, होगा क्या नंगे से तू अहदे वर आ।

2) है नजर धोबी पै जामै-पोश की है, तजल्ली जेवर अरियाँ तनी।''

3) या विरहनों से हो यकसू वाकई, या हो उनकी तरह बेजामै अखी।

4) मुतलकन अरियाँ जो हो सकता नहीं, कपड़े कम यह है कि औसत के करीं!!

भाव स्पष्ट है कोई तार्किक मस्त नंगे दरवेश से आ उलझा। उसने सीधे से कह दिया कि जा अपना काम कर तू नंगे के सामने टिक नहीं सकता। वस्त्रधारी को हमेशा धोबी की फिकर लगी रहती है, किन्तु नंगे दरवेशों से कोई सरोकार न रख अथवा उनकी तरह आजाद और नंगा हो जा! और अगर तू एकदम दूसरे कपड़े नहीं उतार सकता तो कम से कम कपड़े पहन और मध्यमार्ग को ग्रहण कर। क्या अच्छा उपदेश है। एक दिगंबर जैन साधु भी यही उपदेश देता है। इससे दिगंबरत्व का इस्लाम से सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है।

इस्लाम के इस उपदेश के अनुरूप सैकड़ों मुसलमान फकीरों ने दिगंबर वेष को गतकाल में धारण किया था। उनमें अबुलकासिम गिलानी और सरमद शहीद उल्लेखनीय है।[119]

और भी वे लिखते हैं कि-

"Among the vast number and endless variety of Fakires of Fakires or Dervishes.....some carried a club like to Hercules, others, others had a dry and rough tiger-skin thrown over their shoulders.....several of these Fakires take long Pilgrimages, not only naked but laden with heavy iron chain such as are put about the legs of elephants."[120]

सरमद की तरह न जाने नंगे मुसलमान दरवेश हो गुजरे हैं। बादशाह ने उसे मात्र नंगे रहने के कारण सजा न दी, यह इस बात का द्योतक है कि वह नग्नता को बुरी चीज नहीं समझता था और सचमुच उस समय भारत में हजारों नंगे फकीर थे। ये दरवेश अपने तन में भारी-भारी जंजीरें लपेट बड़े लम्बे-लम्बे तीर्थाटन किया करते थे।

सारांश यह है कि इस्लाम मजहब में दिगंबरत्व साधु पद का चिन्ह रहा है और उसकी अमली शक्ल भी हजारों मुसलमानों ने दी है और चूँकि हजरत मुहम्मद किसी नये सिद्धांत के प्रचार का दावा नहीं करते, इसलिए कहना होगा कि ऋषभाचल से प्रकट हुई दिगंबरत्व-गंगा की एक धारा को इस्लाम के सूफी दरवेशों ने भी अपना लिया था।

[117]) जिल्द 2 सफा 382 [118]) जिल्द 2 सफा 383 जल्द और पृष्ठ के नम्बर ''मनस्वी'' के उर्दू अनुवाद ङ्क 'इल्हामे मंजूम के हैं')[119]) KK.P. 739 & NJ PP. 8-9 [120]) Burnier P. 317 [116]) जिल्द2 सफा262

11. पर्यूषण पर्व के अवसर पर जहाँगीर का फरमान

लगभग 400 वर्ष पूर्व जहाँगीर बादशाह ने फरमान निकाला था कि भादों के महीने में 12 दिन तक किसी भी पशु-पक्षी का वध नहीं किया जाये। पाठकों की जानकारी के लिए हम उसे नीचे छाप रहे हैं।

फरमाने जहाँगीरि

खात्रदाने मुगलिया के शहनशाह जहाँगीर का ईद के मौके पर

शाही फरमान

आज से 344 साल पेशतर 26 फरवरी सन् 1605 को जैनधर्म के मुककदस इबादती महाभादौ के बारा मुकद्दस ऐय्याम के दौरान मवेशियों और रिन्दों को जबह करना बंद किया जाय।

''नाकाबिले फरामोश''

हमारी सल्तनत के मुमालिक महरूसा के जुमला हुक्काम, नातिमान, जागीर दरार को बाजेह हो फतूहति दीनवी के साथ हमारा दिली मनशा खुदाय बर तर की जुमला मखलूक की खुशनबूदी हासिल करना है। आज ईद के मौका पर भा बदौलत को कुछ जैन (हिन्दुओं) की तरफ से इस्तेदा पेश की गई है कि ''माह भादों के मौके पर उनके बारा मकद्दस ऐय्याम में जानवरों को मारना बंद किया जाये।''

हम मजहबी उमूर में हर मजहब व मिल्लत के अगराज व मकासद की तक मींल में हर एक को हौसला अफजाई करना चाहते हैं। इसलिए यह दरखास्त मंजूर करते हुए ''हम हुक्म देते हैं कि भादों के इन बारा मजहबी ऐय्याम में जो (जैन हिन्दुओं) के मकद्दस और इवादती ऐय्याम है इनमें किसी किस्म की कुरबानी या भी जानवर को हलाल करने की मुमनियत होगी'' और इस हुक्म की तामील न करने वाला मुजरिम तसव्र होगा। यह फरमान दवामी तसत्पर हो।

दस्तखत मुबारिका

शहनशाह जहाँगीर

मुहर

प्रस्तुति

सौ

महावीर का धर्म साफ, सुथरा व स्वच्छ धर्म है जिसमें किसी भी तरह की लाग लपेट व मिलावट की बात नहीं है। महावीर का धर्म गंगा जैसा पवित्र, हिमालय जैसा सुंदर, समुद्र जैसा असीम, आकाश जैसा खुला सूर्य जैसा प्रकाशित, चंद्रमा जैसा शीतल धर्म है। याद रखना जैन धर्म वह नहीं है जो महावीर ने दिया है। जैन धर्म तो वह है जो तुमने लिया है जो महावीर ने किया व कहा है वो तो कुछ और ही है तुमने जो पकडा है समझा है वह कुछ ओर है। महावीर का धर्म जीवन का धर्म है, तुम्हारा धर्म जि ा का धर्म है, तुम्हारा धर्म उ ारण व भाषण का धर्म है, महावीर का धर्म आत्मदर्शन का धर्म है, तुम्हारा धर्म प्रदर्शन का धर्म है।

–इंसान यों दु खी हैं ? 11

12. ईसाई धर्म और दिगम्बर जैन मुनि

ईसाई मजहब में भी दिगंबर का महत्व भुलाया नहीं गया है, बल्कि बड़ें मार्के के शब्दों में उसका वहाँ प्रतिपादन हुआ मिलता है। इसका एक कारण है कि जिस महानुभाव द्वारा ईसाई धर्म का प्रतिपादन हुआ था वह जैन श्रमणों के निकट शिक्षा पा चुका था।[121]

उसने जैन धर्म की शिक्षा को ही अलंकृत भाषा में पाश्चात्य देशों में प्रचलित कर दिया। इस अवस्था में ईसाई मजहब दिगंबरत्व के सिद्धांत से खाली नहीं रह सकता और सचमुच बाईबिल में स्पष्ट कहा गया है कि-

''और उसने अपने वस्त्र उतार डाले और सैमुयल के समक्ष ऐसी ही घोषणा की तथा वह सारे दिन व सारी रात नंगा रहा। इस पर उन्होंने कहा-क्या साल भी पैगम्बरों में से है ?''[122]

उसी समय प्रभु ने अमोज के पुत्र ईसाईया से कहा-जा और अपने वस्त्र उतार डाल और अपने पैरों से जूते निकाल डाल,.....और उसने यही किया नंगा और नंगे पैरों वह विचरने लगा।[123]

इन उद्धरणों से यह सिद्ध है कि बाईबिल भी मुमुक्षु को दिगंबर मुनि हो जाने का उपदेश देती है और कितने ही ईसाई साधु दिगंबर वेष में रह भी चुके हैं। ईसाईयों के इन नंगे साधुओं में एक सेन्टमरी (St. Mary of Egypt) नामक साध्वी भी थी। यह मिश्र देश की सुंदर स्त्री थी, किन्तु इसने भी कपड़े छोड़कर नग्न वेष में ही सर्वत्र विहार किया था।[124]

दुनियाँ में कुछ ऐसे काम होते हैं, जो बहुत सरल होते हैं और कुछ ऐसे काम होते हैं जो बहुत कठिन होते हैं, जैसे वृक्ष पेड़ पौधों को काटना बहुत सरल है पर पुनः लगाना बहुत कठिन है, दूसरों के घरों को उजाड़ना बहुत सरल है पर घरों को बसाना बहुत कठिन है, धागे को उलझाना एवं दूध को फाड़ना तो बहुत सरल है पर धागे को सुलझाना एवं दूध को पुनः स्थिति में लाना बहुत कठिन है। अगर तुम किसी के हंसते खेलते गुलशन में, घरों में कटाई का काम करते हो तो याद रखना सबसे पहले तुम्हें स्वयं कटना होगा। क्योंकि नींबू दूध को फाड़ता है। लेकिन उसके पहले नींबू को स्वयं कटना पड़ता हैं। संसार प्रतिध्वनि है जैसा तुम दूसरों के साथ करोंगे वैसा फल तुम्हारे साथ भी अवश्य होगा।

-इंसान क्यों दुःखी हैं ? 13

[121]) विको. भा. 3, पृ. 128 [122]) सैमुयल 19/24 [123]) ईसाय्या 20/2
[124]) The History of European Morals Ch. 4 & NJ. P. 6

13. यहूदी धर्म और दिगम्बर जैन मुनि

यहूदी (Jesus) लोगों की प्रसिद्ध पुस्तक "The Assension of Isaiah" (P. 32) में लिखा है-

"Those who believe in the ascesion into heaven with drew settled on the mountain..... They were all Prophets (Saints) and they had nothing with them and pure naked."[125]

अर्थात्-वह जो मुक्ति की प्राप्ति में श्रद्धा रखते थे एकांत में पर्वत पर जा जमे। वे सब संत थे और उनके पास कुछ नहीं था और वे नंगे थे।

अपॉसल पीटर ने नंगे रहने की आवश्यकता और विशेषता को निम्न शब्दों में बड़े अच्छे ढंग से "Clementine Homilies" में दर्शाया है-

"For we, who have chosen the future things, in so for as we possess more goods than these, whether they be clothings or.....any other thing, possess sins, because we ought not to have any things.....To all of us possessions are sins.....The deprivation of these, in whatever way it may take place is the removal of sins."[126]

अर्थात्-क्योंकि जिन्होंने भविष्य की चीजों को चुन लिया है, यहाँ तक कि हम उनसे ज्यादा सामान रखते है, चाहे वे फिर कपड़ें लत्ते हों या दूसरी कोई चीज पाप को रखे हुए है, क्योंकि हमें कुछ भी अपने पास नहीं रखना चाहिए। हम सबके लिए परिग्रह पाप है। जैसे भी हो वैसे इनका त्याग करना पापों को हटाना है।

दिगंबरत्व की आवश्यकता पाप से मुक्ति पाने के लिए आवश्यक ही हैं। ईसाई ग्रंथकार ने इसके महत्व को खूब दर्शा दिया है। यही वजह है कि ईसाई मजहब में नग्न साधु हो चुके हैं।

हजारों है फफोले ऐ दिल, जलन का दर्द है छाया,
किसी को क्या कहा जाये, स्वयं दगा देगी ये काया।
न कोई काम आयेगा, जिसे तुम मानते अपना,
खुशी में साथ सब होंगे, मुसीबत में अरे सपना ।।

हंस हंस कर मैं भूल चुका हूँ आशा और निराशा को,
रो रोकर मैं भूल चुका हूँ सुख दुख की परिभाषा को।
भूल चुका हूँ सब कुछ केवल इतना मुझको याद रहा,
बनते देखा मिटते देखा अपनी ही अभिलाषा को ।।

वह फूल नहीं वह कंटक है, जिसमें सौरभ का सार नहीं,
मत कहो उसे हरगिज वीणा, जिसमें बजती झनकार नहीं।
वह जीवित नहीं मरा हुआ है, जो करता पर का उपकार नहीं,
वह हृदय नहीं पत्थर है, जिसमें जिनधर्म से प्यार नहीं ।।

[125]) N.J.P. 6 [126]) Ante Nicene Christian Library, XVII 240 & NJ. P. 7

14. दिगम्बर जैन मुनि एवं पौराणिक राजा महाराजा

यह बात स्पष्ट है कि दिगम्बर मुनियों की परंपरा शाश्वत है इसे ही श्रमण परंपरा कहा जाता है इस परंपरा में अनेकों महापुरुष हुए, जिनमें कुछ महापुरुषों की दिगम्बर जैन मुनि की भक्ति तथा दीक्षा के विषय में,हम देखने का प्रयास करेंगे। पद्मपुराण में महाराजा दशरथ, भगवान राम, हनुमान, पाण्ड़व, सुग्रीव, गव, गवाक्ष, नल, नील आदि के विषय में कहा गया है कि ये सभी महापुरुष दिगम्बर जैन मुनियों के भक्त थे और अन्त में इन्होंने मुनि दीक्षा ले मांगी तुंगीगिरि से मोक्ष प्राप्त किया था।

महाराजा श्री राम :– मर्यादा पुरुषोत्तम राम के विषय में उल्लेख है कि आपने कुंथलगिरि क्षेत्र पर स्थित कुलभूषण-देशभूषण मुनि के उपसर्ग को दूर किया था। तथा दण्डक वन में चारण ऋद्धिधारी मुनियों को आहार दिया था। तथा निर्ग्रंथ दीक्षा ले मांगी तुंगी गिरि से मोक्ष प्राप्त किया था।

महाराजा श्री कृष्ण :– श्री कृष्ण जी ने व्याधि पीडित मुनि के लिये औषधि व्यवस्था बनवाई थी तथा द्वारिका रक्षा के लिए द्वीपायन मुनि से प्रार्थना की थी।22 वें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ श्री कृष्ण के चचेरे भाई थे। महाभारत युद्ध के अवसर पर आपने निर्ग्रंथ दिगम्बर मुनि को देख कर पाण्ड़वों से कहा था कि "हे पार्थ! सामने देखो दिगम्बर मुनि के दर्शन हो रहे है ये शुभ शकुन है अतः गाण्ड़ीव उठाईये तुम्हारी विजय अवश्यंभावी है।"

प्रद्युम्न कुमार :– श्री कृष्ण पुत्र प्रद्युम्न कुमार ने दिगम्बर जैन मुनि की दीक्षा ले गिरनार की चौथी टोंक से मोक्ष प्राप्त किया था।

राजकुमार वारिषेण :– मगध नरेश श्रेणिक के पुत्र वारिषेण ने दिगम्बर जैन मुनि दीक्षा ली थी।

सम्राट चंद्र गुप्त :– सम्राट चंद्रगुप्त ने अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु से मुनि दीक्षा ले गुरुभक्ति के साथ श्रवणबेल-गोला के चंद्रगिरि पर्वत पर तपश्चरण किया था और वहीं उनका मरण हुआ था।

सम्राट अशोक :– सम्राट अशोक ने अपने एक स्तंभ में स्पष्टतः निर्ग्रंथ साधुओं की रक्षा का आदेश निकाला था।

राजा विक्रमादित्य :– उज्जयिनी नरेश विक्रमादित्य शैव थे किन्तु दिगम्बर जैनाचार्य श्री मानतुंग के उपदेश से जैन हो गये थे।

रोम बादशाह ऑगस्टस :– ईसवी पूर्व प्रथम शताब्दी में एक भारतीय राजा का संबंध रोम बादशाह ऑगस्टस से था। उन्होंने एक बार रोम बादशाह को भेंट भेजी उनके साथ भृगुकच्छ (भडौच) से एक दिगम्बराचार्य भी यूनान गये, वहाँ उनका सम्मान हुआ था। जीवन के अंत में उन्होंने सल्लेखना व्रत धारण कर अथेन्स में समाधीमरण किया था। स्मृति स्वरूप वहाँ उनकी निषेद्या (समाधि स्थल) बनाया गया था जो आज भी है।

यूनानी तत्ववेत्ता :– ईसवी पूर्व प्रथम शताब्दि में अपोलो और थामस नामक दो तत्ववेत्ता यूनान से भारत आये थे। उनका तात्कालीन दिगम्बर जैन मुनियों के साथ शास्त्रार्थ भी हुआ था।

राजा मनेन्द्र :– मिलन्द में कहा है कि 500 यूनानियों में एक बार राजा मनेन्द्र से भगवान के निर्ग्रंथ धर्म द्वारा मनः संतुष्टि करने का आग्रह किया था जिसे राजा मनेन्द्र ने स्वीकार किया था। अंत में वे जैन धर्म में दीक्षित हो गये थे और राज्य में अहिंसा धर्म की वृद्धि हुई थी।

राजा अजेस :– राजा अजेस के समय में तक्षशिला में जैन धर्म उन्नति पर था। उस समय के बने हुए जैन ऋषियों के स्मारक स्तूप आज भी वहाँ भग्नावेश में मौजूद है।

मथुरा के राजकुमारों व राज कुमारियाँ :– मथुरा में अनेक दिगम्बर जैन मुनि वहाँ विचरते थे। उनकी पूजा वहाँ के राजपुत्र, राजकन्याएँ तथा साधारण जन समुदाय भी किया करते थे।

कलिंग राजा :– कलिंग देश में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के (गृहस्थिक) पुत्र ने कलिंग में राज्य किया था। जब भगवान सर्वज्ञ अवस्था में विहार करते हुए कलिंग पहुँचे तो उनके उपदेश से प्रभावित हो कलिंग राजा ने अपने पुत्र को राज्य दे दिगम्बर जैन दीक्षा धारण की थी।

राजा दशरथ/यशधर के राजकुमार :– राजा दशरथ अथवा राजा यशधर के पुत्र 500 साथियों सहित दिगम्बर मुनि हुए थे तथा वहीं से मुक्त हुए थे।

कोटि शिला से एक करोड़ मुनि मुक्त हुए :– कोटि शिला कलिंग देश में है जिस पर एक करोड़ मुनियों ने बैठकर निर्वाण प्राप्त किया इसी कारण उस शिला का सार्थक नाम कोटि शिला है। इसे राम-लक्ष्मण ने उठाकर अपना बाहुबल प्रकट किया था।

होयसाल राजा :– मैसूर के होयसाल राजा दिगम्बर जैन मुनियों के भक्त थे। कहा जाता है कि साल नामक एक व्यक्ति एक जैन यति (दिगम्बर जैन मुनि) के पास विद्याभ्यास करता था। एक दिन एक शेर ने मुनिराज पर आक्रमण किया तो साल ने शीघ्र ही निहत्थे अपने बाहुबल से उसके मुँह को फाङ धराशाही कर मुनिराज की रक्षा की थी जिससे उसका नाम होयसाल पड़ा और सिंह से मुकाबला करने वाला उसकी मुद्रा बन गई। मुनि रक्षा के पुण्य प्रभाव से वह फिर 'होयसाल' नामक राजा हुआ।

राजा विनयादित्य :– होयसाल की परंपरा में राजा विनयादित्य हुए जिनके गुरु दिगम्बर जैन मुनि शांति देव थे।

भीमसेन राजा :– बनारस के राजा भीमसेन जैन धर्म व जैन मुनि का भक्त था और अंत में वह पिहितास्रव नामक जैन मुनि हुआ था।

राजा रणकेतु :– मथुरा नरेश रणकेतु अपने भाई गुणवर्मा के साथ नित्य देव पूजा किया करता था उसने अंतिम अवस्था में गुणवर्मा को राज्य दे दिगम्बर जैन मुनि दीक्षा ली थी।

जितशत्रु :– सौरीपुर नरेश जितशत्रु वह विद्वानों का आदर करता था और अंत में वह जैन मुनि हो शांतिकीर्ति नाम से प्रसिद्ध हुआ था।

मुञ्ज नरेश :– दिगम्बर जैनाचार्य महासेन का भक्त था और उनके उपदेश से उसने राज्य का मोह त्याग कर दिगम्बर मुनि दीक्षा ली थी।

राजा भोज :– प्रभाचंद्राचार्य का भक्त था। शांति सेन नामक दिगम्बर जैन मुनि ने सैकड़ों विद्वानों को वाद में परास्त किया था तथा मानतुंगाचार्य के भक्ति चमत्कार से प्रभावित हो वह जैन धर्म का अनुयायी हो गया था।

राजा विंध्यवर्मा :– मालवा नरेश विंध्यवर्मा दिगम्बर जैन मुनियों का भक्त था। मुनि मदनकीर्ति विंध्यवर्मा के पुत्र अर्जुन देव के राज गुरु मदनोपाध्याय के गुरु थे।

पृथ्वी राज :– वजोलिया के पार्श्वनाथ मंदिर की सेवार्थ दिगम्बर जैन मुनि पद्मनंदी और शुभचंद्र के उपदेश से पृथ्वीराज महाराजा ने मोरा कुटी ग्राम भेंट किया था। और सोमेश्वर राजा ने भी उस मंदिर के लिए उक्त मुनिराज के उपदेश से रेवाण नामक ग्राम भेंट किया था।

सम्राट कुमार पाल :– दिगम्बर जैन मुनियों का भक्त था। उसके शासन काल में अनेक दिगम्बर मुनि थे।

श्रवणबेलगोला :– महाराजा चामुण्डराय दिगम्बराचार्य श्री नेमिचंद्र के अनन्य भक्त थे उनके ही निर्देशन में उसने श्रवणबेलगोला के भगवान बाहुबली प्रतिमा प्रतिष्ठित की थी।

अकबर :– शाहजहाँ जहाँगीर आदि ने भी अपनी सभा में अनेकों दिगम्बर जैन मुनियों का सम्मान किया है ऐसा उल्लेख है।

छत्रसाल :– बुंदेलखण्ड के प्रतापी सम्राट थे, जैन धर्म व जैन मुनियों के भक्त थे।

अंजना :– हनुमान जी जब माँ अंजना के गर्भ में थे तब अंजना की सास ने उन्हें दोषारोपण कर घर से निकाला था उस समय अंजना अपनी धाय के साथ वन में चली गई,वहाँ चारण ऋद्धिधारी दिगम्बर जैन मुनि के दर्शन हुए थे। अंजना ने उनकी भक्ति की थी।

रावण :– कनकगिरि में दिगम्बर जैन मुनि अतिबल महाराजा को केवलज्ञान हुआ था। यह देख रावण अपने पुष्पक विमान से नीचे उतरा था तथा उसने उक्त मुनिराज की भक्ति की थी तथा उनसे नियम लिया था कि जो स्त्री मुझे चाहेगी नहीं उससे मैं बलात्कार नहीं करूँगा।

15. विभिन्न राजाओं पर दिगम्बर जैन मुनियों का प्रभाव

अभी तक हमने विभिन्न धर्म, दर्शन एवं पुराणों में दिगंबर जैन मुनियों के विषय में जाना और समझा। अब हम देखेंगे कि दिगंबर जैन मुनियों का देश व्यापी प्रभाव जिससे उन्होंने भिन्न-भिन्न देशों में विचरण कर वहाँ के राजाओं व प्रजाजन का हित किया।

हर्ष के उपरांत उत्तर भारत में कोई एक सम्राट न रहा, बल्कि अनेक छोटे-छोटे राज्यों में यह देश विभक्त हो गया। इन राज्यों में अधिकांश राजपूतों के अधिकार थे और इनमें दिगंबर मुनि निर्बाध विचरण कर जनकल्याण करते थे। राजपूतों में अधिकांश जैसे चौहान, पडिहार आदि एक समय जैन धर्म के भक्त थे और उनके कुलदेवता चक्रेश्वरी, अम्बा आदि शासन देवियाँ थीं।[127]

बनारस के राजा भीमसेन जैन धर्मानुयायी थे और वह अंत में पिहिताश्रव नामक जैन मुनि हुये थे।[128]

मथुरा में रणकेतु नामक राजा जैन धर्म का भक्त था। वह अपने भाई गुणवर्मा सहित नित्य जिनपूजा किया करता था। आखिर गुणवर्मा को राज्य देकर वह जैन मुनि हो गया था।[129]

सूरीपुर (जिला आगरा) का राजा जितशत्रु भी जैनी था। वह बड़े-बड़े विद्वानों का आदर करता था। अंत में वह जैन मुनि हो गया था और शांतिकीर्ति के नाम से प्रसिद्ध था।[130]

मुञ्जनरेश से दिगंबर जैनाचार्य महासेन ने विशेष सम्मान पाया था।[131]

दिगंबर जैनाचार्य श्री शुभचन्द्र श्री राजा मुञ्ज के समकालीन थे। उन्होंने राज का मोह त्याग कर दिगंबरी दीक्षा ग्रहण की थी।[132]

मुञ्ज के समान राजाभोज के दरबार में भी जैनों को विशेष सम्मान प्राप्त था। भोज स्वयं शैव था परंतु वह जैनों और हिन्दुओं के शास्त्रार्थ का बड़ा अनुयायी था। श्री प्रभाचन्द्राचार्य का उसने बड़ा आदर किया था। दिगंबर जैनाचार्य श्री शांतिसेन ने भोज की सभा में सैकड़ों विद्वानों से वाद करके उन्हें परास्त किया था।[133]

एक कवि कालिदास राजा भोज के दरबार में भी थे। कहते हैं कि उन्होंने दिगम्बराचार्य श्री मानतुंग जी से स्पर्द्धा की थी। उन्हीं के उकसाने पर राजा भोज ने मानतुंगाचार्य को अड़तालीस कोठों के भीतर बंद कर दिया था, किन्तु 'श्री भक्तामर स्तोत्र' की रचना करते हुए वे आचार्य अपने योग बल से बंधनमुक्त हो गए थे। इस घटना से प्रभावित होकर कहते हैं, राजा भोज जैन धर्म में दीक्षित हो गए थे।[134]

मालवा के परमार राजाओं में विन्ध्यवर्मा का नाम उल्लेखनीय है। इस राजा के राजकाल में प्रसिद्ध जैन कवि आशाधर ने ग्रन्थ रचना की थी और उस समय कई दिगम्बर मुनि भी राज सम्मान पाये हुए थें। इनमें मुनि उदयसेन और मुनि मदनकीर्ति के नाम उल्लेखनीय है। मुनि मदनकीर्ति ही विन्ध्यवर्मा के पुत्र अर्जुनदेव के राजगुरु मदनोपाध्याय अनुमान किये गये है।

[127]) वीर वर्ष 3, पृ. 472 (एक प्राचीन गुटका में यह बात लिखी हुई है) [128]) जैप्र. पृ. 242
[129]) पूर्व [130]) पूर्व पृ. 241 [131]) मप्राजैस्मा. भूमिका पृ.20 [132]) सजैर पृ. 54-55 [133]) आप्रारा. भा./पृ. 118-121
[134]) भक्तामर कथा, जैप्र. पृ. 239

इन्हें और विशालकीर्ति मुनि विनयचन्द्र आदि को कविवर आशाधर ने जैन सिद्धांत और साहित्य ज्ञान में निपुण बनाया था। नालंदा उस समय जैन धर्म का केन्द्र था।[135]

चन्देल राजा मदनवर्म देव के समय (1130-1165 ई.) में दिगम्बर जैन धर्म उन्नत रूप में रहा था।[136]

खजुराहो के घंटाई के मंदिर वाले शिलालेख से उस समय दिगम्बराचार्य नेमीचन्द्र का पता चलता है।[137]

दिगम्बर जैन धर्म का आदर था। बिजोलिया के श्री पार्श्वनाथ जी के मंदिर को दिगम्बर मुनि पद्मनन्दि और शुभचन्द्र के उपदेश से पृथ्वीराज ने मोराकुरी गाँव और सोमेश्वर राजा ने रेवाण नामक गाँव भेंट किए थे।[138]

चित्तौड़ का जैन कीर्ति स्तम्भ वहाँ पर दिगम्बर जैन धर्म की प्रधानता का द्योतक है। सम्राट कुमारपाल के समय वहाँ पहाड़ी पर बहुत से दिगम्बर जैन (मुनि) थें।[139]

It (जैन कीर्तिस्तम्भ) belongs to the Digambar Jains, many of whom seem to have been upon the hill in Kumarpal's time.

ईस्वी 9-10 शताब्दि में जब अरब का सुलेमान नामक यात्री भारत में आया तो उसने भी यहाँ नंगे साधुओं को एक बड़ी संख्या में देखा था। सारांशतः मध्यकालीन हिन्दु काल में दिगम्बर मुनियों का भारत में बाहुल्य था।[140]

In India there are persons, who in accordance with their profession wander in the woods and mountains and ready communicate with the rest of mankind.....some of them go about naked. Sulaiman of Arab Elliot I. P. 6.

मुद्राराक्षस के इस उल्लेख से नन्दकाल में क्षपणक-दिगम्बर मुनियों का निर्बाध बिहार और धर्म प्रचार का समर्थन होता है जैसा कि पहले लिखा जा चुका है।

'वराहमिहिर संहिता' में भी दिगम्बर मुनियों का उल्लेख है। उन्हें वहाँ जिन भगवान का उपासक बताया गया है।[141]

शाक्यान् सर्वहितस्य शांति मनसो नग्नान् जिनानां विदुं।।

वराहमिहिर के इस उल्लेख से उनके समय में दिगम्बर मुनियों का अस्तित्व प्रमाणित होता है। अर्हंत भगवान की मूर्ति को भी वह नग्न ही बताते है।[142]

आजानु लम्बबाहुः श्रीवत्साङ्क प्रशांतमूखतश्च
दिग्वासास्तरुणो रूपवांश्च कार्योऽर्हंता देवः ।।

कवि दण्डिन् (आठवीं श.) अपने "दशकुमारचरित" में दिगम्बर मुनि का उल्लेख 'क्षपणक' नाम से करते है, जिससे उनके समय में नग्न मुनियों का होना प्रमाणित है।[143]

[135]) पूर्व [136]) विको. भा. 7, पृ. 192 [137]) विको. भा. 8, पृ. 680 [138]) राइ. भा. 1, पृ. 363 [139]) मग्राजैस्मा. पृ. 135
[140]) Sulaiman of Arab, Elliot,/.P.6 [141]) वराह मिहिर संहिता 19/61 [142]) वराह मिहिर संहिता 45/58 [143]) वीर, वर्ष 2, पृ. 317

पंचतंत्र (तंत्र 4) का निम्न श्लोक इस काल में दिगम्बर मुनियों के अस्तित्व का द्योतक है।[144]

''स्त्रीमुद्रां मकरध्वजस्य जयिनी सर्वार्थ सम्पत् करी।
ये मूढाः प्रविहाय यान्ति कुधियो मिथ्या फलांवेषिणः।।
ते तेनैव निहत्य निर्दयतरं नग्नीकृता मुण्डिताः।
केचिद्रक्तपटीताश्च चटिलाः कापालिकाश्चापरे।।

''पंचतंत्र के'' अपरीक्षित कारक पंचमतंत्र की कथा दिगम्बर मुनियों से सम्बन्ध रखती है। उससे पाटलिपुत्र (पटना) में दिगम्बर धर्म के अस्तित्व का बोध होता है। कथा में एक नाई को क्षपणक विहार में जाकर जिनेंद्र भगवान की वंदना और प्रदक्षिणा देते लिखा है। उसने, दिगम्बर मुनियों को अपने यहाँ निमंत्रित किया, इस पर उन्होंने आपत्ति की, कि श्रावक होकर यह क्या कहते हो ? ब्राह्मणों की तरह यहाँ आमंत्रण कैसा ? दिगम्बर मुनि तो आहार-बेला पर घूमते हुए भक्त श्रावक के यहाँ शुद्ध भोजन मिलने पर विधिपूर्वक ग्रहण कर लेते है।[145]

क्षपणक विहारं गत्वा जिनेन्द्रस्य प्रदक्षिणत्रायं विधाय.....भोः श्रावक, धर्मज्ञोऽपि किमेवं वदसि। क वयं ब्रह्मणसमानाः यत्रा आमन्त्राण करोषि। वयं सदैव तत्काल परिचर्ययां भ्रमन्तौ भक्तिभाजं श्रावकमलवलोक्य तस्य गुहे गच्छामः।

इस उल्लेख से दिगम्बर मुनियों के निमंत्रण स्वीकार न करने और आहार के लिए भ्रमण करने के नियम का समर्थन होता है। इस तंत्र में भी दिगम्बर मुनि को एकाकी, गृहत्यागी, पाणिपात्र भोजी और दिगम्बर कहा गया है।

एकाकी गृहसंत्यक्तः, पाणिपात्र दिगम्बरः।

अशोक ने अपने एक स्तम्भ में स्पष्टतः निर्ग्रन्थ साधुओं की रक्षा का आदेश निकाला था।[146]

स्तम्भ लेख नं. 7

That founder of the Mourya Dynasty Chandragupta, as well as his Brahmin Minister Chanakya, were also inclined towards Mahavira is doctrines and ever Ashok is said to have been said towards Buddhism by a previous study of Jain teaching.

उज्जैनी के प्रसिद्ध राजा विक्रमादित्य भी इसी वंश से सम्बन्धित बताये जाते है। वह शैव थे, परंतु इसके उपरांत एक दिगम्बर जैनाचार्य के उपदेश से जैन हो गए थे।[147]

ईस्वी पूर्व प्रथम शताब्दी में एक भारतीय राजा का संबंध रोम के बादशाह आँगस्टस से था। उन्होंने उस बादशाह के लिए भेंट भेजी थी। जो लोग उस भेंट को ले गए थे, उनके साथ भृगुकच्छ (भड़ौच) से एक श्रमणाचार्य (दिगम्बर जैनाचार्य) भी साथ हो लिए थे।

[144]) पंत. निर्णय सागर प्रेस सं. 1902, पृ. 194 व JG. XIV 124
[145]) पंत.पृ.2-6 व JG.XIV 126-130
[146]) E.B. Havell. HARI P. 59
[147]) Allahabad University Studies Pt. II PP. 113-147

वह यूनान पहुँचे थे और वहाँ उनका सम्मान हुआ था। आखिर सल्लेखना व्रत को धारण करके उन्होंने अथेन्स (Athens) में प्राण विसर्जन किये थे। वहाँ उनकी एक निषधिका बनाई गई थी।[148]

In the sune year (25 B.C.) went an Indian embassy with gifts to Augustus, from a King called Purus by some and Pandian by other..... They were accompanied by the man who burnt himself at Athens. He with a smile leapt upon the pyre naked..... On this tomb was this inscription. "Zermano" chegas to the custom of his country lies here Zermanocheges seems to be the Greek rendering of Sramanacharya or Jaina Guru and the self-immolation a variety of Sallekhna.

ईस्वी पूर्व प्रथम शताब्दि में भारत में अपोलो और थामस नामक दो यूनानी तत्वेत्ता आए थे। उनका तत्कालीन दिगम्बर मुनियों के साथ शास्त्रार्थ हुआ था।[149]

Apollonius of Tyana travelled with Damus born about 4 B.C. he came to explore the wonders of India..... He was a phythararian-philosopher and met Iarchas at Taxilla and disputed with Indian Gymaosophists. (Nirgrathas)

सारांशतः उस समय भी दिगम्बर मुनि इतने महत्वशाली थे कि वे विदेशियों का भी ध्यान आकृष्ट करने में समर्थ थे।

मिलिन्दपण्ह में कहा गया है कि पाँच सौ यूनानियों ने राजा मनेन्द्र से भगवान के निग्रन्थ धर्म द्वारा मनस्तुष्टि करने का आग्रह किया था और मनेन्द्र ने उनका यह आग्रह स्वीकार किया था।[150]

अन्ततः वह जैन धर्म में दीक्षित हो गया था और उसके राज्य में अहिंसा धर्म की प्रधानता हो गई थी।[151]

राजा अजेस (Azes I) के समय में तक्षशिला में जैन धर्म उन्नति पर था। उस समय के बने हुये जैन ऋषियों के स्मारक रूप स्तूप आज भी तक्षशिला में भग्नावशेष है।[152]

मथुरा उस समय प्रधान जैन केन्द्र था। अनेक निर्ग्रन्थ साधु वहाँ विचरते थे। उन नग्न साधुओं की पूजा राजपुत्र और राजकन्याएँ तथा साधारण जन समुदाय किया करते थे।[153]

"Another locality in which the Jainas seem to have been farmly established from the middle of the 2nd Century B.C. onwards was Mathura in the old Kingdom of Curasens."

148) IHQ. Vol. II P. 293 149) QJMS. XVIII P.P. 305-306 150) QKM. P. 8 151) वीर, वर्ष 2 पृ. 446-449
152) AGT. PP. 76-80 153) XV CHI. I. P. 167 & see JOAM

16. प्राचीन राज्य–राजवंश एवं दिगम्बर जैन मुनि

देश के विभिन्न राज्य एवं राजवंशों में दिगम्बर मुनियों का काफी वर्णन मिलता है किन्तु हम यहाँ उनको अतिसंक्षेप में ही देखने का प्रयास करेंगे।

शिशुनाग वंश काल–1) महाराजा नंद ने राजगृही पर पंचस्तूप बनवाये, जैन कथा कोष के अनुसार उन्होंने दिगम्बर जैन मुनि दीक्षा ली।

"Sir G. Grierson informs me that the Nandas were reputed to be bitter enemies of the Brahman's.... the Nandas were Jaina and therefore hatfuls to the Brahman's the suposition that the last Nanda was either a Jaina or Buddhist is strengthened by the face that on from of the local tradition attributed to him the erection of the Panch Pahari at Patna a Group of ancient Stupas which be either Jaina or Buddhist."[154]

शकटाल के पुत्र स्थूलभद्र ने भी दिगम्बर दीक्षा ली थी।[155]

II नंद वंश काल–1) जम्बूस्वामी केवली हुए।

In Kotikapur Jambu attained emancipation(Omniscience)[156]

2) विद्युतचर आदि मुनियों की ही स्मृति में मथुरा में 500 स्तूप बनवाये गये।

अथ विद्युच्चरो नाम्ना पर्यटन्निह सन्मुनिः
एकादशांग विद्याया मधीतो विदधत्तपः
अथान्यद्युः सनिः संगो मुनि पंचशतैर्वृतः
मथुरायां महाद्यान–प्रदेशेष्व गमन्मुदा
तदागच्छस वैलक्ष्यं भानु रस्ताचलं श्रितः। इत्यादि[157]

3) सम्राट सिकंदर जब भारत आया तो तक्षशिला पर उसने दिगम्बर मुनियों की भारी प्रशंसा सुनी, उसने अंतकृतश नामक दूत को कल्याण नामक दिगम्बर मुनि के पास भेजा, संपर्क स्थापित कर भक्त हो गया।

Al p-69 (Alexander) despatched One sikritos to them (Gymnosophists) who relates that he found at the distance of 20 stadia from the city (of Taxilla) 15 men standing in different postures. Sitting or lying down naked who did not move from these positions till the evening when they return to the city. The most difficult thing to endure was the heat of the sun etc. Calanus bidding him (Honest) to strip himself. If he desired to hear any of his doctrine.[158]

किन्तु ईरान में मुनिराज की समाधि हो गई, सिकन्दर ने भी जैन विधि से अपनी सल्लेखना की थी।[159]

III मौर्य वंश काल–1) चन्द्रगुप्त मौर्य ने आचार्य भद्रबाहु से दिगम्बर जैन मुनि दीक्षा

[154]) EHI. P. 44 [155]) सातवीं गुजराती साहित्य परिषद् रिपोर्ट (पृ. 41) तथा भद्रबाहु चरित्र (पृष्ठ 41) में स्थूलभद्रादि को दिगम्बर मुनि लिखा है। (रामल्य स्थूलभद्राख्य स्थूलाचार्यादि योगिन) [156]) वीर वर्ष 3 पृ. 37 [157]) अनेकांत वर्ष 1 पृ. 139–141 [158]) Plutarch A.L.P 71 [159]) वीर वर्ष 7 पृ. 176 व 341

ली।

Jaina tradition arers that Chandragupta Maurya was a Jaina and that when a great twelve years famine occured he abdicated accompanied Bhadrabahu the last of the Saints called Srutakvalins, to the South lived as an ascetic at Sravanbelgola in Mysore.[160]

2) भद्रबाहु के 24 हजार दिगम्बर जैन मुनि शिष्य थे।

3) बिंदुसार भी जैन था।

We may conclude that Bindusara followed the faith (Jainism) of his father (Chandragupta) and that in the same belief whatever if may prove to have been his child hood's lesson were first learnt by Ashok.[161]

4) बिंदुसार के पुत्र अशोक ने एक स्तंभ में स्पष्टतः निर्ग्रन्थ साधुओं की रक्षा का स्थाई आदेश लिखवाया था।[162]

VI सुगवंश-1) (आंध्रा) महाराजा पुष्पमित्र सुंग ने कलिंग जिन (मूर्ति) की रक्षा की थी।

2) इसी वंश में महाराजा विक्रमादित्य भी हुए, जो कि शैव मतावलंबी थे। बाद में दिगम्बर जैनाचार्य के उपदेश से वे जैन हो गए थे।[163]

3) इन्हीं के काल में भृगुकच्छ (भड़ौच) से एक दिगम्बर जैनाचार्य यूनान पहुँचे थे वहाँ अथेन्स में उनकी समाधि हो गई थी। उनकी निषद्या (समाधी स्मारक) अभी भी वहाँ है।

They were accompanied by the man who burnt himself at Athens. He with a smile leapt upon the pyre naked...on his tomb was this inscription "Zermano" chegas to the custom of his country, lies here Zermano chegers seems to be the Greek rendering of Sramanacharya or Jaina Guru and the self-immolation a variety of sallekhana.[164]

V यवन वंश काल-बौद्ध ग्रन्थों (मिलिन्द पण्ह) से विदित होता है कि 500 यूनानियों ने राजा मन्नेद्र से भगवान के निर्ग्रन्थ धर्म द्वारा मनस्तुष्टि करने का आग्रह किया था और मन्नेद्र ने उनका आग्रह स्वीकार किया था।[165] अंत में वह भी जैन धर्म में दीक्षित हो गया था।[166]

VI शक वंश-इस वंश में भी कनिष्क, हुविष्क और वासुदेव हुए। उस समय मथुरा जैन केन्द्र बन गया था तथा तब राजपुत्र तथा राजकन्याएँ भी दिगम्बर जैन मुनियों की पूजा-सेवा किया करते थे।

Another locality in which the Jaina's seem to have been formly established from the middle of the 2nd century B.C. onwards was Mathura in the old kingdom of Curasens.[167]

[160]) Sir Vincient Smith, EHI. P. 54 [161]) E. Thomas JRAS.IX. 181
[162]) स्तंभ लेख नं. 7 [163]) Allahabad University Studies Pt. II. PP. 113-147 [164]) IHQ Vol. II P. 293
[165]) QKM. P. 8 [166]) वीर वर्ष 2 पृ. 446-449 [167]) CHI. IP. 167 & see JQAM

VII कलिंग नृप, ऐल, खारवेल–कलिंग राज भगवान ऋषभदेव के धर्मोपदेश से प्रभावित हो, दिगम्बर जैन मुनि हुआ।[168]

राजा दशरथ के 500 पुत्र भी यहीं से मोक्ष को प्राप्त हुए।

जसरह– रायस्स सुआ, पंचसया कलिंग–देसम्मि।

कोडिसिलाए कोडि–मुणी, णिव्वाण–गया णमो तेसिं।।[169]

ऐल खारवेल के बाद उनके पुत्र कुदेप श्री खर मेघमहावाहन कलिंग के राजा हुए थे। वह भी जैन धर्मानुयायी थे।[170]

VIII गुप्त वंश–उस समय दिगम्बर मुनि ग्राम–ग्राम, नगर–नगर में विचरण कर जनता का कल्याण करते थे।

बंगाल में पहाड़ पुर, दिगम्बर संघ का केन्द्र था।[171]

IX राजपूत वंश–कन्नोज के राजा भोज के दरबार में (840–890 ई.) जैनाचार्य वप्पसूरि ने आदर पाया था।[172] मानतुंगाचार्य (भक्तामर) से प्रभावित हो, वे जैन हो गए थे।[173]

X परमार वंश–मालवा के विंध्यवर्मा राजा परमार वंश के थे इनके शासन काल में पं. आशाधर जी ने अनेकों ग्रन्थों की रचना की। मुनि उदयसेन और मुनि मदनकीर्ति आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।[174]

XI चालुक्य, राष्ट्रकूट वंश–गुजरात में सोलंकियों की राजधानी अणहिल पुर पट्टन में अनेकों दिगम्बर मुनि थे।

श्री चन्द्र मुनि ने वहीं ग्रन्थ की रचनाएँ की थीं।[175]

सोलंकी सिद्धराज ने एक वाद सभा बुलाई थी जिसमें कर्नाटक से दिगम्बर जैनाचार्य भी पट्टन आये थे तब सिद्धराज ने उनका भाव–विभोर हो स्वागत किया था।[176]

XII चंदेल वंश–चंदेल राजा मदनवर्मा (1130–1165 ई.) के काल में खजुराहो के मंदिरों का निर्माण हुआ था,[177] उस समय दिगम्बराचार्य श्री नेमीचंद्र का उल्लेख घंटाई मदिर के एक शिलालेख से मिलता है।[178]

---

[168]) हरिवंश पुराण श्लोक.3–7,11 श्लोक25–71
[169]) णिव्वाण कांड गाहा 18
[170])J.BORS. III. P. 505
[171]) IHQ. VII. 441
[172]) रिवंश भाइ. पृ. 108 व दिजै. वर्ष 23 पृ. 84
[173]) भक्तामर कथा. जैप्र. पृ.239
[174]) वीर वर्ष 1 पृ. 637
[175]) वीर. वर्ष 1 पृ. 637
[176]) वीको. भा. 5 पृ. 105
[177]) वीको भा. 7 पृ. 192
[178]) वीको. भा. 7 पृ. 680
[179])राइ. भा. 1 पृ. 363

17. कलिंग (बंगाल) में दिगम्बर जैन मुनि

शिशुनाग वंश में कुणिक अजातशत्रु के उपरांत कोई पराक्रमी राजा नहीं हुआ और मगध साम्राज्य की बागडोर नन्द वंश के राजाओं के हाथ में आ गई। इस वंश में 'वर्द्धन' उपाधिकारी राजा नन्द विशेष प्रख्यात और प्रतापी था। उसने दक्षिण-पूर्व और पश्चिमीय समुद्र तटवर्ती देश जीत लिए थे तथा उत्तर में हिमालय प्रदेश और कश्मीर एवं अवंति और कलिंग देश को भी उसने अपने आधीन कर लिया था।[180] कलिंग विजय में वह वहाँ से 'कलिंगजिन' नामक एक प्राचीन मूर्ति ले आया था और उसे विनय के साथ उसने अपनी राजधानी पाटलीपुत्र में स्थापित किया था। उसके इस कार्य से नन्दवर्द्धन का जैन धर्मावलम्बी होना स्पष्ट है।

जैन कथा ग्रन्थों से विदित है कि एक नन्द राजा स्वयं दिगम्बर जैन मुनि हो गए थे तथा उनके मंत्री शकटाल भी जैनी थे।

नन्दराज नीतानि कालिंग-जिनम्संनिवेसं .....गहरतनान
पड़िहारेहिअड़गमागावसवु नयाति (12वीं पंक्ति)
''सुकति-समण-सुविहितानुं च सतादिसानुं जनितम् तपसिइसिनं संधियनं अरहत निसीदिया समीपे पभरे वरकारू सुमुथनपतिहि अनेक योजनाहि ताहि प सि ओ सिलाहि सिंहपथ-रानि सिधुडाय निसयानि घण्टा (अ) क (तो) चतरे वेडूरियगभे थंभे पतिठापयति''। (15-16 पंक्ति)

हाथी गुफा शिलालेख

कलिंग देश में पहले तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के एक पुत्र ने पहले राज्य किया था। जब सर्वज्ञ होकर तीर्थंकर ऋषभ ने आर्यखण्ड में विहार किया तो वह कलिंग भी पहुँचे थे। उनके धर्मोपदेश से प्रभावित होकर तत्कालीन कलिंगराजा अपने पुत्र को राज्य देकर मुनि हो गए थे।[181]

राजा दशरथ तथा यशधर के पुत्र पाँच सौ साथियों सहित दिगम्बर मुनि होकर कलिंग देश से ही मुक्त हुए थे तथा वह पवित्र कोटिशिला भी उसी कलिंग देश में है जिसको श्री राम-लक्ष्मण ने उठाकर अपना बाहुबल प्रकट किया था और जिस पर से एक करोड़ दिगम्बर मुनि निर्वाण को प्राप्त हुए थे।

जसरह रायस्स सुआ, पंचसया कलिंग देसम्मि।
कोडिसिलाए कोडि मुणी, णिव्वाण गया णमो तेसिं।[182]

दक्षिण कौशलवर्ती चेदिराज के वंश के एक महापुरुष ने कलिंग पर अधिकार जमा लिया था।[183] ईस्वी पूर्व द्वितीय शताब्दि में इस देश में खारवेल नामक राजा अपने भुजविक्रम, प्रताप और धर्म-कार्य के लिए प्रसिद्ध था। यह जैन धर्म का दृढ़ उपासक था। उसने सारे भारत की दिग्विजय की थी। वह मगध के सुंग वंशी राजा को हराकर कलिंग-

180) Ibid Vol. 78-79
181) हरि. पु. श्लो-3-7, 11 श्लो. 25-71
182) णि. कां. गाहा-18
183) JBORS. Vol. III, PP. 434-484

'जिन' नामक अर्हत्-मूर्ति को वापिस कलिंग ले आया था। दिगम्बर मुनियों की वह भक्ति और विनय करता था। उन्होंने उनके लिए बहुत से कार्य किये थे। कुमारी पर्वत पर अर्हंत भगवान की निषद्या के निकट उन्होंने एक उन्नत जिन प्रसाद बनवाया था तथा पचहत्तर लाख मुद्राओं को व्यय करके उस पर वैड्र्य रत्नजड़ित स्तम्भ खड़े करवाए थे। उनकी रानी ने भी जैन मंदिर तथा मुनियों के लिए गुफाएँ बनवाई थी, जो अब तक मौजूद है और भी न जाने उन्होंने दिगम्बर मुनियों के लिए क्या-क्या नहीं किया था।

कलिंग में इस समय दिगम्बर जैन धर्म प्रधान पद ग्रहण किए हुए था। ह्वेनसांग कहता है कि वहाँ सबसे अधिक संख्या निर्ग्रन्थ लोगों की है।[184]

इस समय कलिंग में सैनवंश के राजा राज्य कर रहे थे जिनका जैन धर्म से सम्बन्ध होना बहुत कुछ संभव है।[185]

बंगाल :- बंगाल में पहाड़पुर स्थान दिगम्बर जैन संघ का केन्द्र था। वहाँ के दिगम्बर मुनि प्रसिद्ध थे।[186]

वह लिखता है कि पुण्ड्रावर्धन (बंगाल) में था। कई सौ देवमंदिर है जिनमें अनेक सम्प्रदायों के विरुद्ध धर्मावलम्बी उपासना करते है। अधिक संख्या निर्ग्रन्थ लोगों (दिगम्बर मुनियों) की है।[187]

समतट (पूर्वी बंगाल) में भी उसने अनेक दिगम्बर साधु पाए थे वह लिखता है ''दिगम्बर साधु'' जिनको निर्ग्रन्थ कहते है, बहुत बड़ी संख्या में पाए जाते है।[188]

खण्डगिरी के शिलालेखों में उल्लेख है कि-

''अरहन्तपसादायम् कलिंगानम् समनानं लेनं करितम् राज्ञो लालक सहर्थासा हसपपोतस् धुतुना कलिंग चक्रवर्तिनो श्री खारवेल आगमहिसिना कारितम्''

भावार्थ : अर्हंत के प्रासाद या मंदिर रूप यह गुफा कलिंग देश के श्रमणों (दिगम्बर मुनियों) के लिए कलिंग चक्रवर्ती राजा खारवेल की मुख्य पटरानी ने निर्मित कराई, जो हथीसहस के पौत्र लालकस की पुत्री थी।[189]

खण्डगिरि की 'तत्त्व गुफा' पर जो लेख है वह बालमुनि का लिखा हुआ है।[189]

'अनंत गुफा' में लेख है कि दोहद के दिगम्बर मुनियों श्रमणों की गुफा (दोहदा समनानम् लेनम्)

खण्डगिरि-उदयगिरि पर जो मूर्तियाँ हैं, वे प्राचीन और नग्न है और उनसे दिगम्बरत्व तथा दिगम्बर मुनियों के अस्तित्व का पोषण होता है। वह दिगम्बर मुनियों का मान्य तीर्थ है।

भगवान महावीर सर्वज्ञ होकर जब कलिंग पहुँचे तो वहाँ के जितशत्रु नामक राजा दिगम्बर मुनि हो गए और भी अनेक दिगम्बर मुनि हुए थे।[191]

184) हुभा....पृ 545 185) वीर, वर्ष 4, पृ 328-332 186) IHQ VII, 441 187) हुभा. पृ. 526 188) हुभा. पृ. 533
189) JOAM.... Plate No. 28 190) वीर, वर्ष 4, पृ. 310 191) हरि. पु. (कलकत्ता संस्करण) पृ.623

18. कर्नाटक और तमिलनाडु में दिगम्बर जैन मुनि

कर्नाटक और तमिलनाडु में भी दिगम्बर मुनियों के अनेकों स्थानों पर विहार पथ एवं साधना केन्द्रों के प्रबल प्रमाण मिलते हैं। तथा तत्कालीन वेदों के राजाओं ने भी उनकी भक्ति के फल को व तिरस्कार के फल को साक्षात् अनुभव किया। इसे भी हम देखने का एक लघु प्रयास करेंगे।

सबसे प्राचीन पुरातत्वीय प्रमाण अंतिम श्रुत केवली भद्रबाहु का मिलता है। भद्रबाहु जी ने भी संघ सहित देश-देशांतर में विहार किया था और वह उज्जैनी पहुँचे थे। वहीं से उन्होंने दक्षिण देश की ओर संघ सहित विहार किया था, क्योंकि उन्हें मालूम हो गया था कि उत्तरापथ में एक द्वादश वर्षीय विकराल दुष्काल पड़ने वाला है, जिसमें मुनिचर्या का पालन दुष्कर होगा।[192] सम्राट चन्द्रगुप्त ने भी इसी समय अपने पुत्र को राज्य देकर भद्रबाहु स्वामी के निकट जिन दीक्षा धारण की थी और वह अन्य दिगम्बर मुनियों के साथ दक्षिण भारत को चले गए थे।[193] श्रवणबेलगोला के कटवप्र नामक पर्वत पर चंद्रगुप्त ने विस्मयकारी तपस्या व गुरुभक्ति की, तथा वहीं उनका समाधि मरण हुआ था। इसलिए उन्हीं के कारण वह पर्वत ''चन्द्रगिरि'' के नाम से प्रसिद्ध हो गया है।[194]

श्री अजितसेनाचार्य और नेमीचंद्राचार्य यहाँ के अनेकों राजाओं के गुरु थे। चामुण्डराय जी के कारण इन राजाओं के द्वारा जैन धर्म की विशेष उन्नति हुई थी और यहाँ दिगम्बर मुनियों का सर्वत्र आनंदमयी विहार होता था।[195]

मैसूर के होयसाल वंश के राजागण भी दिगम्बर मुनियों के आश्रय दाता परम भक्त थे। इसकी स्थापना के विषय में कहा जाता है कि साल नाम का एक व्यक्ति एक मंदिर में एक जैन यति के पास विद्याभ्यास कर रहा था, उस समय एक शेर ने उन साधु पर आक्रमण किया। साल ने शेर को मारकर उनकी रक्षा की और वह 'होयसाल' नाम से प्रसिद्ध हुआ था।[196] तदुपरांत उन्हीं जैन साधु का आशीर्वाद पाकर उसने अपने राज्य की नींव जमाई थी, जो खूब फला-फूला था। इस वंश के सब लोग जैन थे।[197] होयसाल राजा के गुरु विनयादित्य थे और उनके गुरु दिगम्बर साधु श्री शांति देव मुनि थे।[198] इन राजाओं में बिट्टिदेव अथवा विष्णुवर्धन राजा प्रसिद्ध था, वह भी जैन धर्म का दृढ़ श्रद्धानी था, किन्तु बाद में वह परिवर्तित हो गया था। उसकी रानी शांतलादेवी प्रसिद्ध दिगम्बराचार्य श्री प्रभाचन्द्र की शिष्या थी।[199]

सुना जाता है कि बिट्टिदेव (विष्णुवर्धन) राजा की दो रानी थी-एक जैन, दूसरी हिन्दू। जैन रानी शांतलादेवी अनेक नृत्यकला में निष्णात थी, जिससे राजा उस पर अधिक प्रसन्न रहता था। इस बात से दूसरी रानी को बड़ा दुःख होता था। एक दिन उसने एक उपाय खोज लिया और जब महाराज बिट्टिदेव उसके पास आए तो रानी ने विलंब से आने का कारण पूछा। तो महाराज बिट्टिदेव ने कहा कि मैं आज किन्हीं दिगम्बर मुनि के दर्शनार्थ गया था, इसलिए विलंब हो गया।

[192]) भद्र. पृ. 27-51 [193]) Sir Vincient Smith, EHI P. 54 [194]) Narasimhachar's Sravanabelagola P. 25-40 विको. भा. 7, पृ. 156-157 तथा जैशिसं भूमिका पृ. 54-70 [195]) वीर वर्ष 7, अंक 1-2 [196]) SSIJ. Pt. I. P 115 [197]) मजैस्मा. पृ. 156-157 [198]) SSIJ. Pt. I. P. 115 [199]) Ibid. P. 116

यह सुन रानी ने कटाक्ष करते हुए कहा कि महाराज आप जिन मुनि के इतने भक्त हो किन्तु वे तो आप से आहार तक नहीं लेते हैं, कैसे वे आपके गुरु हैं! राजा ने कहा–नहीं महारानी, ऐसा नहीं हो सकता। रानी ने कहा–नहीं ऐसा ही हैं वे नहीं लेंगे। राजा को बहुत पारे पर चढ़ा दिया गया, जिससे राजा ने कहा–यदि वे हमारे हाथ से आहार नहीं लेंगे तो मैं वह धर्म छोड़ दूँगा। आपसी चर्चा ने बहुत तूल पकड़ लिया, महारानी चाहती भी ऐसा ही थी।

कुछ समय पश्चात् एक मुनिराज आहारार्थ आये। राजा बिट्टिदेव ने उन्हें ससम्मान (नवधा भक्ति से) पड़गाहा और आहार देना चाहा, किन्तु राजा बिट्टिदेव की छः अंगुली थी। कोई कहते है, कि उनकी अंगुली तो पाँच ही थी, किन्तु युद्ध में एक अंगुली कट गई थी। चूँकि दिगम्बर मुनिजन कम या अधिक अंग–उपांग वालों से आहार नहीं लेते अतः उन्होंने उनसे आहार नहीं लिया। राजा ने कुछ प्रयास भी किया, किन्तु मुनिराज ने अपनी प्रतिज्ञाओं में किंचित् भी शिथिलता नहीं लाई और वे अंतराय कर चले गये। जिससे राजा रूष्ट हो गया और वह हिन्दू महारानी के गुरु रामचंद्राचार्य की शरण में पहुँच लिंगायत हो गया।

इससे विदित होता है कि कर्नाटक में मुनिगण रहते थे और वे अपने नियम, संयम में अत्यंत दृढ़ रहते थे। उन्हें राजा–महाराजाओं व धर्म विद्रोह का भी डर नहीं रहता था।

विजयनगर साम्राज्य की स्थापना, आर्य सभ्यता और संस्कृति की रक्षा के लिए हुई थी। वह हिन्दू संगठन का एक आदर्श था। शैव, वैष्णव, जैन–सब ही कंधे से कंधा जुटाकर धर्म और देश रक्षा के कार्य में लगे हुए थे। स्वयं विजयनगर सम्राटों में हरिहर द्वितीय और राजकुमार उग दिगम्बर जैन धर्म में दीक्षित होकर दिगम्बर मुनियों के महान आश्रय दाता हुए थे।[200] दिगम्बर मुनि श्री धर्मभूषण जी राजा देवराय के गुरु थे तथा आचार्य विद्यानंदि ने देवराज और कृष्णराय नामक राजाओं के दरबार में वाद किया था, तथा विलंगी और कारकल में दिगम्बर धर्म की रक्षा की थी।[201]

प्रसिद्ध मुसलमान शासक हैदर अली ने श्रवणबेलगोल की नग्न देवमूर्ति श्री गोमट देव के लिए कई गाँवों की जागीर भेंट की थी।[202]

सत्रहवीं शताब्दि में भट्टाकलंक देव नामक दिगम्बराचार्य, हदुवल्ली जैन मठ के गुरु के शिष्य और महावादी थे। उन्होंने सर्वसाधारण में वाद करके जैन धर्म की रक्षा की थी। वह संस्कृत और कन्नड़ के विद्वान तथा छह भाषाओं के ज्ञाता थे।[203] जैन रानी भेरवदेवी ने मणिपुर का नाम बदलकर इनकी स्मृति में 'भट्टाकलंकपुर' रखा था–वही आजकल का भटकल है।[204] श्री कृष्णराय और अच्युतराय राजा के सम्मुख श्री दिगम्बर मुनि नेमीचंद्र ने वाद किया था।[205]

पुण्डी (उत्तर अर्काट) के तीसरे ऋषभदेव के मंदिर के विषय में कहा जाता है कि

200) SSIJ. Pt. P. 118 201) मजैस्मा. पृ. 163 202) AR. Vol I.X 267 & SI.J.Pt.I.P.117
203) HKI. P. 83 204) वृजैश. भा. 1 पृ. 10 205) मजैस्मा. पृ. 163

पण्डाईवेडू राजा की लड़की को भूतबाधा सताती थी। उसी समय कुछ शिकारियों के पास एक दिगम्बर मुनि ने श्री ऋषभदेव की मूर्ति देखी। मुनि जी ने वह मूर्ति ले ली। इन्हीं शिकारियों ने राजा से मुनि जी की प्रशंसा की। उस पर राजा ने मुनि जी की वंदना की और उनसे भूतबाधा दूर करने का अनुरोध किया। मुनि जी ने लड़की की भूतबाधा दूर कर दी। राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने उक्त मंदिर बनवाया।[206]

अंग ज्ञान के ज्ञाता दिगम्बराचार्यों के उपरांत जैन संघ में श्रीकुंदकुंदाचार्य का नाम प्रसिद्ध है। दिगम्बर जैनों में उनकी मान्यता विशेष है। वह महातपस्वी और बड़े ज्ञानी थे। दक्षिण भारत के अधिवासी होने पर भी उन्होंने गिरनार पर्वत पर जाकर श्वेताम्बरों से वाद किया था।[207] तमिल साहित्य का नीति ग्रन्थ कुरल उन्हीं की रचना थी।[208] उन और उन्हीं के समान अन्य दिगम्बराचार्यों के विषय में प्रो. रामास्वामी अय्यंगार लिखते हैं-

"First comes Yatindra Kunda, a great Jain/Guru who in order to show that both within and without he could not be assisted by Rajas moved about leaving a space of four inches between himself and the earth under his feet. Uma swami, the compiler of tattvarth sutra, Griddhapinchha Charya, and his disciple. Balakapinchha follow. Then comes Samantabhadra, ever fortunate, whose discourse lights up the place of the three worlds filled with the all meaning Syadvada. This Samantabhadra was the first of a series of celebrated Digambara writers who acquired considerable predominance, in the early Rashtrakuta period.

Jain tradition assigns him Saka 60 or 138 A.D..... He was a great Jaina missionary who tried to spread far and wide Jaina doctrines and morals and that he met with no opposition from other seets wherever he went, Samantbhadra's appearance in South India marks an epoch not only in the annals of Digambara tradition, but also in the history of Sanskrit literature..... After Samanthbadra a large number of Jain Munis took up the work of proselytism. The more important of them have contributed much for the uplilt of the Jain world in literature and secular affairs. There was, for example Simhanandi, the Jain sage, who according to tradition founded the state of Gangavadi. Other names are those of Pujyapada the author of the incomparable grammar, Jinendra Vyakarana and of Akalanka, who in 788 A.D., is believed to have confuted the Buddhists at the court of Himaitala in Kanchi and there by procured the expulsion of the Buddhists from South India".[209]

भावार्थ : पहले ही महान जैन गुरु यतींद्र कुन्द का नाम मिलता है जो राजाओं के प्रति निस्पृहता दिखाते हुए अधर चलते थे। 'तत्वार्थ सूत्र' के कर्त्ता उमास्वामी गृद्धपिच्छ और

[206]) दिजैडा पृ. 857 [207]) दिजैडा पृ. 765 [208]) SSIJ. PP. 40-45 & 89 [209]) SSIJ Pt I. PP. 29-31

उनके शिष्य बलाकपिच्छ उनके बाद आते हैं। तब समंतभद्र का नाम दृष्टि में पड़ता है जो सदा भाग्यवान रहे और जिनकी स्याद्वाद वाणी तीन लोक को प्रकाशमान करती थी। यह समंतभद्र प्रारंभिक राष्ट्रकूल काल के अनेक प्रसिद्ध दिगम्बर मुनियों में सर्व प्रथम थे। उनका समय जैन मतानुसार सन् 138 ई. है। यह महान जैन (धर्म) प्रचारक थे, जिन्होंने चहुँओर जैन सिद्धांत और शिक्षा का प्रचार किया और उन्हें कहीं भी किसी विधर्मी संप्रदाय के विरोध को सहन न करना पड़ा। उनका प्रादुर्भाव दक्षिण भारत के दिगम्बर जैन इतिहास के लिए ही युग प्रवर्तक नहीं है, बल्कि उससे संस्कृत साहित्य में एक महान परिवर्तन हुआ था।

समंतभद्र के बाद बहुसंख्यक जैन साधुओं ने अजैनों को जैनी बनाने का कार्य किया था। उनमें से प्रसिद्ध जैन साधुओं ने संसार को साहित्य और राष्ट्रीय अपेक्षा उन्नत बनाया था। उदाहरणतः जैनाचार्य सिंहनंदि ने गंगवाडी का राज्य स्थापित कराया था। अन्य आचार्यों में पूज्यपाद, जिनकी अद्वितीय रचना ''जिनेन्द्र व्याकरण'' है और अकलंक देव हैं जिन्होंने कांची के हिमशीतल राजा के दरबार में बौद्धों को वाद में परास्त करके उन्हें दक्षिण भारत से निकलवा दिया था।''

तमिल साहित्य के मुख्य और प्राचीन लेखक दिगम्बर जैन विद्वान रहे हैं और उसका सर्व प्राचीन व्याकरण ग्रंथ ''तोल्काप्पियम'' (Tolkappiyam) एक जैनाचार्य की रचना है।[210] किंतु हम यहाँ पर तमिल साहित्य के जैनों के द्वारा रचे हुये अंग को नहीं छूएँगे। हमें तो जैनेतर तमिल साहित्य में दिगम्बर मुनियों के वर्णन को प्रकट करना इष्ट है।

अच्छा तो, तमिल साहित्य का सर्व प्राचीन समय ''संगम कला'' अर्थात् ईस्वी पूर्व दूसरी शताब्दि से ईस्वी पाँचवीं शताब्दि तक का समय है। इस काल की रचनाओं में बौद्ध विद्वान द्वारा रचित काव्य ''मणिमेखलै'' प्रसिद्ध है। ''मणिमेखलै'' में दिगम्बर मुनियों और उनके सिद्धांतों तथा मठों का अच्छा खासा वर्णन है। जैन दर्शन को इस काव्य में दो भागों में विभक्त किया गया है--(1) आजीविक (2) निर्ग्रन्थ।[211] आजीविक भगवान महावीर के समय में एक स्वतंत्र संप्रदाय था, किन्तु उपरांत काल में वह दिगम्बर जैन संप्रदाय में समाविष्ट हो गया था। निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय को 'अरूहन' (अर्हत्) का अनुयायी लिखा है, जो जैनों का द्योतक है। इसके पत्र में सेठ कोवलन् की पत्नी कण्णकि के पिता मानाइकन् के विषय में लिखा है कि ''जब उसने अपने दामाद के मारे जाने के समाचार सुने तो उसे अत्यंत दुःख और खेद हुआ और वह जैन संघ में नंगा मुनि हो गया।[212] इस काव्य से यह भी प्रकट है कि चोल और पांड्य राजाओं ने जैन धर्म को अपनाया था।[213]

''मणिमेखलै'' के वर्णन से प्रकट है कि ''निर्ग्रन्थगण ग्रामों के बाहर शीतल मठों में रहते थे। इन मठों की दीवारें बहुत ऊँची और लाल रंग से रंगी हुई होती थीं। प्रत्येक मठ के साथ एक छोटा सा बगीचा भी होता था। उनके मंदिर, तिराहों और चौराहों पर अवस्थित थे। जैनों ने अपने प्लेटफार्म भी बना रखे थे, जिन पर से निर्ग्रंथाचार्य अपने सिद्धांतों का प्रचार

[210]) SSIJ.Pt. I.P...P. 89 [211]) BS.P. 15 [212]) Ibid. P. 681 [213]) SSIJ. Pt. I.P.47

करते थे। जैन साधुओं (भट्टारकों) के मठों के साथ-साथ जैन साध्वियों के आश्रम भी होते थे। जैन साध्वियों का प्रभाव तमिल महिला समाज पर विशेष था।

कावेरीप्पूमपहिनम् जो चोल राजाओं की राजधानी थी, वहाँ और कावेरी तट पर स्थित उदयपुर में जैनों के मठ थे। मदुरई जैन धर्म का मुख्य केन्द्र था। सेठ कोवलन् और उनकी पत्नी कण्णकि जब मथुरा को जा रहे थे, तो रास्ते में एक जैन आर्यिका ने उन्हें किसी जीव को पीड़ा न पहुँचाने के लिए सावधान किया था, क्योंकि मदुरई में निर्ग्रन्थों द्वारा यह महान पाप करार दिया गया था। यह निर्ग्रन्थ गण तीन छत्र युक्त और अशोक वृक्ष के तले बैठाये गये। ये अर्हत् भगवान की दैदीप्यमान मूर्ति की विनय करते थे। यह सब जैन दिगम्बर थे, उक्त काव्य के वर्णन से स्पष्ट है। पुहर में जब इन्द्रोत्सव मनाया गया, तब वहाँ के राजा ने सब धर्मों के आचार्यों को वाद और धर्मोपदेश करने के लिए बुलाया था। दिगम्बर मुनि इस अवसर पर बड़ी संख्या में पहुँचे थे और उनके धर्मोपदेश से अनेकानेक तमिल स्त्री-पुरुष जैन धर्म में दीक्षित हुए थे।[214]

''मणिमेखलै'' काव्य में उसकी मुख्य पात्र मणिमेखला एक निर्ग्रन्थ साधु से जैन धर्म के सिद्धांतों के विषय में जिज्ञासा करती भी बताई गई है।[215] तथा इस काव्य से एवं अन्य वर्णन से स्पष्ट है कि ईस्वी की प्रारम्भिक शताब्दियों में तमिल देश में दिगम्बर मुनियों की एक बड़ी संख्या मौजूद थी और तमिल लोग देश में विशेष मान्य और प्रभावशाली थे।

शैव और वैष्णव सम्प्रदायों के तमिल साहित्य में भी दिगम्बर मुनियों का वर्णन मिलता है। शैवों के 'पेरियपुण्णम्' नामक ग्रन्थ में मूर्ति नायनार के वर्णन में लिखा है कि कलभ्रवंश के क्षत्रीय जैसे ही दक्षिण भारत में पहुँचे। वैसे ही उन्होंने दिगम्बर जैन धर्म को अपना लिया। उस समय दिगम्बर जैनों की संख्या वहाँ अत्यधिक थी और उनके आचार्यों का प्रभाव कलभ्रों पर विशेष था।[216]

''सिद्धत्तम् कैफियत'' देसम्मि (Siddhavattam Kaiphiyat) से प्रकट है[217] कि वरंगल के जैन राजा उदार प्रकृति थे। वे दिगम्बरों के साथ-साथ अन्य धर्मों को भी आश्रय देते थे। 'वरंगल कैफयत'' से प्रकट है कि[218] वहाँ वृषभाचार्य नामक दिगम्बर मुनि विशेष प्रभावशाली थे।

तमिल जैन काव्य ''नालदियार'', जो ईस्वी पाँचवीं शताब्दि की रचना है, इस बात का प्रमाण है कि पांड्यराज का देश प्राचीन काल में दिगम्बर मुनियों का भक्त था। ''नालदियार'' की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कहा जाता है कि एक बार उत्तर भारत में दुर्भिक्ष पड़ा। उससे बचने के लिए आठ हजार दिगम्बर मुनियों का संघ पांड्यदेश में जा रहा था,

[214]) SSIJ...1. PP. 60-66 [215]) तिरूमलै-BS. P. 692 [216]) SSIJ. Pt. I. PP. 68-70 [217]) Ibid. P. 17
[218])Ibid. P. 18

पांड्यराजा उनकी विद्वत्ता और तपस्या को देखकर उनका भक्त बन गया। जब अच्छे दिन आए तो इस संघ ने उत्तर भारत की ओर लौट जाना चाहा, किन्तु पांड्यराजा उनकी सत्संगति छोड़ने के लिए तैयार न थे। आखिर में उस मुनि संघ के प्रत्येक मुनि एक-एक श्लोक अपने-अपने आसन पर लिखा छोड़कर विहार कर गये। जब ये श्लोक एकत्र किए गए तो वह संग्रह एक अच्छा खासा काव्य ग्रंथ बन गया। यही 'नालदियार' था।[219] इससे स्पष्ट है कि पांड्यदेश उस समय दिगम्बर जैन धर्म का केन्द्र था और पांड्यराजा कलभ्रवंश के सम्राट थे। यह कलभ्रवंश उत्तर भारत से दक्षिण में पहुँचा था और इस वंश के राजा दिगम्बर मुनियों के भक्त और रक्षक थे।[220] चालुक्य राजा गोविंद तृतीय ने दिगम्बर मुनि अर्ककीर्ति का सम्मान किया और दान दिया था। वह मुनि ज्योतिष विद्या में निपुण थे।[221] वेंगिराज चालुक्य विजयादित्य के[222] गुरु दिगम्बराचार्य अर्हन्नन्दि थे। इन आचार्य की शिष्या चामेकाम्बा के कहने पर राजा ने दान दिया था।[223] सारांश यह है कि चालुक्य राज्य में दिगम्बर मुनियों और विद्वानों ने निरापद हो धर्मोद्योत किया था।

उसने स्वयं राज-पाट त्याग कर दिगम्बर मुनि का व्रत स्वीकार किया था। 'रत्नमालिका' में अमोघवर्ष ने इस बात को इन शब्दों में स्वीकार किया है-

''विवेकात्यक्तराज्येन राज्ञेयं रत्नमालिका।
रचिताऽमोघवर्षण सुधियाँ सदलङ् कृतिः।।''

उसका रचा हुआ 'रत्नमालिका' एक प्रसिद्ध सुभाषित ग्रंथ है। उसके गुरु दिगम्बराचार्य श्री जिनसेन थे, जैसे कि ''उत्तरपुराण'' की प्रशस्ति के निम्न श्लोक नं-9 में कहा गया है कि वे श्री जिनसेन के चरणों में नतमस्तक होते थे-

''यस्यप्रांशुनखांशुजाल-विसरद्धारान्तराविर्भव-
त्पादाम्भोजरजः पिशंगमुकुटप्रत्यग्ररत्नद्युतिः।
संस्मर्ता स्वममोघवर्षनृपतिः पूतोऽहमद्येत्यलं,
स श्रीमाञ्जिनसेनपूज्यभगवत्पादो जगन्मंगलम्।।''

अर्थात्-''जिन श्री जिनसेन के दैदीप्यमान नखों के किरण समूह से फैलती हुई धारा बहती थी और उनके भीतर जो उनके चरण कमल की शोभा को धारण करते थे। उनकी रज से जब राजा अमोघवर्ष के मुकुट के ऊपर लगे हुए रत्नों की कांति पीली पड़ जाती थी तब वह राजा अमोघवर्ष आपको पवित्र मानता था और अपनी उसी अवस्था का सदा स्मरण किया करता था, ऐसे श्रीमान् पूज्यपाद भगवान श्री जिनसेनाचार्य सदा संसार का मंगल करें।''

अमोघवर्ष के राज्यकाल में एकांत पक्ष का नाश होकर स्याद्वाद मत की विशेष उन्नति हुई थी। इसीलिए दिगम्बराचार्य श्री महावीर ''गणितसारसंग्रह'' में उनके राज्य की वृद्धि की

219) SSIJ. P. 91 220) मजैस्मा. भूमिका पृ. 8-9 221) ADJB. P. 97 [ofodks-Hkk-5] iw-76A
222) ADJB. P. 68 223) SSIJ.Pt.PP. 111-112

भावना करते हैं।

"विध्वस्तैकान्तपक्षस्य स्याद्वाद्वन्यायवादिनः।
देवस्य नृपतुङ्गस्य वर्द्धतां तस्य शासनं ।। 6 ।।"

किन्तु इन राजा के बाद राष्ट्रकूट राज्य की शक्ति छिन्न-भिन्न होने लगी थी। यह बात गंगवाडी के जैन धर्मानुयायी गंगराजा नरसिंह को सहन नहीं हुई। उन्होंने तत्कालीन राठौर राजा की सहायता की थी और राठौर राजा इन्द्र चतुर्थ को पुनः राज्य सिंहासन पर बैठाया था। राजा इन्द्र दिगम्बर जैन धर्म का अनुयायी था और उसने सल्लेखना व्रत धारण किया था।[224]

इस समय गंगवाडी के गंगराजाओं ने जैनोत्कर्ष के लिए खास प्रयत्न किया था। रायमहल सत्यवाक्य और उनके पूर्वज मारसिंह के मंत्री और सेनापति ने दिगम्बर जैन धर्मानुयायी वीर मार्तण्ड राजा चामुण्डराय थे। इस राजवंश की राजकुमारी पनिबव्वे ने आर्यिका के व्रत धारण किए थे।[225]

दक्षिण भारत के ग्राम्य कथा साहित्य में एक कहानी है, उससे प्रकट है कि "वरंगल के काकतीयवंशी एक राजा के पास ऐसी खड़ाऊँ थी, जिनको पहनकर वह उड़ सकता था और रोज बनारस में जाकर गंगा स्नान कर आता था। किसी को भी इसका पता न चलता था। एक रात उसकी रानी ने देखा कि राजा नहीं है। वह जैन धर्म परायण थी। उसने अपने गुरुओं से राजा के संबंध में पूछा। जैन गुरु ज्योतिष के विशेष विद्वान थे, उन्होंने राजा का सब पता बता दिया। राजा जब लौटा तो रानी ने उसको बताया कि वह कहाँ गया और प्रार्थना की, कि वह उसे भी बनारस ले जाया करे। राजा ने स्वीकार कर लिया। वह रानी भी बनारस जाने लगी। एक रोज मार्ग में वह मासिक धर्म से हो गई। फलतः खड़ाऊँ की वह विशेषता नष्ट हो गई। राजा को उस पर बड़ा दुःख हुआ और उसने जैनों को कष्ट देना प्रारम्भ कर दिया।[226]

[224]) SSIJ. Pt. I. P. 112 [225]) मजैस्मा. पृ. 150 [226]) SSIJ. Pt.II. PP.27-28

19. दिगम्बर जैन मुनि और पुरातत्व

दिगम्बर जैन मुनि विषयक पुरातत्त्वीय अनेकों सामग्री का शताब्दी बाई शताब्दी का उल्लेख आज भी सम्पूर्ण भारत के विभिन्न प्रांतों में व विदेशों में उपलब्ध है जिनसे दिगम्बर मुनियों की साधना विहार एवं महिमा के साथ भारतीय लोगों की उन पर गहरी श्रद्धा एवं भक्ति के दर्शन होते हैं यहाँ पर ग्रन्थ विस्तार के भय से हम मात्र नामोल्लेख ही करना चाहते है विशेष जिज्ञासु जन दिगम्बरत्व और दिगम्बर जैन मुनि, जैन धर्म का प्राचीन इतिहास व भगवान महावीर व उनकी आचार्य परंपरा आदि ग्रंथों को पढ़े। वर्तमान में सबसे प्राचीन पुरातत्व प्रायः सिन्धु घाटी, मोहनजोदड़ों से प्राप्त सामग्री को ही माना जाता है।

(पाकिस्तान) मोहनजोदडों व हड़प्पा– 5,000 वर्ष पूर्व के सिन्धु घाटी से प्राप्त अवशेषों में कुछ ऐसी भी मुहरें हैं जो नग्न दिगम्बर जैन मुनि/तीर्थंकर की हैं ऐसा माडर्न रिल्यू ने अगस्त 1932 पृ. 150-160 में सिद्ध किया है। जिसका समर्थन प्रो. चंदा, डॉ. प्राणनाथ, डॉ. राजा कुनद मुखर्जी, श्री रामधारी सिंह दिनकर, डॉ. एल.एम. शर्मा ने किया है।

सम्राट अशोक के द्वारा लिखित दिगम्बर मुनि की रक्षा एवं विकास विषयक शिलालेख उपलब्ध हैं।

(आ.प्र.) खण्डगिरि-उदयगिरि– ईस्वी पूर्व दूसरी शताब्दी में हुए जैन सम्राट खारवेल द्वारा निर्मित हाथी गुफा के शिलालेख में दिगम्बर मुनियों का वर्णन है। जो उनकी ही पटरानी ने निर्मित कराई थी।

(उ.प्र.) अहिच्छत्र (मथुरा)– ईस्वी पूर्व प्रथम शताब्दी के एक स्तूप में दिगम्बर जैन मुनियों की पिच्छी कमंडल सहित मूर्ति है।

(उ.प्र.) अहिच्छत्र (बरेली)– प्रथम शताब्दी के कटारी खेड़ा की खुदायी में निकले समूचे जैन मंदिर को डॉ. फुहर साहब ने सन् 16 से 152 घोषित किया है। तथा स्तूप पर लिखा हुआ इन्द्रनंदी आचार्य का नाम दिगम्बर मुनि के अस्तित्व को बताता है।

(उ.प्र.) कौशाम्बी– यहाँ कुषाण कालीन आयागपट्ट में आचार्य शिवनंदी व उनकी शिष्याओं का नाम उल्लेख है।

(उ.प्र.) कुहाऊ गोरखपुर– यहाँ के गुप्तकालीन संवत 141 के दिगम्बर जैन मुनियों की प्रतिमाएँ एवं प्रशस्ति में उनके नाम उल्लेख हैं।

(बिहार) राजगृह– यहाँ पर भी गुप्तकालीन अनेक दिगम्बर जैन मूर्तियाँ एवं शिलालेख मौजूद हैं।

बंगाल– यहाँ गुप्तकालीन संवत 159 (सन्.479) के ताम्रलेख में दिगम्बराचार्य गुहनंदी का नाम उल्लेख है।

तमिलनाडु– पोन्नूरमलय, तिरुमलय, वनवासी, कुन्दकुन्दाद्रि आदि स्थानों में ईस्वी पूर्व तीसरी शताब्दी के निर्मित दिगम्बर जैन मुनियों हेतु गुफाएँ, शय्याएँ, मूर्तियाँ, चरणचिन्ह आदि है।

(कर्नाटक) श्रवणबेलगोला– यहाँ शक संवत् 522 के शिलालेख में श्रुतकेवली भद्रबाहु एवं मौर्य सम्राट चंद्रगुप्त का वर्णन है।

शक संवत् 622 में मौनि दिगम्बर गुरु व नागमती जी का उल्लेख है। इसी प्रकार चरितमुनि धर्मसेन, बलदेव, पट्टनीगुरु, उग्रसेन गुरु, गुणसेन पेरुभलू, उल्लिकल तीर्थटद, कुलापक आदि दिगम्बर जैन मुनियों का वर्णन है।

शक संवत् 666 के शिलालेख में अजितसेनाचार्य जी का नाम उल्लेखित है। शक संवत् 1085 के शिलालेख में तार्किक चक्रवर्ती देवकीर्ति मुनि, लख्यनंदी माघवेन्दु का नाम उल्लेखित है।

(म.प्र.) उदयगिरि (भेलसा–विदिशा)– यहाँ पाँचवीं शताब्दी में दिगम्बर जैन मुनियों के लिए निर्मित गुफाएँ एवं शिलालेख हैं।

(महा.) अजंता की गुफाएँ (खानदेश)– यहाँ सातवीं शताब्दी में निर्मित गुफा नं. 13 एवं 33 है जिसमें दिगम्बर मुनियों के शिला चित्र हैं।

(कर्ना.) बादामी गुफा– लक्ष्मेश्वर (धारवाड़) की बसदि शक संवत् 665 (सातवीं शताब्दी) के शिलालेख में दिगम्बर मुनियों के नाम उल्लेख हैं।

(महा.) एलोरा– यहाँ आठवीं शताब्दी में दिगम्बर मुनियों के लिए बनायी गई अनेकों गुफाएँ हैं। इन्द्रसभा गुफा, जगन्नाथ सभा गुफा, छोटा कैलास आदि गुफाओं में तो मुनियों के शिलाचित्र एवं शिलालेख भी हैं।

(कर्ना.) सौंदत्ति–बेलगाँव– यहाँ आठवीं शताब्दी के शिलालेख में आचार्य श्री मूल गुणकीर्ति, इन्द्रकीर्ति आदि के नाम उल्लेख हैं।

राठौर– यहाँ आठवीं शताब्दी सन् 813 के ताम्र पत्र में दिगम्बर मुनि विजयकीर्ति कुलाचार्य एवं मुनि अर्ककीर्ति का नाम उल्लेख है।

मान्यखेट– सन् 860 के ताम्र पत्र में दिगम्बर मुनि श्री देवेन्द्र मुनि का नाम उल्लेख है।

(कर्ना.) मूधलगुंड–धारवाड़– यहाँ के 9वीं–10वीं शताब्दी के शिलालेख में दिगम्बराचार्य श्री कनकसेन, वीरसेन का नाम उल्लेख है।

दसवीं शताब्दी के एक शिलालेख में दिगम्बराचार्य बाहुबली वैय्याकरण का नाम उल्लेख है। जिनके उपदेश से चौथे राट्टयशांत ने तथा उनकी पत्नी निजकब्बे ने दिगम्बर जैन मंदिर के लिए 150–150 मत्तर भूमि प्रदान की थी।

(कर्ना.) सुदी–धारवाड़– यहाँ 10वीं शताब्दी के शिलालेख में गंगवंशीय राजकुमार गुटुक व उसकी स्त्री दिवलम्बा के द्वारा दिगम्बर मुनियों को जिनेन्द्र भक्ति हेतु

दिगम्बर मंदिर दान किया था।

(महा.) कोल्हापुर– यहाँ के म्यूजियम में स्थित दसवीं शताब्दी के शिलालेख में मुनि कुमार कार्तिकेय का नाम उल्लेख है।

शिलाहार– यहाँ 1065 के शिलालेख में दिगम्बराचार्य माघनंदी, सिद्धांतदेव माणिक्यनंदी का उल्लेख है।

बचमनी– यहाँ के शक 1073 के शिलालेख में कुलचंद्र मुनि, माघनंदी सिद्धांतदेव एवं अरहनंदी सिद्धांतदेव का नाम उल्लेख है।

(कर्ना.) आरटाल–धारवाड़– दसवीं शताब्दी के 1048 के शिलालेख में दिगम्बर मुनि श्री कनकचंद्र जी का नाम उल्लेख है।

(म.प्र.) खजुराहो– यहाँ 10वीं शताब्दी (संवत् 1011) के शिलालेख में पाहिल के गुरु बासवचंद्र मुनि का नाम उल्लेख है।

(म.प्र.) ग्वालियर– यहाँ दूबकुंड से प्राप्त संवत् 1088 के शिलालेख में दिगम्बर मुनियों के नाम उल्लेखितहैं।

(राज.) झालरापाटन– यहाँ संवत् 1066 के शिलालेख में नेमिदेवाचार्य एवं बलदेवाचार्य का नाम उल्लेखितहैं।

(उ.प्र.) देवगढ़– यहाँ के 11वीं शताब्दी के शिलालेख में शुभदेव नामक मुनि का उल्लेख है, वहीं 1209 के शिलालेख में आर्यिका धर्मेश्वरी का नाम उल्लेखित है। संवत् 1224 के शिलालेख में पंडित मुनि का नाम उल्लेख है। संवत् 1207 के शिलालेख में अनेकों मुनियों व आर्यिकाओं के नाम उल्लेखित हैं।

(राज.) बिजौलिया (मेवाड़)– यहाँ के मंदिर में तथा मानस्तंभ में मुनियों के प्रतिबिम्ब एवं चरणचिन्ह हैं। दो मुनि स्वाध्याय करते हुए पिच्छी कमंडल सहित अंकित हैं। अन्य शिलालेखों में अन्य मुनियों के नाम भी उल्लिखित हैं।

(कर्ना.) कौन्नूर (बेलगाम)– यहाँ के संवत् 1009 के शिलालेख में भी जैन मुनियों का नामोल्लेख है।

(कर्ना.) कलहोले ग्राम (बेलगाम)– यहाँ के पुरातत्व में भी अनेकों जैन मुनियों का वर्णन मिलता है।

(कर्ना.) रायबाग ग्राम (बेलगाम)– 1124 शताब्दी के शिलालेखों से भी राष्ट्रराजा कार्तिकेय के मुनि भक्ति का उल्लेख मिलता है।

(कर्ना.) बीजापुर– यहाँ के किला के संवत् 1001 के शिलालेखों में दिगम्बर मुनियों के उल्लेख हैं।

(म.प्र.) तेवरी–यहाँ के 12 शताब्दी के पुरातत्व में भी दिगम्बर मुनियों का उल्लेख मिलता है।

दिल्ली–नया मंदिर, तलघर में स्थित 15वीं शताब्दी के मूर्ति में विमलसेन मुनि तथा आर्यिका गुरुश्री एवं आ. विमल श्री का नाम उल्लेख है।

(उ.प्र.) लखनऊ– चौकमंदिर में विराजमान (सं. 1503) आदिनाथ भगवान की मूर्ति की प्रशस्ति में निर्ग्रन्थाचार्य सकलकीर्ति एवं विमलकीर्ति का नाम उल्लेख है।

बंगाल– चावलपट्टी के जैन मंदिर में स्थित सोलहवीं शताब्दी के (1586) दस धर्म यंत्र में आचाय रत्नकीर्ति एवं मुनि सकलकीर्ति का नाम उल्लेख है।

(पं. बंगाल) कलकत्ता– यहाँ के जैन मंदिर के सोलहवीं शताब्दी (संवत् 1634) में प्रतिष्ठित सम्यग्ज्ञान यंत्र की प्रशस्ति में आचार्य धर्मचन्द्रजी के शिष्य मुनि बाहुनंदी का नाम उल्लेख है।

कुरावली/मैनपुरी– यहाँ के जैन मंदिर में संवत् 1578 में प्रतिष्ठित सम्यक्दर्शन यंत्र में मुनि विशाल कीर्ति का नाम उल्लेख है।

(बिहार) पटना– यहाँ हरकचन्द्र जी के जैन मंदिर में संवत् 1964 की बनी एक दिगम्बर जैन मुनि की काष्ठप्रतिमा है।

(कर्ना.) श्रवणबेलगोला– यहाँ संवत् 1022 (नं. 55) के शिलालेख में आचार्य गोपनंदी महाराज का वर्णन है जिन्होंने गंग नरेश की सभा में धूरजटी को पराजित किया था एवं सांख्य, बौद्ध, चार्वाक, जेमिनी, लोकायत आदि मत को हीनप्रभ किया था।

शक संवत् 1068 के शिलालेख में आचार्य शुभकीर्ति का नाम उल्लेखित है जिन्होंने बौद्ध, मीमांसक आदि को परास्त किया था। इसी शिलालेख में प्रभाचंद्राचार्य की शिष्या विष्णुवर्धन नरेश की पटरानी शांतला देवी की भी गुरुभक्ति का वर्णन मिलता है।

शक संवत् 1099 के शिलालेख में मंत्री नागदेव के गुरु दिगम्बर मुनि नयकीर्ति योगेन्द्र का एवं उनकी गुरु परम्परा का उल्लेख है।

शक संवत् 1045 में होयसाल गंगनरेश विष्णुवर्द्धन ने अपने गुरु दिगम्बर जैन मुनि शुभचंद्र देव की समाधि स्थल का निर्माण कराया था। इसी शिलालेख में इनकी भावज जवाकण्णवे का मुनियों के प्रति दान सत्कार का वर्णन मिलता है।

शक संवत् 1037 के लेख में मुनि त्रैकाल्य योगी के तप का वर्णन मिलता है।

शक संवत् 1044 के लेख में दंडनायक गंगराज की धर्म पत्नी लक्ष्मीमति शुभचंद्राचार्य की भक्त थी।

शक संवत् 1205 (नं. 129) में होयसार वंश के राजगुरु दिगम्बर मुनि महामंडलाचार्य माघनंदी का उल्लेख मिलता है तथा बेलगोल का भी नामोल्लेख है।

सन् 1478 में जिन्जी प्रदेश के दिगम्बराचार्य वीरसेन का उल्लेख है जिन्होंने लिंगायत प्रचारकों के समक्ष बाद में विजय प्राप्त की थी।

सन् 1530 के शिलालेख में श्रीरंगनगर के शासक के विधर्मी होने पर जैन साधु

विद्यानंदी द्वारा उसे पुनः जैन धर्म में स्थापित करने का उल्लेख मिलता है। इसी शिलालेख में मुनि विद्यानंदी द्वारा राजा नंददेव, राजा सातवेन्द्र केशरी, राजा नरसिंह, राजा भैरव, राजा कृष्णरम की सभा में वाद में विजय का उल्लेख मिलता है।

दिगम्बर संत महातपस्वी श्री महासेन ने बादशाह अलाउद्दीन के राज दरबार में षट्दर्शनवादियों से शास्त्रार्थ में विजय पायी और दिगम्बरत्व की अखंड ध्वजा भारत वर्ष की राजधानी दिल्ली में आरोपित की थी।

सन् 1530 के शिलालेख में आचार्य सिंहनंदी द्वारा दिल्ली के बादशाह महमूद सूरिताण की सभा में बौद्ध व अन्यों को वाद में हराने का उल्लेख मिलता है।

सन् 1489 के शिलालेख में हूमस मठ के गुरु श्री विशालकीर्ति द्वारा सिकंदर बादशाह के समक्ष प्रभावशाली वाद का उल्लेख मिलता है।

तत्कालीन दिगम्बर मुनियों में संवत् 1667 में दिगम्बर मुनि श्री सकलचंद्र जी विद्यमान रहे, सं. 1680 के मैनपुरी स्थित शास्त्रभंडार के गुटके में मुनि महेंद्रसागर का उल्लेख मिला। इसी प्रकार संवत् 1719 में अकबराबाद में मुनि श्री वैराग्यसेन, सं. 1783 में ढूढारि देश में गुरु देवेन्द्रकीर्ति, सं. 1757 में कुंडलपुर में मुनि श्री गुणसागर व मुनि श्री यशकीर्ति एवं संवत् 1799 में मुनि महेन्द्रकीर्ति जी का उल्लेख मिलता है।

ब्रिटिश शासन काल के दौरान सं. 1870 में ढाका शहर में श्री नरसिंह नामक मुनि, इटावा के आसपास मुनि विनयसागर व उनके शिष्यगण, जैनबद्री में तपस्वी मुनि श्री चंद्रकीर्ति जी महाराज का उल्लेख मिलता है।

सन् 1921 में उदयपुर (राजपुताना) में दिगम्बर संत श्री आनंद सागर जी का उल्लेख मिलता है।

(कर्नाटक) कादम्ब देवगिरि (धारवाड़)– यहाँ पाँचवीं शताब्दी के ताम्रपत्र में दिगम्बर मुनियों की सेवार्थ महाराजा श्री कृपणवर्मा के पुत्र राजकुमार देववर्मा ने खेत दान में दिया है ऐसा उल्लेख है (तद्विषयक तीन लेख हैं)।

सन् 1866 में आचार्य श्री आदिसागर जी का जन्म अंकलीग्राम में हुआ। आपने सन् 1913 कुंथलगिरि में जिन साक्षी में निर्ग्रन्थ मुनि दीक्षा ली थी, आप कठोर तपस्वी थे। 7 दिन बाद एक बार आहार जल लेते थे तथा आहार में एक ही वस्तु लेते थे, यह क्रम जीवनांत तक चला था। सन् 1915 में आपको जयसिंगपुर पंचकल्याणक के अवसर पर आचार्य पद दिया गया था। आपके अनेकों शिष्यों में मुनि महावीर कीर्ति जी अत्यन्त प्रभावक शिष्य हुये, आचार्य आदिसागर जी ने जीवनांतबेला में सन् 1944 में 14 दिन की यम सल्लेखना के साथ उदगाँव में समाधि पूर्वक वीर मरण किया था। बीसवीं सदी की यह प्रथम विधिवत् तथा प्रभावक सल्लेखना की विधि का आपने ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत किया था। समाधि मरण के पूर्व आपने अपना आचार्य पद मुनि श्री महावीर कीर्ति जी को घोषित

कर प्रदान किया था।

सन् 1910 में आचार्य महावीर कीर्ति जी महाराज का जन्म फिरोजाबाद में हुआ था। आपने सन् 1942 में आचार्य आदिसागर जी से मुनि दीक्षा ले गुरु सेवा का अपूर्व लाभ लिया था, फलस्वरूप आपको आचार्य आदिसागर जी ने समाधि के कुछ दिन पूर्व ही सन् 1943 में अपना आचार्य पद प्रदान किया था, तथा दो वर्ष बाद शेडवाल में आपको धूमधाम से आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। आप 18 भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान थे। मंत्र-तंत्र के साधक दिव्य शक्ति सम्पन्न संत थे, आपने अनेकों प्रभावक मुनि-आर्यिका दीक्षाएँ दीं, अनेकों शिष्यों को न्याय, व्याकरण, आगम, सिद्धांत के क्लिष्टतम ग्रंथों की शिक्षा दी, तथा त्याग-तप, साधना में निष्णात किया। आप कठोर साधक परीषहोपसर्ग जयी तथा ध्यान योगी संत थे। आपने अपने जीवनांत बेला में तीन दिन पूर्व आगम में वर्णित संघ संचालनार्थ पाँच सुयोग्य शिष्यों को आचार्य, उपाध्याय, गणधर, स्थविर, प्रवर्तक तथा गणिनी पद की स्थापना की थी।

आचार्य, उपाध्याय पद मुनि सन्मति सागर जी को, गणधर पद मुनि कुंथुसागर जी को, स्थविर पद मुनि श्री संभव सागर जी को, प्रवर्तक पद मुनि श्री नमि सागर जी तथा गणिनी पद आर्यिका विजयमति माताजी को दे सन् 1972 में महसाणा में विधिवत् समाधि हुई।

सन् 1915 में परम पूज्य आचार्य श्री विमल सागर जी ने कोसमा ग्राम में जन्म लिया था। आपकी मुनि दीक्षा पूज्य आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी के द्वारा सन् 1952 में हुई थी तथा टुण्डला में सन् 1960 में आचार्य पद प्राप्त हुआ था, आप वात्सल्य एवं करूणा की मूर्ति थे, तथा मंत्र-तंत्र एवं निमित्त ज्ञान के प्रकाण्ड विद्वान ही नहीं, किंतु साधक एवं सिद्ध पुरुष थे। आपने अनेकों भक्तों को दीक्षाएँ दीं, एवं अपने सुयोग्य साधुओं को आचार्य पद दिया तथा अनेकों तीर्थ क्षेत्रों का जीर्णोद्धार कराया तथा जीवनान्त बेला में तीर्थराज सम्मेदशिखर जी पर सल्लेखना समाधि मरण किया। आपके आचार्य पद पर उपाध्याय भरत सागर जी को प्रतिष्ठापित किया गया। सम्मेदशिखर जी में आचार्य श्री विमल सागर जी की समाधि स्मारक भी दर्शनीय बनी है।

सन् 1938 में परम पूज्य तपस्वी सम्राट आचार्य सन्मति सागर जी का जन्म फफोतू (एटा) में हुआ था। आपने 1962 में परम पूज्य आचार्य श्री विमल सागर जी से मुनि दीक्षा ली थी। सन् 1972 में आचार्य महावीर कीर्ति जी ने अपनी समाधि के 3 दिन पूर्व आचार्य व उपाध्याय पद दिया था। आप वर्तमान के सभी आचार्यों में उत्कृष्ट तपस्वी संत हैं। आपका लगभग 40 वर्षों से सम्पूर्ण अनाज का त्याग है, अनेकों वर्षों से छहों रसों का, मेवा, हरे फल, सब्जी आदि का त्याग है, 1 आहार, 1 उपवास आपकी सहज चर्या है।

चातुर्मास में तो अधिकांशतः लगातार 2,3,4,15 तक उपवास करते हैं, अष्टान्हिका के 8 उपवास, पर्यूषण पर्व के 10 उपवास करते हैं। अनेकों व्रतों के साथ अत्यन्त क्लिष्टतम सिंहनिष्क्रीड़ित व्रत किये हैं, वर्तमान में लगभग 4 वर्ष से मात्र छाछ (मट्ठा) एवं जल ले रहे हैं।

20. देश-विदेश के विद्वानों की दृष्टि में दिगम्बर जैन मुनि

पुरातत्व में भी अनेक शिलालेख आदि में भी दिगम्बर जैन मुनि का उल्लेख मिलता है। देश-विदेश के विभिन्न राजनेताओं ने भी दिगम्बर मुनि की भूरी-भूरी प्रशंसा की है। यथा-

शिलालेखीय साक्षी भी इसी बात को पुष्ट करती है, कदम्ब वंशी महाराज श्री विजय शिव मृगेश वर्मा ने अपने एक ताम्र पत्र में अर्हन्त् भगवान और श्वेतांबर महाश्रमण संघ तथा निर्ग्रन्थ अर्थात् दिगम्बर महाश्रमण संघ के उपयोग के लिए कालवंग नामक ग्राम को भेंट में देने का उल्लेख किया है।[227]

कदम्बनां श्री विजय शिव मृगेशं वर्मा कालवंग ग्रामं त्रिधा विभाज्य दत्तवान् अत्रपूर्व्वमर्हच्छाला परमपुष्कलस्थान निवासिभ्यः भगवर्दहन्महाजिनेन्द्र देवताभ्य एको भागः द्वितीयोर्हत्प्रोक्तसद्धर्मकरण परस्य श्वेतपट महाश्रमण संघोप भोगाय तृतीयो निर्ग्रन्थ महाश्रमण संधोप भोगयेति....।

यह ताम्रपत्र ई. पाँचवीं शताब्दी का है, इससे स्पष्ट है कि, तब के श्वेतांबर भी अपने को निर्ग्रन्थ न कहकर, दिगम्बर संघ को ही निर्ग्रन्थ संघ मानते थे, यदि यह बात न होती तो वह अपने को 'श्वेतपट' और दिगम्बर को 'निर्ग्रन्थ' न लिखाने देते।

कदम्ब ताम्रपत्र के अतिरिक्त विक्रम सं. 1161 का ग्वालियर से मिला एक शिलालेख भी इसी बात का समर्थन करता है, उसमें दिगम्बर जैन यशोदेव को 'निर्ग्रन्थनाथ' अर्थात् दिगम्बर मुनियों के नाम श्री जिनेन्द्र का अनुयायी लिखा है। अतः इससे भी स्पष्ट है कि 'निर्ग्रन्थ' शब्द दिगम्बर मुनि का ही द्योतक है। यथा-

The Gwalior inscrips of Vik. 1161 (1104 A.D.)

"It was composed by a Jaina, Yasodeva, who was an adherent of the digambara or nude sect (Nigranthanatha)"[228]

चीनी यात्री ह्यूनसांग के वर्णन से भी यही प्रकट होता है कि 'निर्ग्रन्थ' का भाव नग्न अर्थात् दिगम्बर मुनि है।

"The Li-hi (Nigranth's) distinguish themselves by leaving their bodies naked and pulling put their hari."[229]

अतः इन सब प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि ''निर्ग्रन्थ'' शब्द का ठीक भाव दिगम्बर (नग्न) मुनि का है।

महात्मा गाँधी कहते हैं कि ''नग्नता मुझे प्रिय है।''

आदर्श अपरिग्रह तो उसी का होगा, जो कर्म से दिगम्बर है, अर्थात् वह पक्षी की भाँति बिना घर के, बिना वस्त्रों के और बिना अन्न के विचरण करेगा। इस अवधूत दशा को तो विरले ही पहुँच सकते हैं।[230]

भर्तृहरि, दिगम्बर मुनि की शांत परिणति (मुद्रा) से प्रभावित हो अपनी भावना को अपने वैराग्य शतक में इन शब्दों में व्यक्त किया है-

'एकाकी निस्पृहःशान्तः, पाणिपात्र दिगम्बरः।

227) जैहि. भा. 14 पृ. 229 228) Catalogue of Archaeological Exhibits in the U.P.P. Museum Lucknow, Pt. I(1915), P.44 229) St. Julien Vienna, P. 224 230) महात्मा गाँधी की ''गाँधी वाणी'' पृ. 92

कदाहं शम्भो ! भविष्यामि, कर्मनिर्मूल नक्षमः ।।58–[231]''

अर्थात् ''हे प्रभो ! वह दिन कब आयेगा जिस दिन मैं स्वतंत्र, निस्पृह, शान्त, पाणिपात्र भोजी, दिगम्बर मुनि बनकर कर्मनाश करने में समर्थ होऊँगा।''

''एक अंग्रेज लेखिका–स्टीवेन्सन ने अपनी पुस्तक–Heart of Jainism में लिखा है''

"Being rid of clothes one is also rid of a lot of other worries. No water is needed in which to wash them. The Nigranthas have forgotten all knowledge of good and evil why should they require clothes to hide their nakedness".

अर्थात् वस्त्रों से विमुक्त होने के कारण मनुष्य के पास अन्य अनेक चिंताएँ नहीं रहती। उसे कपड़े धोने के लिए पानी की भी आवश्यकता नहीं होती। निर्ग्रन्थ लोगों ने (दिगम्बर जैन मुनियों ने) भले–बुरे के भेदभाव को भुला दिया है। भला वे लोग अपनी नग्नता को छिपाने के लिए वस्त्रों को क्यों धारण करें।''[232]

''शरीर का दिगम्बरत्व स्वयं साध्य नहीं, साधन है। उसके द्वारा उत्कृष्ट अहिंसात्मक वृत्ति की उपलब्धि होती है, जो अखण्ड शांति और सर्व सिद्धियों का भण्डार है। आचार्य कुन्द–कुन्द स्वामीकहते हैं–

''णग्गो हि मोक्खमग्गो, सेसा उमग्गया सव्वे।''[233]

''अर्थात् दिगम्बरत्व ही मोक्ष का मार्ग है, शेष सब मार्ग नहीं है।''

दिगम्बर मुनियों का उल्लेख अन्य सम्प्रदायों में भी बहुलता से पाया जाता है।

इस्लाम में त्याग और वैराग्य का महत्वपूर्ण स्थान है, उसमें ऐसे दरवेश हुए हैं, जिन्होंने दिगम्बरत्व की काफी हिमाकत की।

"The higher Saints of Islam called 'Abdals' generally went about perfectly naked", As described by Miss Lucy M. Garnet in her book-Mysticism & Magic in Turkey."[234]

अर्थात् तुर्कीस्तान में 'अब्दल' Abdal नामक दरवेश स्पष्ट नंगे रहकर अपनी साधना में लीन रहते बताये गये है।

यहूदी धर्म की प्रसिद्ध पुस्तक "The Assension of Isaiah" (P-32) में लिखा है कि–

"Who believe in the assension in to heaven with drew settled on the mountain. They were all Prophets (Saints) and they had nothing with them and were naked."[235]

अर्थात् ''वह जो मुक्ति की प्राप्ति में श्रद्धा रखते थे, एकांत में पर्वत पर जा जमे–वे सब संत थे, उनके पास कुछ नहीं था और वे नंगे थे।''

[231]) Stivensen. Heart of Jainism P. 35 [232]) Stivensen. Heart of Jainism P. 35

[233]) सूत्रपाहुड (अष्ट पाहुड) गां. 23 [234]) As mentioned in Nudity of the Jain Saints by P.10 Mr. C.R. Jain (Delhi 1931) [235]) Nudity of the Jain Saints Page-6 by C.R. Jain (Delhi, 1931)

मेगस्थनीज लिखते हैं-

"When Alexander came to India he saw some naked Saints in Taxilla and took one of them with him"[236]

अर्थात् ''जब बादशाह सिकन्दर भारत में आया था, तब उसने तक्षशिला में कुछ दिगम्बर मुनियों के दर्शन किए थे।''

इसी प्रकार प्रो. अय्यंगार ने लिखा है कि-

"The Jain Acharyas by their character, attainments and scholarships command the respect of even Mahammadan sovereigns like Allauddin and Aurangzeb Badshaha."[237]

अर्थात् ''ये जैन आचार्य अपने चरित्र, सिद्धियों और ज्ञान के कारण अलाउद्दीन और औरंगजेब जैसे मुस्लिम बादशाहों के द्वारा वंदित थे।''

स्मिथ ने लिखा है-"Hieun Tsang visited southern India 640 A.D. and describes Malakuts Country."

अर्थात् ''ह्यूनसांग नामक चीनी यात्री ने सन् 640 ईस्वी में दक्षिण भारत को देखा था।'' वह मालकूट देश का वर्णन करते हुए लिखता है कि-

"The nude Jain Saints were present in Multitudes." [238]

अर्थात् ''वहाँ दिगम्बर जैन मुनियों का बहुत बड़ा समुदाय था।''

''प्रकृति की पुकार पर जो लोग ध्यान नहीं देते, उन्हें तरह-तरह के रोग और दुःख घेर लेते हैं, परंतु पवित्र प्राकृतिक जीवन बिताने वाले जंगल के प्राणी रोग मुक्त रहते हैं और मनुष्य के दुर्गुणों और पापाचारों से बचे रहते हैं।''[239]

'असेम्बली' में दिगम्बर मुनिगण के निर्बाध विहार विषयक 'बिल' को उपस्थित कराने के भाव से इस पुस्तक से अंग्रेजी में 'नोट्स' तैयार कराकर माननीय असेम्बली मेम्बरों में वितरण किए गए थे।

दिल में आपकी याद है गुरुवर, आँखों में आपकी तस्वीर।
इस जीवन में हम आपसे मिले, यह हमारी तकदीर।।
दिल की हस्ती विखर गई होती, जख्में रुह भी नासून हो गये होते।
मेरी जिंदगी में जो आप न आते गुरुवर, न जाने हम कहाँ भटक गये होते।
दिल नजर बन जाएगा, गम खुशी हो जाएगी।
आपके आते ही हे गुरुवर, दुनियाँ दूसरी हो जायेगी।।
तेरी तस्वीर लगी है गुरुवर, दिल के इतने पास तक।
तुमको याद रखेंगे गुरुवर, हम अपनी अंतिम श्वांस तक।।
संसार में गुरु कृपा सबसे निराली,
होली यही दशहरा यह ही दिवाली।

[236]) Magasthenes [237]) Prof. Iyengar's Studies in South India Jainism Part 2nd P. 132
[238]) Smith's History of India P.409 [239]) रिटर्न टु नेचर

21. मुनि निंदा, द्वेष एवं तिरस्कार फल विषयक कहानियाँ एवं उपदेश

मुनि निंदा फल– निन्दा व तिरस्कार तो पशु, पक्षी व दीन दरिद्री का भी नहीं करना चाहिए। यहाँ तक कि पापी से भी घृणा नहीं करना चाहिए जैसे कि महात्मा गांधी जी लिखते हैं कि 'पाप से घृणा करो, निंदा व तिरस्कार का फल तिरस्कार, दूसरों को कष्ट देने से कष्ट मिलता है। हमारे जैन शास्त्रों में तो सामान्य लोगों से भी की गई निंदा व तिरस्कार का फल बहुत ही भयानक लिखा है। संक्षेप में इसे भी हम जानने व समझने का एक लघु प्रयास करेंगे।

विनयगुप्त मुनि की निंदा से लक्ष्मीमती को कुष्ट :

द्वारकाधीश महाराजा श्री कृष्ण, भगवान् नेमीनाथ तीर्थंकर के समवशरण में दर्शनार्थ गये वहाँ रुक्मणी ने अपने पूर्व भव पूछे। उत्तर में भगवान नेमीनाथ तीर्थंकर ने बताया, कि हे रुक्मणी ! भरत क्षेत्र के मगध देश में लक्ष्मी नामक ग्राम था। वहाँ सोमदेव नामक ब्राह्मण रहता था सात भव पूर्व तू उसकी पत्नी लक्ष्मीमती थी। वह बहुत सुन्दर और रूपमान थी। अपने रूप का उसे बहुत अभिमान था। इसलिये सदैव दूसरों से घृणा करती थी। एक दिन श्रृंगार कर दर्पण में अपना रूप देख रही थी, उसी समय तप से कृश काय वाले विनय गुप्त नामक एक मुनिराज आहारार्थ जा रहे थे उन्हें देख लक्ष्मीमती ब्राह्मणी ने मुनिराज के शरीर से ग्लानी पूर्वक निंदा की जिससे उसे कुष्ठ रोग हो गया।

मनेर्निन्दातिपापेन सप्ताहाभ्यन्तरे च सा।

क्लिन्नोदुम्बर कुष्ठेन प्रविश्याग्निमगान्मृतिम् ।।[240]

मुनि निन्दा के बहुत भारी पाप से सात दिन के भीतर ही उदुम्बर कुष्ठ से पीड़ित हो गई और इतनी अधिक पीड़ित हुई कि वह अग्नि में प्रवेश कर मर गयी। और मरकर क्रमशः गधी, शूकरी, कुत्ती, पूति, गन्धिका नामक धीवर पुत्री हुई। एक दिन शीतकाल में वट वृक्ष के नीचे अवधिज्ञानी समाधिगुप्त नामक मुनि को देख उसने किसी उपाय से मुनिराज की शीत से रक्षा की प्रातः मुनि ने उसके पूर्व भव को सुनाया जिससे उसने अपने पूर्व कृत कर्मों की निन्दा की आचाम्ल व्रत कर सोलहवें स्वर्ग में देवी हो पश्चातू महाराजा भीष्म की पुत्री रुक्मणी हुई है।

तिरस्कार का फल तिरस्कार–अरिंजय नगर में वन्हिवेग नामक एक विद्याधर राजा था। उसकी रानी का नाम वेगवती था उसके अहिल्या नाम की एक सर्वांग सुंदरी पुत्री थी। जब पुत्री विवाह योग्य हो गई तब उसका स्वंयवर रचा गया जिसमें अनेक विद्याधर राजा आये, जिसमें चंद्रावर्त नरेश आनन्दमाल भी पँहुचे थे, कन्या अहिल्या ने उनके गले में ही वरमाला डाल दी।

यह देख रथनुपुर नरेश सहस्त्रार का पुत्र इन्द्र ईर्षा से रहने लगा। कालान्तर में आनंदमाल

[240]) हरि. पु. 60/30

को वैराग्य हो गया और उन्होंने दिगम्बरी जैन मुनि दीक्षा ले ली, एक दिन वे हंसावती नदी के तट पर स्थित रथावर्त पर्वत पर प्रतिमायोग से तपस्या कर रहे थे। किसी कार्य वश इन्द्र भी वहाँ पहुँच गया और वहाँ आनंदमाल को देख राजा इन्द्र की कोपाग्नि भड़क उठी, जिससे उसने मुनिराज का तिरस्कार किया और रस्सियों से उन्हें कसकर बाँध दिया। फिर भी आनंदमाल नामक मुनि तत्त्वार्थ चिंतन करते हुए निर्विकार रूप से ध्यान में लीन रहे, किन्तु उनके पास बैठे हुए ऋद्धिधारी कल्याण मुनि ने जब इन्द्र के द्वारा आनंदमाल मुनि का तिरस्कार देखा तो उनकी कोपाग्नि भड़क उठी। और उन्होंने कहा कि –

अयं निरपराध : संस्त्वया यन्मुनि पुङ्गवः।

तिरस्कृतस्तदत्यन्तं तिरस्कार मवाप्स्यसि ।।[241]

चूँकि तूने इन निरपराध मुनिराज का तिरस्कार किया है इसलिए तू भी बहुत भारी तिरस्कार को प्राप्त होगा।

इसी बीच इन्द्र की सर्वश्री नामक पटरानी ने मुनिराज से पति भिक्षा मांगी। वह धर्मात्मा थी, मुनि पूजा में परायणा थी उसने अपनी भक्ति से मुनिराज को शांत कर लिया अन्यथा मुनिराज की क्रोधाग्नि को कौन रोक सकता था ? चारण ऋद्धिधारी कल्याण नामक मुनि कहते हैं कि–

लोकत्रयेऽपि तन्नास्ति तपसा यन्न साध्यते।

बलानां हि समस्तानां स्थितं मूर्ध्नि तपोबलम् ।।[242]

तीनों लोकों में ऐसा कोई कार्य नहीं है जो मुनिराजों के तप से सिद्ध नहीं होता , यथार्थ में तप बल, सब बलों में श्रेष्ठ बल है।

न सा त्रिदशनाथस्य शक्तिः कांतिर्द्युतिर्धृतिः।

तपोधनस्य या साधोर्यथाभि मतकारिणः ।।[243]

इच्छानुकूल कार्य करने वाले तपस्वी साधु की जैसी शक्ति कांति, द्युति अथवा धृति होती है वैसी स्वर्ग के देवों को भी संभव नहीं है।

विधाय साधुलोकस्य तिरस्कारं जना महत्।

दुःखमत्र प्रपद्यन्ते तिर्यक्षु नरकेषु च ।।[244]

जो साधुजनों का तिरस्कार करते हैं वे तिर्यंच गति और नरक गति में महान दुःख पाते हैं।

मनसापि हि साधूनां पराभूतिं करोति यः।

तस्य सा परमं दुःखं परत्रेह च यच्छति ।।[245]

जो मनुष्य मन से भी साधुजनों का पराभव करता है वह पराभव उसे परलोक तथा

[241]) प.पु. 13/88 [242]) प.पु. 13/92 [243]) प.पु. 13/93 [294]) प.पु. 13/94 [295]) प.पु. 13/95

इहलोक में परम दुःख देता है।

यस्त्वा क्रोशति निर्ग्रन्थं हन्ति वा क्रूर मानसः।

तत्र किं शक्यते वक्तुं जन्तौ दुष्कृत कर्माणि।।[246]

जो दुष्ट चित्त का धारी मनुष्य निर्ग्रन्थ मुनि को गाली देता है अथवा मारता है उस पापी मनुष्य के विषय में क्या कहा जाए ?

कायेन मनसा वाचा यानि कर्माणि मानवाः।

कुर्वते तानि यच्छन्ति निकचानि फलं ध्रुवम्।।[247]

मनुष्य मन, वचन, काय से जो कर्म करते हैं वे छूटते ही है और प्राणियों को अवश्य ही फल देते है।



महावीर व्यक्ति पर नहीं, व्यक्तित्व पर ध्यान देते हैं। महावीर का धर्म साधन एकत्र करने वालों का नहीं, साधना करने वालों का है। महावीर का धर्म यंत्र-तंत्र का नहीं, मन के मंत्र का धर्म है। महावीर का धर्म नास्ता पर आस्था रखने वालों का नहीं ,मुक्ति से वास्ता रखने वालों का धर्म है। महावीर का धर्म भोगियों का नहीं, योगियों का धर्म है। महावीर का धर्म कटिंग कराने वालों का नहीं, केशलोंच कराने वालों का धर्म है। महावीर का धर्म जि ा का नहीं, जीवन का धर्म है। महावीर का धर्म डनलप के गद्दों पर सोने वालों का नहीं, भूमि शयन करने वालों का धर्म है। महावीर का धर्म बातों के बादशाहों का नहीं, आचरण के शहंशाओं का धर्म हैं। महावीर का धर्म उ ारण का नहीं, आचरण धारण करने वालों का धर्म है। महावीर का धर्म दूरदर्शन का नहीं, दूरदृष्टि वालों का धर्म है।

-इंसान क्यों दुःखी है ? 8

[246]) प.पु. 13/96 [247]) प.पु. 13/97

मुनिनिंदा का फल

किसी एक दिन अंतिक नामक ग्राम से सम्मेदशिखर जी तीर्थक्षेत्र की यात्रा हेतु एक मुनियों का संघ निकला, जिन्हें देख ग्रामवासियों ने अज्ञानतावश मुनि संघ की हँसी की। तब ग्राम के एक कुंभकार ने लोगों को ऐसा करने से रोका और साधु संघ की महिमा बताई व स्तुति की। परिणाम स्वरूप एक दिन ग्राम के किसी एक व्यक्ति ने चोरी की, प्रयास करने पर भी जब पता न लगा तो राजा ने कुपित होकर सारे नगर को घेरा लगाकर जला डाला जिससे प्रायः सभी मरकर कोढ़ी हुए, कुंभकार वैश्य हुआ। पुनः अगले भव में मरकर कोढ़ी जीव गिजाई हुए और वैश्य राजा हुआ। राजा मुनि हो देव हुआ पश्चात् भागीरथ हुआ और वे सभी गिजाई के जीव अनेक भव में भ्रमण कर सगर चक्रवर्ती के पुत्र हुए है।

श्रुतसागर नामक मुनि भागीरथ के पूर्व भव की कहानी कहते हैं कि-

संघस्य निन्दनं कृत्वा मृत्युमेति भवे-भवे।

तेनासौ युगपद् ग्रामो जातः स्तुत्या स्वामीदृशः।।[248]

सम्मेद शिखर जी की वंदना हेतु जाते हुए मुनिसंघ की निंदा कर यह मनुष्य भव-भव में मृत्यु को प्राप्त होता है। इसी पाप से गाँव के सब लोग भी एक साथ मृत्यु को प्राप्त हुए थे और संघ की स्तुति करने से तू इस तरह सम्पन्न तथा दीर्घायु हुआ है।

मुनियों से द्वेष रखने का फल

कनकगिरि (स्वर्णगिरि) पर अनंतबल केवली भगवान ने अपने धर्मोपदेश की श्रृंखला में रावण से कहा कि-

साधूनां द्वेषकाः पापा मिथ्यादर्शन संगताः।

रौद्रध्यान मृता जीवा गच्छंति नरकं ध्रुवम्।।[249]

जो साधु से द्वेष रखते हैं वे पापी हैं, मिथ्यादर्शन से सहित हैं एवं रौद्रध्यान से जिनका मरण होता है वे निश्चय ही नरक में जाते हैं।

कुठारैरसिभिश्चक्रैः करपत्रैर्विदारिताः।

अन्यैश्च विविधैः शास्त्रैस्तीक्ष्ण तुण्डैश्च पक्षिभिः।[250]

जिस देश में अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य व अपरिग्रह नहीं है वह देश भिखभंगा देश है। एक दिन उसकी दशा भिखारी की तरह होगी जबकि इससे विपरीत देश चंगा व चंग रहेगा। पतंग की भांति आकाश की ऊँचाईयों को छुयेगा।

अर्थ और अध्यात्म दोनों परस्पर विरुद्ध हैं। अर्थ के प्रति आस्था संसार है जो जीवन को अनर्थ व अनाथ के कंगार पर खड़ा कर देती है। अध्यात्म के प्रति आस्था उच्चतम सोपान की ओर ले जाती है।

248) प.पु. 5/293 249) प.पु. 14/31 250) प.पु. 14/32

संत तिरस्कार का फल

एक बार उज्जैयनी नरेश अपने महल के धवलगृह पर बैठा हुआ देख रहा था कि नगर के बहुत से प्रतिष्ठित श्रेष्ठी एवं भक्त गण उद्यान की ओर जा रहे, उन्होंने मंत्रियों से इसका कारण पूछा । मंत्रियों ने अकंपनाचार्य आदि 700 दिगम्बर जैन मुनियों के दर्शनार्थ ये लोग जा रहे है ऐसा कहा, यह बात सुन राजा हर्षित हुआ और स्वयं भी मुनि के दर्शनार्थ चलने की बात कही यद्यपि मंत्री धर्म विरोधी थे किन्तु फिर भी राजा पर उनका कोई प्रभाव न पड़ा । उन्होंने उद्यान में पहुँच मुनि संघ के सहर्ष भक्ति भाव से दर्शन किये । लौटते समय मंत्रियों ने श्रुतसागर नामक मुनि से शास्त्रार्थ भी किया किन्तु विद्वान मुनि ने उन्हें पराजित कर दिया, जिससे मंत्रियों के मन में क्रोधाग्नि भड़क उठी और उन्होंने उन्हें उसी रात मारने का षड्यंत्र रचा किन्तु नगरदेवता ने उन्हें कीलित कर दिया प्रातः राजा आदि ने जब मंत्रियों के ये कृत्य देखे तो उन्हें देश निकाला दे दिया ।

मंत्रीगण भटकते हुए हस्तिनापुर पहुँच गये और अपनी कला चातुर्य से वहाँ के राजा पद्म को प्रसन्न कर वहाँ के मंत्री बन गये । पद्म पड़ोसी राजा सिंहबल से परेशान था । अतः मंत्रियों ने उसे बंदी बना दिया जिससे पद्म ने मंत्रियों को मुँहमाँगा वरदान दिया । मंत्रियों ने उसे आवश्यकता पर ले लूँगा ऐसा कहा । कालांतर में वे ही अकंपनाचार्य आदि 700 मुनि भी हस्तिनापुर पहुँचे, जिन्हें देख मंत्रीगण प्रथम तो घबड़ाये पर फिर भी बदला लेने का उचित अवसर जान महाराज पद्म से सात दिन का राज्य माँग मुनियों पर घोर उपसर्ग करना प्रारंभ कर दिया ।

श्रुतसागराचार्य के निर्देशानुसार विक्रियाऋद्धिधारी विष्णु कुमार मुनि (आप पद्म के छोटे भाई थे) ने महाराजा पद्म के पास विक्रिया से उपस्थित हो कहा-

साधोः शीतलशीलस्य तापनं न हि शान्तये ।

गाढतप्तो दहत्येव तोयात्मा विकृतिं गतः ।।[251]

हे पद्म ! शीतल स्वभाव के धारक साधु को संताप पहुँचाना शांति के लिए नहीं है क्योंकि जिस प्रकार अधिक तपाया हुआ पानी विकृत होकर जला ही देता है उसी प्रकार अधिक दुःखी किया हुआ साधु विकृत होकर जला ही देता है-शाप आदि से नष्ट कर सकते है ।

तपः कर्मैकनिष्ठैस्तैः किमनिष्टमनुष्ठितम् ।

वरिष्ठेन त्वया येषु कनिष्ठेनेव यत्कृतम् ।।[252]

अरे ! एक तप रूप कार्य में ही लीन रहने वाले उन (अकम्पनाचार्य आदि 700) मुनियों ने तेरा क्या अनिष्ट कर दिया जिससे तूने उच्च होकर भी नीच की तरह उन पर यह कुकृत्य किया ?

स्वकर्मबन्धभीरुत्वान्नान्यानिष्टं कदाचन ।

तपस्विनो विचेष्टन्ते मनोवाक्कायकर्मभिः ।।[253]

[251]) हरि. पु. 20/37 [252]) हरि. पु. 20/43 [253]) हरि. पु. 20/44

अपने कर्मबंध से भीरु होने के कारण तपस्वी मन, वचन, काय से कभी दूसरे का अनिष्ट नहीं करते।

तदित्थमुपशान्तेषु न ते युक्तं दुरीहितम्।
उपसंहर शान्त्यर्थमुपसर्गं प्रमादजम्।।[254]

इसलिए इस तरह शांत मुनियों के विषय में तुम्हारी यह दुस्चेष्टा उचित नहीं है। यदि शान्ति चाहते हो तो शीघ्र ही इस प्रमादजन्य उपसर्ग का संकोच करो, दूर करो।

साधु की शक्ति :– धीरा : प्रच्छन्नसामर्थ्या गाढावष्टब्धमूर्त्तयः।
साधवोऽपि कदाचित् स्युर्दाहका ननु चाग्निवत्।।[255]

जो धीर–वीर है, जिनकी सामर्थ्य छिपी हुई है और जिन्होंने अपने शरीर को अच्छी तरह वश कर लिया है ऐसे साधु भी कदाचित् अग्नि के समान दाहक हो जाते है।

स्वस्थानच्चलयेदलं गुरुतरान् कामन्दरान्मन्दरां,–
श्चन्द्रार्कानपि पातयेत्कर बलव्यापारतः पारतः।
तोयेशान् विकिरेदुपप्लवयुतान्निर्मुक्तये मुक्तये,
साधुः स्यात् किमु दुष्करं जिन तपःश्री योगिनां योगिनाम्।।[256]

साधु चाहे तो अतिशय विशाल मन्दराचलों को भी स्वेच्छानुसार भय से अपने स्थान से विचलित कर सकता है, हथेलियों के व्यापार से सूर्य और चन्द्रमा को भी आकाश से नीचे गिरा सकता है, उपद्रवों से युक्त लहराते हुए समुद्रों को भी बिखेर सकता है और जो मुक्ति का पात्र नहीं है उसे भी मुक्ति प्राप्त करा सकता है, सो ठीक ही है क्योंकि जिनशासन प्रणीत तपोलक्ष्मी के धारक योगियों के लिए क्या कठिन है ? अर्थात् कुछ भी नहीं।

सर्वेषां यः सुहन्नित्यं सर्वेषां च हिते रतः।
कर्मणा मनसा वाचा स धर्म वेद जाजले।।

–महाभारत

हे जाजले ! उसी ने धर्म को जाना, कि जो कर्म से, मन से और वाणी से सबका हित करने में लगा हुआ है, और जो सभी का नित्य स्नेही है।

धर्म यो बाधते धर्मो न स धर्मः कुधर्मकः।
अविरोधात्तु यो धर्मः स धर्मः सत्यविक्रम।। **–महाभारत**

जो धर्म दूसरे धर्म का बाधक होता हो, वह धर्म नहीं कुधर्म है। सच्चा धर्म वही है, जो किसी दूसरे धर्म का विरोधी न हो।

कायेन संबुता धीरा, अयो वाचाय संबुता।
मनसा संवुतां धीरा, ते वे सुपरि संवुता।। **–धम्मपद**

जो बुद्धिमान मनुष्य शरीर, वचन, मन से संयत हैं, वास्तव में वही सुसंयमी माने जा सकते हैं।

[254]) हरि. पु. 20/45 [255]) हरि. पु. 20/38 [256]) हरि. पु. 20/65

22. मुनि भक्ति स्तुति एवं सेवा के फल विषयक कहानियाँ एवं उपदेश

भगवान ऋषभदेव ने केवलज्ञान प्राप्त करते ही मुनि महिमा को निम्न प्रकार से कहा:-

येऽपि जातस्वरूपाणां परमब्रह्मचारिणाम् ।

स्तुतिं कुर्वंति भावेन तेऽपि धर्ममवाप्नुयुः ।।[257]

जो मनुष्य उत्कृष्ट ब्रह्मचारी दिगम्बर मुनियों की भावपूर्वक स्तुति करते है वे भी धर्म को प्राप्त हो सकते है ।

तेन धर्मप्रभावेण कुगतिं न व्रजन्ति ते ।

लभन्ते बोधिलाभं च मुच्यन्ते येन किल्विषात् ।।[258]

वे उस धर्म के प्रभाव से कुगतियों में नहीं जाते किन्तु उस रत्नत्रयरूपी धर्म को प्राप्त कर लेते है जिसके कि प्रभाव से पापबन्धन से मुक्त हो जाते है ।

भरत चक्रवर्ती के लिए निम्न प्रकार से ऋषभ देव ने मुनि महिमा कही :-

एते हि तृष्णया मुक्ता निर्जितेन्द्रियशत्रवः ।

विधायापि बहून् मासानुपवासं महागुणाः ।।

भिक्षां परगृहे लब्धां निर्दोषां मौनमास्थिताः ।

भुञ्जते प्राणधृत्यर्थं प्राणा धर्मस्य हेतवः ।।[259]

ये मुनि तृष्णा से रहित हैं, इन्होंने इन्द्रियरूपी शत्रुओं को जीत लिया है, तथा महान गुणों के धारक हैं ये एक-दो नहीं ,अनेक महीनों के उपवास करने के बाद भी श्रावकों के घर ही भोजन के लिए जाते है और वहाँ प्राप्त हुई निर्दोष भिक्षा को मौन से खड़े रहकर ग्रहण करते है । उनकी यह प्रवृत्ति रसास्वाद के लिए न होकर केवल प्राणों की रक्षा के लिए ही होती है क्योंकि प्राण धर्म के कारण है ।

धर्म चरन्ति मोक्षार्थं यत्र पीड़ा न विद्यते ।

कथंचिदपि सत्त्वानां सर्वेषां सुखमिच्छताम् ।।[260]

ये मुनि मोक्ष प्राप्ति के लिए उस धर्म का आचरण कर रहे है जिसमें कि सुख की इच्छा रखने वाले समस्त प्राणियों को किसी भी प्रकार की पीड़ा नहीं दी जाती है ।

राजश्रेणिक की गुरुभक्ति :

दूरादेवावतीर्णश्च करेणोश्चरणायनः ।

प्रमोदोत्फुल्लनयनो डुढौके विनयानतः ।।

ततस्तं त्रिपरीत्यासौ प्रणम्य च कृताञ्जलिः ।

दत्ताशीर्गणनाथेन धरायां समुपाविशत् ।।[261]

[257]) प.पु. 4/50 [258]) प.पु. 4/51 [259]) प.पु. 4/96-97
[260]) प.पु. 4/98 [261]) प.पु. 3/14-15

श्रेणिक दूर से ही हस्तिनी से नीचे उतरकर पैदल चलने लगे उनके नेत्र हर्ष से फूल गये, और उनका शरीर विनय से झुक गया वहाँ जाकर उन्होंने तीन प्रदीक्षणाएँ दी, हाथ जोड़कर प्रणाम किया और फिर गणधर स्वामी का आशीर्वाद प्राप्त कर वे पृथ्वी पर बैठ गये।

संजयतकेवली गुरुभक्त थे ऐसा वे एक संदर्भ में स्वयं कहते है :-

वणिग्घितकरो नाम्ना प्रियवादी दयान्वितः।

स्वभावार्जव संपन्नः साधुसेवा परायणः।।[262]

मैं अत्यन्त मधुरभाषी, दयालु,स्वभाव सम्बन्धी सरलता से युक्त तथा साधुओं की सेवा में तत्पर रहता था।

श्रुतसागर मुनि का स्वरूप :-

अथात्र समये प्राप्तस्वदुद्यानं महामुनिः।

अर्थानुगतया युक्तः श्रुतसागर संज्ञया।।[263]

अथानन्तर उसी समय उस वन में श्रुतसागर इस सार्थक नाम को धारण करने वाले एक महामुनिराज वहाँ आये।

पूर्णः परमरूपेण हेपयन् कान्तितो विधुम्।

तिरस्कुर्वन् रविं दीप्त्या जयं स्थैर्येण मन्दरम्।।[264]

श्रुतसागर मुनिराज अत्यंत सुंदर रूप से युक्त थे, वे कांति से चन्द्रमा को लज्जित करते थे, दीप्ति से सूर्य का तिरस्कार करते थे और धैर्य से सुमेरु को पराजित करते थे।

धर्मध्यान प्रसक्तात्मा रागद्वेष विवर्जितः।

भग्नस्त्रिदण्ड संपर्कः कषायाणां शमे रतः।।[265]

उनकी आत्मा सदा धर्म ध्यान में लीन रहती थी, वे राग-द्वेष से रहित थे, उन्होंने मन-वचन-काय की निरर्थक प्रवृत्ति रूपी तीन दण्डों को भग्न कर दिया था, कषायों के शांत करने में वे सदा तत्पर रहते थे।

वशीकर्ता हृषीकाणां षट्काय प्राणि वत्सलः।

भीतिभिः सप्तभिर्मुक्तो मदाष्टक विवर्जितः।।[266]

वे इंद्रियों को वश करने वाले थे, छःहकाय के जीवों से स्नेह रखते थे, सात भयों और आठ मदों से रहित थे।

साक्षादिव शरीरेण धर्मः संबन्धमागतः।

सहितो यतिसंङ्घेन महता चारुचेष्टिना।।[267]

उन्हें देखकर ऐसा जान पड़ता था मानो साक्षात् धर्म ही शरीर के साथ सम्बन्ध को प्राप्त हुआ है। वे मुनिराज उत्तम चेष्टा के धारक बहुत बड़े मुनिसंघ से सहित थे।

[262]) प.पु. 5/36 [263]) प.पु. 5/315 [264]) प.पु. 5/316
[265]) प.पु. 5/317 [266]) प.पु. 5/318 [267]) प.पु. 5/319

स तत्र विपुले शुद्धे भूतले जन्तुवर्जिते ।

उपविष्टस्तनुच्छायास्थगिताशेषदिङ्मुखः ।।[268]

जिन्होंने शरीर की कांति से समस्त दिशाओं के अग्रभाग को आच्छादित कर दिया था ऐसे वे मुनिराज उस उद्यान के विस्तृतः शुद्ध एवं निर्जन्तुक पृथिवीतल पर विराजमान हो गए।

नलनील के ताऊ सूर्यराज मुनि :

नभोवदमलस्वान्तः संगमुक्तः समीरवत् ।

विजहार स निष्क्रोधो धरण्यां मुक्ति लालसः ।।[269]

जिनेन्द्र भगवान ने मुनियों का जैसा चरित्र बतलाया है सूर्यराज वैसे ही चारित्र का आधार था वह शरीर में भी निस्पृह था। उसका हृदय आकाश के समान निर्मल था, वह वायु के समान निःसंग था, क्रोध रहित था और केवल मुक्ति की ही लालसा रखता हुआ पृथ्वी में विहार करता था।

साधु स्तुति :

सम्यग्दर्शनसंशुद्धान् वत्सलः पूजयञ्जनान् ।

प्रणमन् श्रमणान् भक्त्या रूपमात्रश्रितानपि ।।[270]

सम्यग्दर्शन से शुद्ध जनों की बड़े स्नेह से पूजा करता था और जो मात्र जैनमुद्रा को धारण करने वाले थे ऐसे मुनियों को भी भक्तिपूर्वक प्रणाम करता था।

साधोः संगमनाल्लोके न किंचिद् दुर्लभं भवेत् ।

बहुजन्मसु न प्राप्ता बोधिर्येनाधिगम्यते ।।[271]

जो बोधि अनेक जन्मों में भी प्राप्त नहीं हुई वह साधु समागम से प्राप्त हो जाती है इसलिए कहना पड़ता है कि साधुसमागम से संसार में कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं रह जाती।

संदर्भ : गौतम गणधर, राजा श्रेणिक से मुनि महिमा का वर्णन करते है–

स्तोकमपीह न चाद्भुतमस्ति न्यस्य समस्त परिग्रह सङ्गम ।

यत्क्षणतो दुरितस्य विनाशं ध्यानबलाज्जनयन्ति बृहन्तः ।।[272]

इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं है कि बड़े पुरुष समस्त परिग्रह का संग छोड़कर ध्यान के बल से क्षण भर में पापों का नाश कर देते हैं। (अर्थात् अवश्य ही भस्म कर देते है।)

अर्जितमत्युरुकाल विधानादिन्धनराशिमुदारमशेषम् ।

प्राप्य परं क्षणतो महिमानं किं न दहत्यनिलः कणमात्रः ।।[273]

क्या बहुत काल से इकट्ठी की हुई ईन्धन की बड़ी राशि को कणमात्र अग्नि क्षण भर में विशाल महिमा को प्राप्त हो भस्म नहीं कर देती ? (अर्थात् अवश्य ही भस्म कर देते है।)

सहस्त्रबाहु के पिता शतबाहु थे जिन्हें जंघाचारण ऋद्धि प्राप्त थी।

[268]) प.पु. 5/320 [269]) प.पु. 9/19 [270]) प.पु. 11/6 [271]) प.पु. 13/101
[272]) प.पु. 13/111 [273]) प.पु. 13/112

शतबाहुरथ श्रुत्वा सुतं बद्धं निरम्बरः ।
जंघाचारणलब्धीशो महाबाहुर्महातपाः ।।
रजनीपतिवत्कान्तो दीप्तस्तिग्ममरीचिवत् ।
मेरूवत् स्थैर्यसंपन्नो धीरो रत्नालयो यथा ।।
कृतप्रत्यंगकर्माणं सभामध्यसुखस्थितम् ।
प्रशान्तमानसः प्राप रावणं लोकवत्सलः ।।[274]

अथानन्तर सहस्त्र रश्मि के पिता शतबाहु, जो दिगम्बर थे, जिन्हें जंघाचारण ऋद्धि प्राप्त थी, जो महाबाहु, महातपस्वी, चंद्रमा के समान सुंदर, सूर्य के समान तेजस्वी, मेरु के समान स्थिर और समुद्र के समान गंभीर थे, पुत्र को बंधा सुनकर रावण के समीप आये। उस समय रावण अपने शरीर संबंधी कार्यों से निपटकर सभा के बीच में सुख से बैठा था और मुनिराज शतबाहु प्रशांत चित्त एवं लोगों से स्नेह करने वाले थे।

रावण ने जंघाचरण ऋद्धिधारी मुनि की निम्न प्रकार से विनय की :

दूरादेव ततो दृष्टवा मुनिं कैलासकम्पनः ।
अभ्युत्तस्थौ प्रणामं च चक्रे भूमिस्थमस्तकः ।।[275]

रावण, मुनिराज को दूर से ही देखकर खड़ा हो गया। उसने सामने जाकर तथा पृथ्वी पर मस्तक टेककर नमस्कार किया।

वरासनोपविष्टे च यतौ भूमावुपाविशत् ।
करद्वयं समासाद्य विनयानतविग्रहः ।।[276]

जब मुनिराज उत्कृष्ट प्रासुक आसन पर विराजमान हो गए तब रावण पृथ्वी पर दोनों हाथ जोड़कर बैठ गया। उस समय उसका सारा शरीर विनय से नम्रीभूत था।

जगाद चेति भगवन् कृतकृत्यस्य विद्यते ।
न तवागमने हेतुर्विहाय मम पावनम् ।।[277]

रावण ने कहा कि हे भगवन्! आप कृत्कृत्य है अतः मुझे पवित्र करने के सिवाय आपके यहाँ आने में दूसरा कारण नहीं है।

ततः प्रशंसनं कृत्वा, कुलवीर्य विभूतिभिः ।
क्षरन्निवामृतं वाचा, जगादेति दिगम्बरः ।।[278]

तब कुल, वीर्य और विभूति के द्वारा रावण की प्रशंसा कर वचनों से अमृत झराते हुए की तरह मुनिराज कहने लगे कि-

आयुष्मन्निदमस्त्येव, शुभसंकल्पतस्तव ।
नान्तरीयकमेतत्तु, वदामि यदिदं श्रुणु ।।[279]

हे आयुष्मान्! तुम्हारे शुभ संकल्प से यही बात है।

[274]) प.पु. 10/139-141 [275]) प.पु. 10/142 [276]) प.पु. 10/143
[277]) प.पु. 10/144 [278]) प.पु. 10/145 [279]) प.पु. 10/146

अंजना (हनुमान की माता) ने मुनि के दर्शन कर भक्ति, स्तुति की–

अपश्यतां ततः शुद्ध, समामल शिलातले।

पर्यङ्क सुस्थितं साधुं, चारणातिशयान्वितम्।।[280]

तदनन्तर उन्होंने शुद्ध सम और निर्मल शिला तल पर पर्यंकासन से विराजमान चारण ऋद्धि के धारक मुनिराज को देखा।

निभृतोच्छ्वासनिश्वासं, नासिकाग्राहितेक्षणम्।

ऋजुश्लथवपुर्यष्टिं, स्थाणुवच्चलनोज्झितम्।।[281]

उन मुनिराज का श्वासोच्छ्वास निश्चल अथवा नियमित था। उन्होंने अपने नेत्र, नासिका के अग्रभाग पर लगा रखे थे, उनकी शरीरयष्टि शिथिल होने पर सीधी थी और वे स्वयं स्थाणु अर्थात् ठूँठ के समान हलन-चलन से रहित थे।

अङ्कस्थवामपाण्यङ्कन्यस्तान्योत्तानपाणिकम्।

निष्प्रकम्पं नदीनाथगाम्भीर्यस्थितमानसम्।।[282]

उन्होंने अपनी गोद में स्थित वाम हाथ की हथेली पर, दाहिना हाथ उत्तान रूप से रख छोड़ा था, वे स्वयं निश्चल थे और उनका मन समुद्र के समान गंभीर था।

ध्यायन्तं वस्तुयाथात्म्यं, यथाशासनभावनम्।

निःशेष संग निर्मुक्तं, वायुवद्गगनामलम्।।[283]

वे जिनागम के अनुसार वस्तु के यथार्थ स्वरूप का ध्यान कर रहे थे, वायु के समान सर्व परिग्रह से रहित थे और आकाश के समान निर्मल थे।

शैलकूटगताशङ्कं वीक्ष्य, ताभ्यां चिरादसौ।

निरचायि महासत्त्वः सौम्यभासुरविग्रहः।।[284]

उन्हें देखकर किसी पर्वत के शिखर की आशंका उत्पन्न होती थी। वे महान धैर्य के धारक थे तथा उनका शरीर सौम्य होने पर भी देदीप्यमान था। बहुत देर तक देखने के बाद उन्होंने निश्चय कर लिया कि यह उत्तम मुनिराज हैं।

ततः पूर्वकृतानेकश्रवणासेवने मुदा।

समीपं जग्मतुस्तस्या क्षणात्ते विस्मृतासुखे।।[285]

तदनन्तर जिन्होंने पहले अनेक बार मुनियों की सेवा की थी ऐसी वे दोनों स्त्रियाँ हर्ष से मुनिराज के समीप गयी और क्षण भर में अपना सब दुःख भूल गयी।

त्रिः परीत्य च भावेन नेमतुर्विहिताञ्जली।

मुनिं परमिव प्राप्ते बान्धवं विकचेक्षणे।।[286]

उन्होंने भावपूर्वक तीन प्रदक्षिणाएँ दीं, हाथ जोड़कर नमस्कार किया और परम बन्धु के समान मुनिराज को पाकर उनके नेत्र खिल उठे।

[280]) प.पु. 17/117 [281]) प.पु. 17/118 [282]) प.पु. 17/119 [283]) प.पु. 17/120
[284]) प.पु. 17/121 [285]) प.पु. 17/122 [286]) प.पु. 17/123

काले यदृच्छया तत्र तेन योगः समाप्यत ।

भवत्येव हि भव्यानां क्रिया प्रस्ताव संगता ।।[287]

जिस समय ये पहुँची उसी समय मुनिराज ने स्वेच्छा से ध्यान समाप्त किया सो ठीक ही है। क्योंकि भव्य जीवों की क्रिया अवसर के अनुसार ही होती है।

ते ततोऽवदतामेवमविभक्तकरद्वये ।

अनगाराङ्घ्रिविन्यस्तनिरश्रुस्थिरलोचने ।।[288]

भगवन्नापि ते देहे कुशलं कुशलाशय ।

मूलमेष हि सर्वेषां साधनानां सुचेष्ठित ।।[289]

तत्पश्चात् जिनके दोनों हाथ जुड़े हुए थे और जिन्होंने अपने अश्रुरहित निश्चल नेत्र मुनिराज के चरणों में लगा रखे थे ऐसी दोनों सखियों ने कहा कि हे भगवन् ! हे कुशल अभिप्राय के धारक ! हे उत्तम चेष्टाओं से संपन्न ! आपके शरीर में कुशलता तो है ? क्योंकि समस्त साधनों का मूल कारण यह शरीर ही है।

उपर्युपरिसंवृद्धं तपः कच्चिद् गुणाम्बुधे ।

विहारोऽपि दमोद्वाहव्युपसर्गो महाक्षमः ।।[290]

हे गुणों के सागर ! आपका तप उत्तरोत्तर बढ़ तो रहा है ? इसी प्रकार हे इंद्रियविजय के धारक ! आपका विहार उपसर्ग रहित तथा महाक्षमा से युक्त तो है ?

आचार इति पृच्छावो भवन्तमिदमीदृशम् ।

अन्यथा कस्य नो योग्याः कुशलस्य भवद्विधाः ।।[291]

हे प्रभो ! हम आपसे जो इस तरह कुशल पूछ रहे हैं सो ऐसी पद्धति है यही ध्यान रखकर पूछ रहे हैं अन्यथा आप जैसे मनुष्य किस कुशल के योग्य नहीं है ? अर्थात् आप समस्त कुशलता के भण्डार है।

भवन्ति क्षेमताभाजो भवद्विधसमाश्रिताः ।

स्वस्मिंस्तु कैव भावानां कथा gmpÜdVamË‘Zm‘२।।[292]

आप जैसे पुरुषों की शरण में पहुँचे हुए लोग कुशलता से युक्त हो जाते हैं ; किन्तु स्वयं अपने आपके विषय में अच्छे और बुरे पदार्थों की चर्चा ही क्या है ?

इत्युक्त्वा ते व्यरंसिष्टां विनयानतविग्रहे ।

निः शेषभयनिर्मुक्ते तद् दृष्टे च बभूवतुः ।।[293]

इस प्रकार कहकर वे दोनों चुप हो गई। उस समय उनके शरीर विनय से नम्रीभूत थे। मुनिराज ने जब उनकी ओर देखा तो वे सर्व प्रकार के भय से रहित हो गयी।

अथ प्रशान्तया वाचा श्रमणाऽमृतकल्पया ।

[287]) प.पु. 17/124 [288]) प.पु. 17/125 [289]) प.पु. 17/126 [290]) प.पु. 17/127 [291]) प.पु. 17/128
[292]) प.पु. 17/129 [293]) प.पु. 17/130

गम्भीरया जगादैवं पाणिमुत्क्षिप्य दक्षिणम् ।।

कल्याणि कुशलं सर्वं मम कर्मानुभावतः ।

ननु सर्वमिदं बाले नैजकर्मविचेष्टितम् ।।[294]

अथानन्तर मुनिराज दाहिना हाथ ऊपर उठाकर अमृत के समान प्रशांत एवं गंभीर वाणी में इस प्रकार कहने लगे कि हे कल्याणि ! कर्मों के प्रभाव से मेरा सर्वप्रकार कुशल है । हे बाले ! निश्चय से यह सब अपने-अपने कर्मों की चेष्टा है ।

रावण ने बालिमुनि की स्तुति की :-

पूर्व बैर के कारण रावण ने बाली मुनिराज पर अकारण क्रुद्ध हो , जिस कैलास पर्वत पर मुनिराज खड़े हुए आतप तप कर रहे थे उसी पर्वत को उठाकर पटकना चाहा और उसने पर्वत को उठा लिया ।

किन्तु भरत चक्रवर्ती के द्वारा बनवाये गये 72 स्वर्ण जिनमंदिर नष्ट हो जाएँगे, उन पर रहने वाले पशु-पक्षी भी नष्ट हो जाएँगे अतः उनकी रक्षा हेतु तथा जैन मुनि की तपस्या का महात्म्य बतलाने हेतु, बालि मुनि ने अपने पैर का अंगूठा दबाया । जिसके वजन को रावण सहन नहीं कर सका और चिल्लाया तथा रोते हुए विलाप करने लगा यहाँ से ही उसका नाम रोवण-रावण पड़ा । तब मंदोदरी दौड़कर बाली मुनिराज के पास पहुँची और उनसे क्षमा प्रार्थना कि साथ पति भिक्षा माँगी । तब मुनिराज बाली ने अपने पैर को हलका किया और रावण ने मुनि के तपबल को जानकर उनकी स्तुति की ।

ततोऽनुकम्पयाङ्गुष्ठं महामुनिरशश्लथत् ।

रावणोऽपि विमुच्याद्रिं क्लेशकान्तारतो निरैत् ।।[295]

तब महामुनि ने दयावश पैर का अँगूठा ढीला कर लिया और रावण भी पर्वत को जहाँ का तहाँ छोड़ क्लेश रूपी अटवी से बाहर निकला ।

गत्वा च प्रणतिं कृत्वा क्षमयित्वा पुनः पुनः ।

योगेशं स्तोतुमारब्धः परिज्ञाततपोबलः ।।[296]

तदनन्तर जिसने तप का बल जान लिया था ऐसे रावण ने जाकर मुनिराज को प्रणाम कर बार-बार क्षमा माँगी और इस प्रकार स्तुति करना प्रारम्भ किया ।

जिनेन्द्र चरणौ मुक्त्वा करोमि न नमस्कृतिम् ।

अन्यस्येति त्वयोक्तं यत्सामर्थ्यस्यास्य तत्प्रलम् ।।[297]

हे पूज्य ! आपने जो प्रतिज्ञा की थी कि मैं जिनेन्द्र देव के चरणों को छोड़कर अन्य के

[294]) प.पु. 17/131 [295]) प.पु. 9/159 [296]) प.पु. 9/160 [297]) प.पु. 9/16

लिए नमस्कार नहीं करूँगा, यह उसी की सामर्थ्य का फल है।

अहो निश्चय संपन्नं तपसस्ते महद्बलम्।

भगवन् येन शक्तोऽसि त्रैलोक्यं कर्तुमन्यथा।।[298]

हे भगवन्! आपके तप का महाबल निश्चय से संपन्न है। इसीलिए तो आप तीन लोक को अन्यथा करने में समर्थ हैं।

इन्द्राणामपि सामर्थ्यमीदृशं नाथ नेक्ष्यते।

यादृक् तपः समृद्धानां मुनीनामल्पयत्नजम्।।[299]

तप से समृद्ध मुनियों की थोड़े ही प्रयत्न से उत्पन्न जैसी सामर्थ्य देखी जाती है, हे नाथ! ऐसी सामर्थ्य इंद्रों की भी नहीं देखी जाती है।

अहो गुणा अहोरूपमहो कांतिरहो बलम्।

अहो दीप्तिरहो धैर्यमहो शीलमहो तपः।[300]

आपके गुण, आपका रूप, आपकी कांति, आपका बल, आपकी दीप्ति, आपका धैर्य, आपका शील और आपका तप सभी आश्चर्यकारी है।

त्रैलोक्यादथ निः शेषं वस्त्वाहृत्य मनोहरम्।

कर्मभिः सुकृताधारं शरीरं तव निर्मितम्।।[301]

ऐसा जान पड़ता है मानो कर्मों ने तीनों लोकों से समस्त सुंदर पदार्थ ला-लाकर पुण्य के आधारभूत आपके शरीर की रचना की है।

सामर्थ्येनामुना युक्तस्त्यक्तवानसि यत्क्षितिम्।

इदमत्यद्भुतं कर्म कृतं सुपुरुष त्वया।।[302]

हे सत्पुरुष! इस लोकोत्तर सामर्थ्य से युक्त होकर भी जो आपने पृथिवी का त्याग किया है यह अत्यन्त आश्चर्यजनक कार्य है।

एवं विधस्य ते कर्तुं यदसाधु मयेप्सितम्।

तदशक्तस्य संजातं पापबन्धाय केवलम्।।[303]

ऐसी सामर्थ्य से युक्त आपके विषय में जो मैंने अनुचित कार्य करना चाहा था वह मुझ असमर्थ के लिए केवल पाप बंध का ही कारण हुआ।

धिक्शरीरमिदं चेतो वचश्च मम पापिनः।

वृत्तावभिमुखं जातं यदसत्यामलं पुरा।।[304]

मुझ पापी के इस शरीर को, हृदय को और वचन को धिक्कार है कि जो अयोग्य कार्य करने के सम्मुख हुए।

भवादृशां नृरत्नानां मद्विधानां च दुर्विशाम्।

अन्तरं विगतद्वेष मेरु सर्षपयोरिव।।[305]

[298]) प.पु. 9/162 [299]) प.पु. 9/163 [300]) प.पु. 9/164 [301]) प.पु. 9/165 [302]) प.पु. 9/166 [303]) प.पु. 9/16
[304]) प.पु. 9/168 [305]) प.पु. 9/169

हे द्वेषरहित ! आप जैसे नर रत्नों और मुझ जैसे दुष्ट पुरुषों के बीच उतना ही अंतर है जितना कि मेरु और सरसों के बीच होता है।

मह्यं विपद्यमानाय दत्ताः प्राणास्त्वया मुने।
अपकारिणि यस्येयं मतिस्तस्य किमुच्यताम्।।[306]

हे मुनिराज ! मुझ मरते हुए के लिए आपने प्राण प्रदान किए है सो अपकार करने वालों पर जिसकी ऐसी बुद्धि है उसके विषय में क्या कहा जावे ?

श्रुणोमि वेद्मि पश्यामि संसारं दुःखभावकम्।
पापस्तथापि निर्वेदं विषयेभ्यो न याम्यहम्।।[307]

मैं सुनता हूँ, जानता हूँ और देखता हूँ कि संसार केवल दुःख का अनुभव कराने वाला है फिर भी मैं इतना पापी हूँ कि विषयों से वैराग्य को प्राप्त नहीं होता।

पुण्यवन्तो महासत्त्वा मुक्तिलक्ष्मी समीपगाः।
तारुण्ये विषयांस्त्यक्त्वा स्थिता ये मुक्तिवर्त्मनि।।[308]

जो तरुण अवस्था में ही विषयों को छोड़कर मोक्षमार्ग में स्थित हुए है वे पुण्यात्मा है, महाशक्तिशाली है और मुक्ति लक्ष्मी के समीप में विचरने वाले है।

इति स्तुत्वा मुनिं भूयः प्रणम्य त्रिःप्रदक्षिणम्।
नितान्तं स्वं च निन्दित्वा शूत्कारमुखराननः।।[309]

इस प्रकार स्तुति कर उसने मुनिराज को प्रणाम कर तीन प्रदक्षिणाएँ दी, अपने आपकी बहुत निंदा की और दुःखवश मुँह से सू-सू शब्द कर रूदन किया।

उपकण्ठं मुनेश्चैत्यभवनं त्रपयान्वितः।
विरक्तो विषयासङ्गे प्रविष्टः कैकसीसुतः।।[310]

सम्पूर्ण जगदेव नन्दवनं सर्वेऽपि कल्पद्रुमाः।
गांग वारि समस्तवारिनिवहाः पुण्याः समस्तः क्रियाः।।
वाचः प्राकृत संस्कृताः श्रुतिशिरो वाराणसी मेदिनी।
सर्वावस्थितिरस्य वस्तुविषया दृष्टे परब्रह्मणि।।

-शंकराचार्य

जिसने परब्रह्म का साक्षात्कार कर लिया उसके लिये सारा जगत नंदनवन है, सब वृक्ष कल्पवृक्ष हैं, सब जल गंगाजल हैं, उसकी सारी क्रियाएँ पवित्र हैं, उसकी वाणी चाहे प्राकृत हो या संस्कृत- वेद का सार है, उसके लिये सारी पृथ्वी काशी है और उसकी सारी चेष्टायें परमात्मामयी हैं।

306) प.पु. 9/170 307) प.पु. 9/171
308) प.पु. 9/172 309) प.पु. 9/173 310) प.पु. 9/174

मुनि रक्षा से सातिशय पुण्य

विद्याधर राजा महारक्ष ने चार ज्ञान के धारी श्रुतसागर जी महाराज को ससंघ प्रणाम किया और अपना पूर्व भव पूछा। मुनिराज ने बताया कि हे नृप ! एक बार पोदनपुर नरेश महाराजा हेमरथ ने एक दिन बहुत बड़े रूप से जिनेन्द्र भगवान की विस्मय कारी महापूजा की और हर्षित हो लोगों ने जोर जोर से भगवान की जय जयकार की जिसे सुनकर प्रीति नामक वैश्यपुत्र अपने ही घर के प्रांगण में आनंद विभोर हो नृत्य करने लगा जिसके फल स्वरूप वह "यक्ष" देव हुआ।

एक दिन पश्चिम विदेह क्षेत्र के कांचनपुर नगर में किन्हीं शत्रुओं ने मुनियों पर उपसर्ग करना प्रारंभ कर दिया जिसे देख तूने शीघ्र ही मुनि भक्ति से द्रवित हो रक्षा कर अपूर्व ही पुण्य संचय किया।

निज्ञाट्य तान् त्वया शत्रून् मुनीनां धर्मसाधनम्।
शरीरं रक्षितं तस्मात् पुण्यराशि रूपार्जितः ।।[311]

सो तूने उन शत्रुओं को अलग कर धर्मसाधन में सहायभूत मुनियों के शरीर की रक्षा की। इस कार्य से तूने बहुत भारी पुण्य का संचय किया, जिससे तू उदित नामक विद्याधर पुत्र हुआ और फिर वहाँ भी मुनियों की बहुत भक्ति कर तू यहाँ मेघवाहन का पुत्र पोदनपुर नरेश महारक्ष हुआ है।

मैं भी तुम्हारे दरवाजे पर दस्तक दूँगा। यदि तुमने मुझे अपने हृदय में प्रवेश दिया तो मैं विश्वास से कहता हूँ तुम्हारे चित्त को मांज-मांज कर दर्पण बना दूँगा। तुम्हारे हृदय को झाड़-पोंछकर पारदर्शी बना दूँगा। तुम्हारे दायरे-दिल को दरिया-दिल बना दूँगा। तुम्हारे मन को मानसरोवर बना दूँगा। तुम्हारे अन्तःकरण को ही तुम्हारी अदालत बना दूँगा। यदि तुमने मुझे अपने हृदय में प्रवेश दिया तो मैं गारंटी देता हूँ कि मैं तुम्हारी जिन्दगी को आमूल-चूल बदल दूँगा। तुम्हारे जीवन शैली की शक्लो सूरत बदल दूँगा। तुम्हारे जीवन में स्वर्ग उतार दूँगा।

-मृत्यु बोध 10

[311] प.पु. 5/352

23. मुनि महिमा

मुनि ही परम सुखी है :

अर्थिनो धनमप्राप्य, धनिनोऽप्यवितृप्तितः ।
कष्टं सर्वेऽपि सीदन्ति परमेको मुनिः सुखी ।।[312]
परायत्तात् सुखाद् दुःखं स्वायत्तं केवलं वरम् ।
अन्यथा सुखि नामानः कथमासंस्तपस्विनः ।।313

अर्थ : जो निर्धन है और सब बातों (चीजों) के अभिलाषी है, वे तो महा दुःखी है। जो धनवान् हैं, वे भी तृप्ति बिना, तृष्णा के कारण महादुःखी है। जगत के सभी जीव दुःखी ही है। निश्चय से विचार करें तो एक मात्र मुनि ही संतोषी व महासुखी हैं। पराधीन सुख से स्वाधीन दुःख ही श्रेष्ठ है। यदि ऐसा न हो और अन्यथा हो तो तपस्वी मुनि 'सुखी' यह नाम कैसे पावें ?

साधुओं के गुण :

यदेतत् स्वच्छन्दं विहरणमकार्पण्यमशनं,
सहार्यैः संवास ! श्रुतमुपशमैक श्रम फलम् ।
मनोमन्दस्पन्दं बहिरपि चिरायातिविमृशन्,
न जाने कस्येयं परिणतिरुदारस्य तपसः ।[314]
विरतिरतुला शास्त्रे चिन्ता तथा करुणा परा,
मतिरपि सदैकान्त ध्वान्तप्रपंच विभेदिनी ।
अनशनतपश्चर्या चान्ते यथोक्त विधानतो,
भवति महतां नाल्पस्येदं फलं तपसो विधेः ।।[315]

अर्थ : मुनियों की क्या महिमा कहें ? उनके स्वाधीन विहार है, दीनता रहित भोजन है और मुनियों के संघ में निवास है। शांत भाव ही है फल जिसका ऐसे शास्त्र पठन में जो संलग्न है, मन का वेग मंद हो गया सो आत्मविचार ही में लीन है। चिरकाल आत्म विचार करते हुए कभी बाह्य क्रियाओं में आते है। मुनि की ऐसी परम दशा होती है सो हम नहीं जानते यह कौन से उदार तप की परिणति है।

अतुल वैराग्य, शास्त्र चिंतन, सर्वोत्कृष्ट सब जीवों पर दया, एकांतवाद यानि सर्वथा एक नय के हठाग्रह रूपी महान अंधकार का भेदन करने वाली सूर्य किरण समान बुद्धि सम्पन्न और (आयु के) अंत समय में शास्त्रोक्त विधिपूर्वक अनशन धारण कर देह का विसर्जन ये सब क्रियाएँ सत्पुरुषों की अल्प तपश्चर्या का फल नहीं है अपितु महान तप का फल है। सर्वथा परिहार को सुख मानते है, सर्व त्याग को महान उत्सव मानते है, संग्रह को प्राण त्याग

[312]) आ. अनु. गा. 65 [313]) आ. अनु. गा.66 [314]) आ. अनु. गा. 67 [315]) आ. अनु. गा. 68

(मृत्यु) मानते है, जिनकी दृष्टि ऐसी हो जाती है, उनके लिए ऐसा कौन सा पदार्थ है जो सुख का निमित्त न हो ? सब ही सुख के कारण होते हैं। इस कारण साधु सदैव सुखी ही है, यह बात सत्य है।

योगी को खेद नहीं होता :

आकृष्योग्र तपोबलैरुदय गोपुच्छं यदानीयते,
तत्कर्म स्वयमागतं यदि विदः को नाम खेदस्ततः।
यातव्यो विजिगीषुणा यदि भवेदारम्भकोऽरिः स्वयं,
वृद्धिः प्रत्युत नेतुर प्रतिहता तद्विग्रहे कः क्षयः।।[318]

अर्थ : (योगी) जो कर्म अभी उदय में नहीं आया है उसे भी उग्र तप के बल से उदय में लाकर क्षय करते है, तो फिर जो कर्म स्वयमेव उदय में आ गया उसमें खेद कैसा ? मुनि के खेद का तो नामभी नहीं। जैसे जिसे जीतने की इच्छा है, वह तो शत्रु पर चढ़ाई करके भी उसे जीतता है और जो शत्रु ही युद्ध का आरम्भ कर स्वयमेव आ जावे, तो उसकी क्या हानि होती है ? यहाँ तो अधिक उत्साह रहता है।

भेद-विज्ञानी संतों की चरण-रज हमें पवित्र करे :

येषां बुद्धिरलक्ष्यमाणभिदयोराशात्मनोरन्तरं,
गत्वोच्चैरविधाय भेदमनयोरारान्न विश्राम्यति।
यैरन्तर्विनिवेशिताः शमधनैर्बाढं बहिर्व्याप्तयः,
तेषां नोऽत्र पवित्रयन्तु परमाः पादोज्झिताः पाशवः।।[317]

अर्थ : जिनकी बुद्धि जगत की आशा और आत्मा दोनों के मध्यगत हुई। कैसे है दोनों ? जिनका भेद ज्ञान लक्षित नहीं होता है, सो उन मुनियों की बुद्धि दोनों के मध्य प्राप्त हुई, भले प्रकार भेद ज्ञान किये बिना विश्राम नहीं किया, जितने तथा कैसे है वे ? शांत भाव ही धन जिनका और बाह्य पदार्थों में जो चित्तवृत्ति जाती थी उसे उन्होंने अंतरंग में स्थापित कर दिया है, ऐसे महामुनियों के चरण कमल की रज इस जग में किसको पवित्र नहीं करती ?अपितु सबको पवित्र करती है, सो हमें भी पवित्र करे।

[316]) आ. अनु. गा. 257 [317]) आ. अनु. गा. 261

सर्वारम्भ-परिग्रह-त्यागी मुनि सत्पुरुषों द्वारा वन्दनीय है :

यत् प्राग्जन्मनि संचितं तनुभृता कर्माशुभं वा शुभं,
तद्दैवं तदुदीरणादनुभवन् दुःखं सुखं वागतम् ।
कुर्य्याद्यः शुभमेव सोऽप्यभिमतो यस्तूभयोच्छित्तये,
सर्वारम्भ परिग्रह परित्यागी स वन्द्यः सताम् ।।[318]

अर्थ : जीव ने पूर्व जन्म में जो शुभ अथवा अशुभ कर्म उपार्जित किये हैं, उन्हें दैव कहा जाता है उसकी प्रेरणा से जीव सुख दुःख भोगता है। इन जीवों में जो अशुभ को छोड़कर शुभ का आदर करता है, वह भी भला कहा जाता है। जो योगीश्वर शुभ और अशुभ दोनों के विनाश के लिए सर्व आरंभ-परिग्रह रूप क्रूर गृह का त्यागी होता है, वह सत्पुरुषों द्वारा वन्दनीय है।

साधुजन अकारण बंधु होते हैं :

शरीरेऽस्मिन् सर्वाशुचिनि बहुदुःखेऽपि निवसन्,
व्यरंसीन्नो नैव प्रथयति जनः प्रीतिमधिकाम् ।
इमां दृष्ट्वाप्यस्माद्विरमयितुमेनं च यतते,
यतिर्याताख्यानैः परहितरतिं पश्य महतः ।।[319]

अर्थ : सब प्रकार से अपवित्र तथा शारीरिक तथा मानसिक बहुत दुःखों के स्थान रूप इस शरीर में रहते हुए यह मनुष्य जानते हुये भी इससे विरक्ति प्राप्त नहीं करता, अपितु इससे अधिकाधिक प्रीति करता है। सामान्य जन का तो यह स्वभाव है। मुनिजन अपने श्रेष्ठ उपदेश से शरीरासक्त मनुष्यों को शरीर से विरक्त करने का प्रयत्न करते हैं। महान् मुनियों के परहित करने में ऐसा अनुराग होता है, तू उसे देख।

निज रस में लीन वीतराग मुनि, मुक्ति के पात्र होते हैं :

समधिगत समस्ताः सर्व सावद्यदूराः,
स्वहितनिहितचित्ताः शान्त सर्व प्रचाराः ।
स्वपर सफल जल्पाः सर्व संकल्प मुक्ताः
कथमिह न विमुक्तेर्भाजनं ते विमुक्ताः ।।[320]

अर्थ : जिन्होंने हेयोपादेय का समस्त स्वरूप जान लिया है, जो हिंसादि सब पापों से

[318]) आ.अनु.गा. 262 [319]) आ.अनु.गा. 297 [320]) आ.अनु.गा. 226

कैं, आत्म कल्याण के कारण भूत सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र में जिनका चित्त लीन है, इन्द्रिय-विषयों से जिनकी निवृत्ति हो गई है, जो स्वपर कल्याण कारी वचन बोलते हैं, सर्व संकल्प-विकल्पों से रहित है, सर्व प्रपंचों से रहित ऐसे वे महापुरुष मुक्ति के भाजन क्यों न होंगे ? निस्संदेह वे शिवसुख के भाजन होंगे।

महामोह के हटने पर सभी पदार्थ सुख के निमित्त होते हैं :

एकैश्वर्यमिहैक तामभिमतावाप्तिं शरीरच्युतिं,
दुःखं दुष्कृतिनिष्कृतिं सुखमलं संसार-सौख्योज्झनम्।
सर्वत्यागमहोत्सव व्यतिकरं प्राणव्ययं पश्यतां,
किं तद्यन्न सुखाय तेन सुखिनः सत्यं सदा साधवः।।[331]

अर्थ : जो साधुजन अकेले रहने में साम्राज्य के समान सुख समझते हैं, वे सचमुच में इन्द्र एवं चक्रवर्ती से भी बढ़कर सुखी हैं। जो साधु संत वर्तमान में तिल सदृश विषय सुख को छोड़कर भविष्य में आत्मिक सुख हेतु तत्व चिंतन एवं आत्मचिंतन में सदैव लगे रहते हैं, वे साधु धन्य हैं।

मनुष्य की जिंदगी एक अवसर है-स्वयं को पहचानने का। एक मौका है स्वयं के होने का, स्वयं को पाने का, क्योंकि मनुष्य होकर ही स्वयं को पाया जा सकता है, परमात्मा हुआ जा सकता है। तुम्हारी जिंदगी तो अनंत की संभावना है। तुम में अनंत शक्तियाँ छिपी है, असंख्य दिव्यताएँ तुम में मौजूद हैं। अपनी इन संभावनाओं, शक्तियों और दिव्यताओं को पहचानना और उन्हें साकार करना ही जिंदगी का असली मकसद है, लेकिन दुर्भाग्य है कि इस मुल्क का आदमी साढ़े तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं (हिंदू धर्म की मान्यतानुसार) के अस्तित्व पर तो विश्वास कर लेता है, लेकिन अपने में जो एक जीवित परमात्मा है उस पर विश्वास नहीं कर पाता है।

-मृत्यु बोध 17, 18

[331]) आ.अनु.गा. 256

24. मुनिजनों के प्रति हमारी विनय एवं शिष्टाचार

''विणओ मोक्खद्वारं''[332] अर्थात् विनय मोक्ष का द्वार है विनय बारह तपों में एक तप है, विनय एक तपाराधना है, विनय एक तपाचार है, विनय सोलहकारण भावनाओं में एक भावना है , विनय एक तपधर्म है।

हमारे तीर्थंकरों व गुरुजनों ने आर्य/सत्पुरुषों के लिए विनय का मात्र उपदेश ही नहीं किन्तु आदेश भी दिया है यहाँ तक कि उन्होंने प्रथम स्वयं आचरण में उतारा है। विनय एक आदर सत्कार एवं पूजा भक्ति की पृष्ठ भूमिका है। अनादर किसी का भी नहीं करना चाहिए अपितु यथायोग्य सभी का सम्मान करना चाहिए, जब सामान्य जन की भी यथोचित् लौकिक सम्मान की सार्वजनिक परंपरा है तो फिर धर्म और धर्म गुरु के विषय में तो नियामक होना ही चाहिए। वह भी किसी लोभ या लोकलाज अथवा डर भय से नहीं क्योंकि यदि उपर्युक्त किसी हेतु से विनय की भी जाएगी तो उसे स्वार्थ पूर्ण ही विनय कहा जाएगा। जो मोक्षमार्ग में निष्प्रयोजनीय ही मानी जाएगी।

अतः हम निस्वार्थ भाव से एवं सच्ची श्रद्धा भक्ति से ही मुनिजनों की विनय, सेवा, भक्ति करें।

विनय के प्रकार :

1) मुनि जनों को आता देख खड़े हो जाना।
2) आसन/गद्दी/फर्स आदि से नीचे उतर जाना।
3) उन्हें देख प्रसन्न होना।
4) अपने दोनों हाथ जोड़ लेना।
5) उन्हें सिर झुकाते हुए नमस्कार करना।
6) मुनिराज को 'हे स्वामी! नमोऽस्तु अथवा नमोऽस्तु महाराज' बोलना।
7) आर्यिकाओं को 'हे माता जी! वंदामी अथवा वंदामी माता जी' बोलना।
8) ऐलक क्षुल्लकों को 'इच्छामी महाराज' कहना।
9) क्षुल्लिकाओं को 'इच्छामी माता जी' कहना।
(अन्य ब्रह्मचारियों को 'वंदना भैय्या जी' कहना।
ब्रह्मचारिणी दीदी को 'वंदना दीदीजी' कहना।
गृहस्थ जनों को 'जयजिनेन्द्र' कहना।)
10) सभी के यथोचित् बैठने की व्यवस्था करना।

जैसे : आचार्य श्री को सिंहासन या ऊँचा पाटा मुनि, आर्यिकाओं को उससे नीचा पाटा, ऐलक, क्षुल्लक, क्षुल्लिकाओं को उससे नीचा पाटा लगाना, यदि ऐसी व्यवस्था संभव न हो तो आचार्य श्री को ऊँचा पाटा लगाना। बाकी सभी को समान पाटा लगाना तथा ब्रह्मचारी भैय्या, बहिनों को चटाई बिछाना,सामान्य लोगों को भी फर्स/चटाई आदि बिछाना तथा उस पर बैठने की सभी से प्रार्थना करना।

[332]) मूला. गा.. 256

11) जब वे बैठ जाएँ तो पुनः नमस्कार कर उनसे रत्नत्रय, स्वास्थ्य एवं आहार आदि की कुशलता पूछना जैसे : हे स्वामिन् आपका/आप सबका रत्नत्रय कुशल है, स्वास्थ्य ठीक है, आहार ठीक हुआ।

12) हमारे योग्य कोई सेवा हो तो अवश्य अवसर दें।

13) यदि महाराज/मुनिसंघ चल रहा हो और साथ चलने का अवसर मिले तो यथावसर उनके पीछे अथवा बाई ओर अथवा दोनों तरफ बगल में चलना, आवश्यकता पर रास्ता बताने के लिए, भीड़ को दूर करने के लिए अथवा शोभा की दृष्टि से आगे भी चला जा सकता है।

14) यदि मुनिसंघ हो तो पुरुष वर्ग मुनिराजों के साथ/पीछे चले और महिला वर्ग आर्यिकाओं के साथ या उनके पीछे चलें।

15) जूते चप्पल पहनकर न चले, यदि उन्हें उतार नहीं सकते है तो महाराज/माताजीयों के अत्यंत निकट न चलें।

16) कुछ भी खाते पीते हुए न चलें।

17) उनके सम्मुख किसी को डांटना या पिटाई न करें।

18) व्यर्थ की बातें भी न करें।

19) उनके द्वारा समझाए जाने पर अनावश्यक बीच-बीच में न बोले।

20) बैठने के अवसर पर उनसे ऊँचे न बैठे और न ही ऊँची आसन लगाए।

21) उनके सम्मुख पैर न फैलाए।

22) लेटे भी नहीं, यदि आवश्यकता भी पड़े तो दूसरे स्थान पर लेटे, दूसरा स्थान न हो तो कुछ आड़कर के लेटे या फिर उनके लेटने के बाद लेटे और उनके उठने के पूर्व उठ जाएँ।

23) उनके बीच-बीच में न बोले।

24) बोलने की आवश्यकता भी पड़े तो उनकी बात पूर्ण होने पर प्रथम उनसे सविनय आज्ञा लेकर ही बोले।

25) यदि उनके कक्ष में जाने की आवश्यकता पड़े तो आज्ञा लेकर ही प्रवेश करें बिना अनुमति के नहीं।

26) अनुमति न मिलने पर जोर जबरदस्ती न करें अपितु इन्तजार करें।

27) ऐसा कोई शोरगुल न करें जो उनकी साधना, अध्ययन अथवा चर्चा आदि में बाधा उत्पन्न करता हो।

28) सदैव उनके दर्शन श्रीफल, अन्य कोई भी फल अथवा मेवा (सूखाफल) पुष्प या चावल आदि चढ़ाकर ही दर्शन करना चाहिए।

29) द्रव्य उचित स्थान पर ही चढ़ाना चाहिए ताकि चींटि आदि न हो जाएँ।

30) यदि सौभाग्य से किन्हीं मुनिराजों का कमण्डल लेकर चलने का अवसर मिले तो उसे विनयपूर्वक लेकर चले।

31) मुनिराजों के सम्मुख बैठ करके हँसी-मजाक एवं क्रीडा (खेलकूद) न करें।

32) यदि कभी प्रवचन आदि सुनने का अवसर मिलता है तो समय के पूर्व उपस्थित हो, संभव हो सके तो अन्य परिजन एवं कुटुम्बीजनों तथा अन्य साधर्मी लोगों को उस कार्यक्रम में आने की प्रेरणा दें।

33) विनय यथा शक्ति यथावसर मन, वचन, काय से कृत, कारित, अनुमोदना से प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से ही करना चाहिए।



महात्मा गाँधी, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी, लोक मान्य तिलक, इंदिरा गांधी, संजय गाँधी, राजीव गांधी, डॉ. अब्दुल कलाम, अटल बिहारी वाजपेयी आदि के भी नामोल्लेख है जिन्होंने समय-समय पर दिगम्बर मुनियों के आशीर्वाद से देश की उन्नति की।

इस प्रकार हम किसी भी शिलालेखों व इतिहास के पन्नों को देखते हैं तो ऐसे अनेकों राजाओं के नामोल्लेख मिलते हैं। छोटे-छोटे राजाओं से लेकर यदि हम सभी बड़े-बड़े राजाओं का नामोल्लेख करेंगे तो इसी से एक बड़ी मोटी पुस्तक बन जाएगी। अत : युक्त सभी संक्षिप्त जानकारी से पाठक गण उस समय की मुनियों के प्रति राज भक्ति को जान सकते हैं।

इस प्रकार पौराणिक दृष्टि से दिगम्बर जैन मुनि और राजा-महाराजाओं के विषय में जानकर अब हम ऐतिहासिक दृष्टि से भी विभिन्न राजाओं पर दिगम्बर जैन मुनियों के प्रभाव के विषय में जानने का भी लघु प्रयास करेंगे।

25. मुनिराजों की सेवा एवं व्यवस्था

हम कैसे संत सेवा करें ?:-

1) सर्व प्रथम अपने ग्राम के साधर्मी लोगों के साथ संत चरणों में पहुँचकर 'श्रीफल' चढ़ाये और प्रार्थना करें कि-

हे गुरुदेव ! हमारे ग्राम/नगरवासी भी आपके पुण्य दर्शन/प्रवचन/ सेवा का लाभ लेना चाहते है सभी की ओर से हम सभी प्रतिनिधि के रूप में प्रार्थना करने हेतु आये हैं।

2) **नगर प्रवेश :** (अ) मुनि संघ के आगमन पर नगर के बाहर तक सभी साधर्मी लोगों के साथ मुनि संघ की अगवानी करना चाहिए।

(आ) मुनिराज के आते ही समाज के प्रमुख लोगों को सर्व समाज की ओर से मुनिराज के पाद प्रक्षालन/अर्घ्य चढ़ाना एवं आरती कर नमस्कार करना चाहिए।

(इ) संभव हो सके तो गाजे बाजे के साथ नगर प्रवेश कराना चाहिए।

(ई) मंगल कलश एवं धर्म ध्वज (पताका) के द्वारा धार्मिक शोभा करना चाहिए।

(उ) चलने का क्रम निम्न प्रकार से होना चाहिए :

1. बैंड 2. ध्वज 3. कलश 4. मुनिसंघ/आर्यिका संघ 5. पुरुषवर्ग 6. महिलावर्ग

पुरुष वर्ग मुनिसंघ के साथ-साथ भी चल सकते हैं। हर्षित होकर जय जयकार बोलें, धर्म के नारे लगाएँ तथा धार्मिक भजन स्तुतियाँ भी बोलें।

स्वागत : नगर प्रवेश के समय साधर्मिजन अपने अपने घर के समक्ष सफाई कर रंगोली से चौक पूरकर बंधनवार/मंगलद्वार बना सकते है तथा मुनिराज के अपने द्वार के सम्मुख प्रासुक (छने व गर्म किए हुए) जल से पाद प्रक्षालन कर अर्घ्य या श्रीफल चढ़ाकर आरती भी कर सकते है।

मुनिराज को मंदिर जी में प्रवेश कराकर जब वे भगवान के दर्शन कर लें, तब उन्हें किसी उचित स्थान पर तखत/पाटे आदि पर बैठाना चाहिए। उनके पाद प्रक्षालन करना चाहिए, अर्घ्य व आरती करना चाहिए।

मुनि संघ के आगमन पर हार्दिक खुशी प्रकट करना चाहिए एवं आभार प्रकट करना चाहिए। साथ में या भेजने आये लोगों का यथा योग्य स्वागत या प्रोत्साहित दो शब्द बोलना चाहिए। पश्चात् यदि प्रातः आहार की बेला हो तो आहार हेतु शुद्धि का जल कमण्डल में भर प्रार्थना करना चाहिए।

सायं का समय हो तो उन्हें रुकने के स्थान पर पहुँचाना चाहिए।

अन्य व्यवस्था :

(1) जहाँ ठहरना है वहाँ कमरों की सफाई

(2) कमण्डल में जल की व्यवस्था

(3) पाटे (लेटने/बैठने हेतु)

(4) चौकी (पढ़ने, लिखने या पुस्तकादि रखने हेतु)

(5) लाईट (यदि उपयोग में लेते हो तो)

(6) आर्यिका माता जी, ऐलक, क्षुल्लक-क्षुल्लिका ब्रह्मचारी, भैय्या, बहिनों के वस्त्रादि के धोने, सुखाने की व्यवस्था बनाना चाहिए।

(7) लघु शंका या शौचादि की यथोचित् व्यवस्था करना।

(8) यदि नगर से बाहर शौचादि की व्यवस्था है तो किसी व्यक्तियों को उनकी मर्यादा के अनुसार सेवा व्यवस्था की दृष्टि से साथ जाना चाहिए और साथ आना चाहिए।

(9) यदि पास ही व्यवस्था हो तो साफ सफाई का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

(10) आहारादि के समय भी पड़गाहन आदि की व्यवस्था तक तथा आहार के पश्चात् मंदिर तक पहुँचाने की व्यवस्था रखना चाहिए।

(11) यदि चटाई, शास्त्र, पेड, पेन, कॉपी की आवश्यकता है तो उसकी व्यवस्था रखना चाहिए।

(12) यदि कोई साधुजन अस्वस्थ है तो उनकी योग्य वैद्य आदि द्वारा शुद्ध इलाज कराना चाहिए।

मुनि संघ के द्वारा होने वाले शास्त्र स्वाध्याय/प्रवचन/शिविर/वाचना की भी यथोचित् व्यवस्था कर सर्व सामाजिक धर्म ज्ञान के लाभ हो। संस्कार हो। ऐसी जरूर व्यवस्था बनाना चाहिए।

इस हेतु सर्व प्रथम महाराज/माताजी से उक्त कार्य हेतु समाज के प्रमुख व्यक्ति प्रार्थना करें, स्वीकृति ले। स्वीकृति मिलने पर मुनि संघ के बैठने के लिए तखत, पाटे आदि की उचित व्यवस्था करनी चाहिए। प्रवचन हेतु माईक तथा श्रावकों को बैठने के लिए बिछाई आदि की उचित व्वस्था करनी चाहिए। पश्चात् प्रवचन स्थल पर संघ को सविनय विराजमान कर पूर्व निर्धारित व्यक्तियों के द्वारा संचालन, दो शब्द, मंगलाचरण, चित्रानावरण, दीप प्रज्ज्वलन आदि करवाना चाहिए। अंत में प्रवचनादि हेतु प्रार्थना करना। प्रवचन के बाद/आभार में दो शब्द बोले/यदि कोई सूचना देना हो तो दें, अंत में शास्त्र विसर्जन कर स्तुति करें।

महाराज के स्वास्थ्य, तपस्या, स्वाध्याय, मार्ग की थकान आदि को ध्यान में रखते हुए उनकी शाम की सामायिक के बाद आवश्यकतानुसार यथायोग्य सेवा-वैय्यावृत्ति करनी चाहिए।

शीतकाल में-सरसों के तेल आदि को गर्म करके पैर के पंजे मलने से शीत बाधा से होने वाली तकलीफ दूर होती है।

ग्रीष्मकाल में–शुद्ध घी, कपूर को कांसे की थाली में प्रासुक शीतल जल के साथ फेंटकर शरीर में लगाने से उष्ण वेदना जन्य पीड़ा कम होती है।

वर्षाकाल में–जैसी आवश्यकता हो, वैय्यावृत्ति करनी चाहिए।

यदि कोई मुनिराज तेल आदि के त्यागी हो तो यूँ ही पैरादि दबाकर वैय्यावृत्ति की जा सकती है। मुनिजनों की यथायोग्य वैय्यावृत्ति अवश्य ही करना चाहिए। ताकि वे अपनी धर्म साधना निर्विघ्न रूप से करते हुए प्राणी मात्र के लिए धर्मोपदेश आदि देते रहें। यही वैय्यावृत्ति का उद्देश्य है। अतः जब भी मुनिराजों या माताजीओं का पुण्य सान्निध्य मिलता है तब तक जरूर वैय्यावृत्ति के लिए जाना चाहिए तथा बच्चों को भेजते रहना चाहिए। पर ध्यान रहे महाराजों के पास पुरुष ही जाएँ, महिलाएँ न जाएँ और माताजीओं के पास महिलाएँ ही जाएँ, पुरुष न जाएँ। एक बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि वहाँ किसी भी प्रकार से राग-द्वेषात्मक कोई भी चर्चादि नहीं करना चाहिए। मात्र धार्मिक चर्चाएँ करनी चाहिए।

विहार व्यवस्था : यदि मुनि संघ विहार करें तो उनके साथ यथोचित् लोगों को अगले मुकाम तक पैदल साथ चलना चाहिए। यदि रास्ते में चौके आदि की आवश्यकता हो तो चौका की व्यवस्था करना चाहिए और जब तक अगले ग्रामवासियों को पूर्ण जिम्मेदारी न सौंप दे, तब तक व्यवस्था बनाये रखने का यथाशक्य ध्यान रखना चाहिए।

शस्त्र और शास्त्र को जरा समझने की कोशिश करें। शस्त्र देह और देश की रक्षा के लिये, सभ्यता और संस्कृति की रक्षा के लिये, मानव और मान मर्यादा की रक्षा के लिये, आदर्श और अनुशासन की सुरक्षा के लिये बनाए जाते हैं। किन्तु शास्त्र, आत्मरक्षा और आत्मानुशासन की सुरक्षा के लिये बनाये जाते हैं। आत्मलाभ और आत्मसात् की प्राप्ति के लिये, यथार्थ और परमार्थ की प्राप्ति के लिये लिखे जाते हैं। मान्यवर ! याद रखना, उद्देश्य दोनों के अच्छे हैं। किंतु अज्ञानी के हाथ में सुई भी खतरनाक है और ज्ञानी के हाथ में तलवार भी वरदान है। विज्ञान यदि धर्म की शरण में आ जाये तो वरदान है और राजनीति की शरण में चला जाये तो अभिशाप है।

–इंसान क्यों दुःखी हैं ? 27

26. उपसंहार

उपर्युक्त सभी संदर्भों से यह निष्कर्ष निकलता है कि दिगम्बर (नग्न) जैन मुनियों को उत्कृष्ट त्याग, उत्कृष्ट तपस्या एवं निर्दोष साधना, हार्दिक सहिष्णुता से विभिन्न प्रकार की ऋद्धि-सिद्धियाँ सहज ही उत्पन्न होती है, फिर भी वे उनसे अलिप्त रहते हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि लौकिक चमत्कार साधक की परीक्षा लेने आते है कि ये अपने लक्ष्य में कितने अडिग है। चमत्कारों से प्रभावित या चमत्कारों के लिए साधना करने वाले साधक अपने लक्ष्य को कभी भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं, वे इसमें उलझकर पूर्ववत् ही रहते हैं। पर वे ही सच्चे साधक हैं और उनकी ही साधना में चमत्कार होते है जो उनसे विरक्त रहते है, सिद्धियाँ उनके चरण चूमती हैं। ऐसे ही संत सच्चे मायने में मुनि कहलाते हैं, शेष नहीं। ऐसे ही संतों की ऋषि, मुनि एवं विद्वानों ने वेद, उपनिषद, पुराण, कुरान, बाईबल आदि में श्रद्धा सहित सविनय भक्ति पूर्ण महिमा गाई है और उनका सम्मान करने की विधि बताई है। तथा अपमान, तिरस्कार करने के प्रत्यक्ष दृष्ट उदाहरण दिये है और जनमानस को अनादर करने से होने वाले कष्टों से बचाने की महती कृपा की। हम उन सबके ऋणी है।

जो कुछ भी इस पुस्तक में है, वह सब उन्हीं का है मेरा कुछ नहीं है। फिर भी कुछ त्रुटियाँ रह गई हो तो विद्वतगण मुझे क्षमा करे, तथा अवगत कराये ताकि हम अगले संस्करण में परिमार्जित एवं परिवर्धित कर सकें।

कनकगिरि तीर्थ क्षेत्र पर भगवान विजय पार्श्वनाथ एवं अनंतबल केवली के नाम स्मरण मात्र से ही उनकी चरण निश्रा में यह वर्षों से विचारित कार्य चैत कृष्णा अष्टमी से चैत शुक्ला चौथ शनिवार को पूर्ण हुआ, इसका मुझे अत्यंत हर्ष है और विश्वास है कि यह ग्रंथ चिरकाल तक सज्जन पुरुषों का हित और उन्हें हर्षित करता रहेगा। इत्यलं विस्तरेण

येन येन यथा यद्यद्यथा सवेद्यतेऽनघ !
तेन तेन तथा तथा संमनुभूयते। **-योगवासिष्ठ**

जिस वस्तु का जिस भाव से चिंतन किया जाता है, वह वस्तु उसी प्रकार से अनुभव में आने लगती है।

अत्ता हि अत्तनो नाथो अत्ता हि अत्तनो गति।
तस्मा संञ्जामयत्तानं अस्सं भद्रं व वाणि जो ।। **-धम्मपद**

मनुष्य स्वयं ही अपना स्वामी है और स्वयं ही अपनी गति है। इसलिये जिस प्रकार कोई व्यापारी अपने उत्तम घोड़े को वश में रखता है, उसी प्रकार मनुष्य अपने आपको संयत रखें।

समुद्र में रहने बाला बिंदु समुद्र की महत्ता का उपभोग करता है, परंतु उसका उसे ज्ञान नहीं होता। समुद्र से अलग होकर ज्यों ही अपनेपन का दावा करने चला, कि वह उसी क्षण सूखा। उस जीवन को पानी के बुलबुले की उपमा दी गई है। इसमें मुझे जरा भी अतिशयोक्ति नहीं दिखाई देती। **-मो. क. गाँधी**

27. परिशिष्ट

इस मेटर को जैन बोधक मुनिविहारांक पत्रिका 1939 से लिया गया है ।

RESTRICTION ON DIGAMBER JAINS

PROTEST AGAINST RECENT ORDERS

DEPUTATION OF DIGAMBER JAIN APPEAL TO THE GOVERNMENT

The members of the deputation of Digamber Jain Community of H.E.H. the Nizam's Dominions have addressed the following to the Hon'ble the Members for Public Works, Ecclesiastical Department, and Revenue and Police, H.E.H. the Nizam's Government :-

The Members of the deputations of the Digamber Jain Community Of H.E.H. the Nizam's Dominions, most respectfully beg to submit herewith their heartfelt grievances regarding the recent order of H.E.H. the Nizam's Government issued by Circular No. 2650 dated 10th July, 1938. corresponding 4th Shahrewar 1347 Fasli, restricting the free movements of Digamber (Nude) Jain saints within the territory of H.E.H. the Nizam's Government and providing that such nude saints can go from one place to another during the hours of 12 to 4 at night.

Religious Injunctions

The above order outs at the root of the principles, philosophy and rituals in the daily use in the life of Digamber Jain saints, as enjoined in the code of religious injunctions prescribed for Digamber Jain sect and established by long usage. Such a nude sadhu is prohibited from walking or even talking at night. He observes a life-long vow of silence after sunset, he takes food and water only once in day time during 24 hours. The Jain scriptures have specifically laid down that Digamber Jain saints cannot accept food on invitation or by appointment nor can they take food if it be taken to them where they are staying. They move in any corner of the street for meals and where ever they find any house of a Jain, they enter there on the request of the pious house-holder, provided their special vow at the time of starting for meals if fulfilled. If that vow cannot be fulfilled at one house, they move to other houses, and if fulfilled nowhere they must fast that day. This sort of penance is called 'Vrittiparisankhyan' in the Jain scriptures. Again they have to move about in the city for going to temples. It is also enjoined that they must go out of towns for answering the calls of nature. Similarly they have to move about for attending the religious functions, wherever they take place.

HOSPITALITY OF SAINTS

The Jain scriptures have specifically laid down that a Jain house-holder should try his level best to offer alms to Digamber Jian saints. On account of the special efficacy the Jians deem it as a most fortunate and auspicious hour of life, when they get the opportunity of offering meals to the Digamber Jain ascetics and if a Jain house-holder is deprived of such opportunity of offering food, they are thrown into irreparable grief, which nothing can allay.

REASONS FOR NUDITY

Their vow of non-violence and of renunciation of worldly things is disturbed by clothings. There is neither the intention to violate the sanctity of society nor to injure the sentiments of others. It is purely a religious practice for one who has conquered his own passions and raised himself to the extraordinary height of spirituality. The Digamber Jain saints, who have sufficient time by way of probation to subjugate their passions and who have made their hearts pure, should not be interfered with in their movements or activities simply on the pretext taht the so-called decency is assailed thereby. " Mind is its own place that maketh a hell of heaven and heaven of hell."

SOURCE OF REVERENCE

Their unkempt and unadorned body, which becomes emanated due to the severity of penances is a source of reverence even in the mind os females. On account of this very strict and hard life of morality only a handful of such saints are seen moving in all parts of India.

The Mohammedan poet has best expressed the importance of nudity in the following verse :-

"There is no other apparel superior to nudity, for this dress has no right or left."

NUDITY AS MEANS TO SALVATION

The saints of Digamber Jain seet have for ages past travelled in the country preaching Jain religion and philosophy in their natural nude grab. In ancient times several monarchs have up their kingdom and embraced the vow of nudity. Chandragupta Maurya, the valiant ruler, become a naked Jain saint before B.C.days. Amogh Varsh, Kharavella and a host of emperors valued nudity more than mighty kingship. As a matter of fact nudity is not n end in itself, but means to an end, i.e.salvation.

IN ANCIENT TIMES

Rig Veda, the the most ancient documents known to the modern world mentions about the unclothed (Digamber) saints.

When Alexander the Great came to India, he came across many a Digamber saints who were welcome to the houses of wealthy persons and who were worshiped by many a women.

Vide Mc. Crindle, Ancient India page 70-71.

UNDER MOGHUL EMPERORS

Emperor Baber admonished his son to respect the sentiments of all sects. King Akbar had feelings of reverence for Jain saints. Emperor Jehangir had issued Firman, dated 1608 A.D. which orders non-violence and non-killing of animals. The Jain Acharyas by their character, attainments, and scholarship commanded the respect of Mohamedan Sovereigns like Alauddin and Auranzeb.

Vide "Studies in South Indian Jainism" by Aiyangar, Part II, Page 132.

King Hyder Ali specially preserved the world reputed colossal nude Jain idol of saints Gammateshwar about 58 ft. high in Shrawan Belgola, Mysore.

QUEEN VICTORIA'S PROCLAMATION

The Proclamation of late Her Majesty Queen Victoria, the Empress of India, addressed to the Princes, Chiefs and people of India, sheds sufficient light upon this point. The Proclamation states "We declare it to be our Royal will and pleasure that none be any way favoured, none molested, by reason of their religious faith or observances, but that all shall alike enjoy equal and impartial protection of the law and we do strictly charge authority under us that they abstain from all interferences with their religious belief on pain of our highest displeasure."

This was repeated and reafflermed by King-Emperor, Edward VII, on 2nd November, 1938.

JAINS ON OTHER STATES

The Jains saints right of free movement has been uninterruptedly enjoyed from the pre-Vedic periods, till the modern times in British India as well as in Indian Sates.

Vide the copies annexed herewith

1. Copy of the Order of Prime Minister of Indore Sate, dated 26th July, 1926.
2. Copy of the Order by which the above order os corroborated, dated 28th March, 1926.

3. Copy of the Order of the District Magistrate, Bhopal Sate.
4. Copy of the Order of the District Magistrate, Gudgaon, Delhi Province, dated 25 th Feb. 1932.
5. Copy of the Order of the District Magistrate, Nasirabad, dated 30th May 1931.

Now, everywhere in British India and in Indian States, nearly 20 naked Jain saints are moving about freelyin the places mentioned in the Newspaper Jain Bhodak, dated 21-7-38.

H.E.H'S.POLICY

It has been the declared policy of His Exalted Highness the Nizamnot to interfere in the religious duties and rituals of any community. The above policy of "treating all equally" was reaffirmed in the speech of H.E.H. the Nizam, on the occasion of the last Birthday celebrations.

RECENT GOVERNMENT ORDER

We are inclined to think that the Government order has been passed through a misapprehension of facts. As it stands, it threatens the very existence of the Digamber Jain religion, it forbids Jain saints from following the clear injunctions of their religion, it deprives the Jain house-holders of their inherent birth-right of benefitting from religious instructions and uplifting discourses, which were not denied until recently.

In view of the above facts and the historical reference here in before mentioned and in view of H.E.H. the Nizam's avowed policy of noninterference in the religious freedom, rights and privileges of the loyal subjects, we most humbly and respectfully pray Your Honours that you will advise the Hon'ble Members of the Executive Council and through it H.E.H. the Nizam to repeal the above order and to pass forthwith the gracious and unconditional orders allowing the free and unhampered movements of Digamber [Nude] Jain saints in H.E.H. the Nizam's Dominions and to oblige the entire Jain community spread all over India.

LIST OF HISTORICAL BOOKS ON JAINISM.

Names of books.	Names of Authors.
1 Digamber Jain Saints of india.	C.C. Boshal, M.A.,B.I.,
2 The Nudity of Jain Saints.	C.R.Jain, Bar-at-law.
3 Digambertwa and Digamber Munis.	Kamataprasad Jain, M.R.A.S.,
4 Studies in South Indian Jainism.	Prof. Ramswamy Aiyangar, M.A.,and Seshgir Rao, M.A
5 Yule's Marco Polo Vol. II Page 366 and Hari Page 364.	
6 Travels in the Moghul Empire.	Bernier.

7	Journal of the Royal Asiatic Socity of London.	
8	Jains and other Antiqaity of Muttra.	Sir V. Smith.
9	Asiatic Researches	Sir William Jones.
10	Quaterly Journal of the Mythic Society, Bangalore ,Vol.22,Page 62.	
11	A Dictionary of Jain Bibliography Page.68	V. S. Tank.
12	History of India as told by its Historians Vol. I-II and III. From 1861-1871 Vol.III Page 13 to 14	Sir H. M. Elliot. and Prof. John Dawson.

******

Reference to rules to be observed by Digamber (Nude) Jain Saints as found in Jain scriptures :-

	Name of the Book	Page	Subject
1.	Moolaradhana	1187	Walking during day time only.
2.	"	433	Rules regarding the way of accepting food by Jain Saints, "Vrittiparisankhyana"
3.	Anagar-Dharmamrita	322	Prohibition of movements at Night of Jain Saints.
4.	"	314	Saints should walk during daytime only.
5.	"	483	Rules regarding acceptance of food by Jain Saints.
6.	Moolachar	245	Refraining from taking food at night.
7.	"	11	Movements during day-time only.
8.	Acharsar	96	Prohibition of movements during night time.
9.	Sanyasa Dharma, by C. R. Jain Bharat-law	26	Nudity indispensable for a Jain Saint.

******

List of printed photos showing the cities visited by Digamber Jain Saints on various occasions. :-

1 Photo of Acharya Shantisagar and his disciples welcomed by Sangli State Government.
2 Photo of Sri Shantisagar and his disciples with the Chief of Sangli.
3 Photo of Sri Shantisagar Acharya and his disciples with the Chief of Miraj State.
4 Photo of Sri Shantisagar and his disciples at Delhi.
5 Photo of Sri Shantisagar saint while taking meals at Paraswanath hills Hazaribagh District, Behar Provience.
6 Photo of Sri Shantisagar Saint at Latur, District Osmanabad.
7 Photo of Sri Shantisagar Acharya and a host of Digamber Jain Saints at Beawar, Ajmer District.

NASIRABAD

Dated the 30th May 1921

To,
The Cantonment Magistrate,
NASIRABAD

Sir,

We the members of the Jain Community of Nasirabad beg most respectfully to inform you that our Digamber Jain Sadhu who is held in all reference throughout the whole Jain Community and who has recently paid visit to Ajmer is now-a-days in the surroundings villages of Nasirabad and is expected to honour this place with his August visit. The Jain Sadhu is a model of high morals and having renounces all wordly things remains in secluded places without even having on his body any garment. We shall feel, therefore, obliged by you giving us the usual requisite permission for which we shall feel obliged.

NASIRABAD

(Sd.) TARACHAND,
(Sd.) RAJMAL SANT HIE

30-05-21

Order Sanctioned.
(Sd.) N.D.O. Toole Capt.
1/94th R.I.,Offg. Cantonment Magistrate.
Certified to be true copy.
(Sd.) H.Samad Lahn, Head Clerk,
Cantonment Committee's office
Nasirabad

इस सम्बन्ध में विषय के लिए उपयुक्त ऐसे ग्रन्थोंके दो चार स्थल जो डेप्युटेशन में पेश किये वे निम्न प्रकार है. ।

MOOLACHAR : P. 245. Subject-Abstention from food at night.

For the observance of the principal of nonviolence, the Jain Nude Monks do not take meals during the night, nor do they move for the same during the night, because if a Saint enters the house of some body in the night people may have evil suspicions with respect to him. The house-holder may also have to face a great deal of difficulties because animals, thieves and others may enter into the house and disturb the peace and tranquility o the laity.

P. 16. Subject :-Movement during day time only.

The Nude Jain Saint should move about in the day, when the objects and other insects are clearly visible, so that their vow of non-violence in movements known as "Irya Samiti" or (Carefulness in Walking) may be properly observed.

Acharsar :- P. 96. Sloka 14-15

Subject :- Prohibition of movements during night.

The movement during night should be abstained with view to protect their Muni-dharma.

Anagar-Dharmamrit :-Page-322.

Subject :- No movement during night.

" By the movement during night the Saints" "Shila penance is transgressed. "

P. 314. Subject :- Walking during day only.

"The saint should move only in the day and NOT DURING THE NIGHT in order that the insects may not be killed by the compassionate Saint.

P. 483-84. Subject Rules regarding the acceptance of food by Jain Saints.

"The Saint should take his meals only when his particular kind of vow with respect to the host or the meals or other things is complied with when the Saint moves about in quest of meals. "This sort of vow is known as " Vritti-Parisankhyan" i.e. the Limitations and self-imposed restrictions about ones own meals.

Moolaradhana. P. 1187. Subject :- walking during day-time only.

"When the Saint moves in the day-light he is said to have observed the purification by the light. In other kinds of lights the objects are not so clearly visible as they are in the day-time. This is technically called as Udyata Shuddhi-(Purification by Light)

P. 438 Subject :- Special penance of Jain Monk when accepting the meals called " Vritti-Pari-Sankhayana".

For instance

" If I get my meal in a particulars direction or Lane or by a person of particulars type, only then I will take my meals, otherwise not." In this way sometimes the Saint has to move about many times and in many places for getting his meals, so that per chance his special vow be fulfilled in other place.

COPY OF AN ORDER DATED 15-03-1925 FROM ISHAGARH

From,

The Assistant Inspecter General of Police
ISHAGARH (Guna)

To,

The District Superintend of Police (Dist) Ishagarh

Petition has been received from Digamber Jain Community of Radhogarh & Guna through their respective pleaders, requesting that their Gurus (Nude Saints) have arrived here, that no restrictions in their free movement be imposed, that the order be issued from this end to the Inspectors of the District to this effect.

ORDER

On examining the certificates given for these saints by the Police Commissioners of Indore & Bhopal, testifying that these Digamber Jain Nude Saints Possess a highest moral character. Hence this is to advice you that no restrictions or ban what soever be put in their free movement in the district.

(Sd.) Assist. Inspector,
General of Police, Ishagarh,
Copy to Sub-Inspectors of Police
Ishagarh.

OFFICE OF THE DISTRICT MAGISTRATE, BHOPAL GOVERNMENT

The applicant made the application at my house stating that the two sadhus of their religious orders were at Shore and two at Salamatpur. The applicant and his caste people wish to bring the Sadhus here, because Sadhus are their religious Leaders whom they hold in high esteem. We ask for five police constables to be given us on payment of their charges so that under protection of these constables the Sadhus may be brought here safely with honor. The Sadhus go naked, therefore it is apprehended that people might vex or molest these on the road. In the Kotvali there is scarcity of constables they may therefore be supplied from the reserve Police. The applicant is therefore permitted to present this application to the Inspector General Police, Bhopal state.The a fore said officer will 1926 requesting for orders to remove all restrictions upon the movements of Digamber Jain Sadhus and Munis when they visit Indore, as they have renounced all wordily things and are held in high reverence by the entire Jain Community through out of India, and who is accordance with their tenets of their religion move about naked without any garments on their body so that the Police may not molest them or restrict their movements in any way.

ORDER

Instructions should be issued to the Inspector General of Police that the Digamber Jain Sadhu and Munis who according to the tenets of their religion and sacred scriptures move about naked without any garment on their body may not be apprehended or prosecuted under section 33(7) of the Indore Police Act of restricted, obstructed or molested otherwise in as much as it has always been the well established Policy of his Highness Government not to interfere in the religious practice of its subjects and the movements of such naked Sadhus have not been restricted in other places as well. (as appears from the Dakhlas produced by the applicant.)

Whenever any such Jain Sadhu or muni visits Indore in future the Jain Community will inform Jains should have failed to appreciate the true significance of the rules and the necessity for their existence in their own interests in the present conditions. His Highness the Maharaja, however, has, of regard for their feelings and susceptibilities, been pleased to order that the said rules will not henceforth be applicable to the Digamber Jain Sadhu.

(Sd.) J. L.Mital Legal Remembrance, Sd/- S. M. Bapna,

Sd/- S. M. Bapna, Prime Minister.

(Ex...Officio Secretary in the legal Department), No. 558/L of 85.

Dated L.R's office, Indore, the 28th March 1938. Copy forwarded to the secretary, Muni Vihar Rakshak Committee, C/o, Seth Fateh Chand Kaushalaji for information.

(Sd) for legal Remembrance.

TRUE COPY

Copy of Prime Minister's order dated 26th July 1926 regarding movements of naked Digamber Jain Sadhus and Munis.

READ

Sir, Sarupchand Hukamchand's letter dated 25th July.

A.G.For H.C.
9.08.28

S. P. Babu Rattanlal Sarawagi submitted a report saying that a Jain Saint with about 400 followers was expected on sunday at Ranchi Via Kolibera Khunti on foot. The Saint was naked. He wanted permissions to receive him at Hinoo with a music. As you are in CAMP, I forwarded his report to D.C. and saw him on Saturday evening. D.C. told me that some of the Mohamedans submitted a report requesting him to stop the processions with the naked Sadhus. D.C. told me that he had himself seen Digamber saints before and there is no objection to allow Rattanlal Babu to receive his Saints with music and asked me to issue the usual licence. The Saints arrived this morning at about 9 a.m. The procession passed peacefully. The Saint is on his way to Parasnath Hill. He is coming from Mysore on foot. He does not travel on railway or any conveyance. He never puts on any cloths. The party will stay for two days and then proceed to Parasnath Hills. They are coming in the old Commissioner compound near the Ranchi lake.

For information

Sd/- R.K.Banerjee,
18/2
Kotval S.I.with two H.C. and 6 constables was with the procession.

Sd/- R.K.Banerjee, 13-2
S.P. the original application with D.C. order on it is attached herewith for persual.
Sd/- R.K.Banerjee,13-2
Sd-D.S.P.Ranchi
Sd- A.G.
For H.C.9.8.28

To,

The Superintendent of Police
HAJARIBAGH

Sir,

We the members of the Digamber Jain Community, beg respectfully to inform you that our Jain Saints or "Munis" are observing Chaturmasya (will stay for four months from Asarnsudi to Karticsudi 14, corresponding to 30th November 1938) at Jhumri Telaiya.

The Munis are models. They have renounced all wordly things in accordance with their religious tennet and scriptures, more about naked without any garments upon their body and are held in high reference in the Jain Digamber Community.

It has always been the established Police of the British Government not to interfere in the religious practices of its subjects.

It is prayed that police may be kindly ordered not to interfere with or restrict their movements in any way.

Dt.the 25th July,1938

(Sd.) MANGILAL SHETY,
SECRETARY OF JAIN TEMPLE,
(Sd.) JAGANATH PA NDEY,
ASST.SECRETARY OF JAIN TEMPLE,

Kindly arrange to have five constables supplied to the applicant.

Sd./-Abdul Bashir,
District Magistrate.

COPY OF THE ORDER ISSUED ON 25.02.32 FROM THE FIRST CLASS MAGISTRATE OFFICE, GUDGAON DISTRICT, TO THE SUB-INSPECTOR OF POLICE, FIROZPUR ZIRKA.

The Sub-Inspector of Police Firozpur Zirka is hereby informed that he should make proper arrengements for the safety of Digamber (Nude) Jain Muniji, who is staying at Firozpur Zirka,

At the time of his departure from Firozpur Zirka town proper Police aid should be rendered upto Firozpur Thana Limits, so that no trouble may occur.

The Digamber (Nude) Jain Saints have been freely moving about, in past all over India and in the Gudgaon District, in this very garb, and we are in duty bound for their proper protection.

(Sd.) Choudhary Pratap Singh
First Class magistrate,
Dist. Gudgaon.

RATTANLAL SURAJMAL RANCHI,

Dated the 9th Feb 1928.

To

The Superintendent of Police
RANCHI

Sir,

I beg to state that a naked Jain Saint with two naked disciples and hundred of devotees, is coming here to my place on the 12 or 13th instant. He will enter the town through Doranda main road through club road and stay at the Jain temple north of the college, whom we have to bring with procession and music.

I therefore request you to kindly grant me permission for music and procession on any of the afore said dates.

Sd/- RATTANLAL
Submitted to S.P. for consideration and others
Sd/- M.N. AIKOT,
S.I.KOTWALI
P.: Licence no. 28 of 28 issued.
FILE
Sd/- R.K.BANERJEE FOR S.P.
Sd/- D.S.P. RANCHI

NAGPUR

I am perfectly acquainted with the Digamber Jain Saints. They move nude in the whole of the Central Provinces and Berar without any obstruction or prohibition from the Government of this province. On 2.01.28, Acharya Shanti Sagarji Maharaj visited Nagpur and lived here for a couple of days. On 19.05.38 Shree Desh Bhushan maharaj arrived here from Amroti and after going to Chindwara and Seoni he again returned to Nagpur on 10.07.1938.

On the request of the jain community , the Police had make elaborate arrengements on 10.07.1938. to take Shree Desh Bhushan Muni through the streets of Nagpur. They can move here free without any hindrance.

SD/-K.C.DIWAKER
S.I.OF.POLICE,
SITABULDI,
NAGPUR,C.P.

D.29.10.1938

(TRUE COPY)

COPY OF ORDER OF THE DISTRICT SUB-JUDGE'S COURT, UJJAIN

In the court of Raja Bahadur, Ashtana,M.A.LL.B. District sub-judge ujjain.

Re:petition by seth Hiralalji son of Kalyanmalji, regarding the movements of Jain Saints in Nude condition and their being no prohibition for the same.

No. 39/20-1995 Seal of Gwalior State

It is here by certified that in Ujjain city proper and else where in the state, Jain Saints move in naked condition and there is no prohibition to their movements.

Sd.1 RAJA BAHADUR SAHEB
ASHTANA M.A.LL.B.
Dist, Sub-judge, Ujjain.

Certified that the order is true.
D.21.09.38
Sd.

Compared and found true.

Date of petition 21.09.38
Preparation time 21.09.38
Date of granting true copy 21.09.38
words. copy changes
116 6.

7 November 2006

To,

Shri K.V.S.Moorthy, A.D.G.P. - Law and order
Chennai. 7

Dear Sir,

Sub : Request for Police Bandobust.

As our Digamber Jain Saints "Acharya Sri Vardhamansagarji Maharaj", "Acharya Sri Viragsagarji Maharaj" and "Acharya Sri Gunnanadiji Maharaj" along with their disciples are going on a padayatra from Vandavasi- Poonurmalai Hills to Karnataka (Via Kanchipuram, vellore, Villipuram, Pondicherry, Tiruvannamalai, Krishnagiri) after finishing chaturmas, for a darshan trip to all the ancient Jain heritage temples in and around Tamil Nadu. We request you to kindly arrange for a police bandobust so as to enable our saints a free and safe journey. Kindly do the needful.

Thanking you,

Respectfully yours,

Mr. M.K.Jain,
(For Shri Bharatwarshiya Digamber Jain Mahasabha)

Office of the
Director General of Police
Chennai. -600 004

C.No. 114213/ Con. IV(2)/2006 Dated
14.06.2006

MEMORANDUM

Sub : request for Police Bandobust -reg.

Ref: Petition of Shri Bharatwarshya Digamber Jain (Teerth Sarankshini) Mahasabha, dated 14.06.2006

A copy of petition is enclosed herewith,

2. The Superintendents of Police, Krishnagiri, Tiruvanamalai, Villupuram and vellore are requested to take appropriate action in this regard.

For Director General of Police.

To
The Superintendents Of Poilce, Krishnagiri,
Tiruvannamalai,
Copy to the Inspectors General of Police,
North Zone, Chennai.
Copy to the Inspectors General of Police,
West Zone, Coimbatore.

June 14,2006

To,

Shri K.V.S.Moorthy, A.D.G.P. - Law and Order
Chennai.

Dear Sir,

Sub : Request for Police Bandobust.

As our Digamber Jain Saints "Acharya Sri Vardhamansagarji Maharaj", "Acharya Sri Viragsagarji Maharaj" and "Acharya Sri Gunnanadiji Maharaj" along with their disciples are going on a padayatra from Banglore, Karnataka, to Tamil Nadu (Via Krishnagiri, Tiruvannamalai, Villupuram and vellore) for a darshan trip to all the ancient Jain heritage temples in and around Tamil Nadu. We request you to kindly arrange for a police bandobust so as to enable our saints a free and safe journey. Kindly do the needful.

Thanking you,

Respectfully yours,

Mr. M.K.Jain,
(For Shri Bharatwarshiya Digamber Jain Mahasabha)

GOVERNMENT OF HIS HIGHNESS THE MAHARAJA HOLKAR LEGAL DEPARTMENT NOTIFICATION.

Dated the 29th March 1935.

In Continuation of Legal Department Notification No. 19, dated 26-9-34 promulgating certain rules under section 42 (1) © of the Indore Police Act, it is hereby Published for general information that the object of the said rules was (1) to give adequate protection to those naked Sadhus and Munis who according to the tenets of their religion could not put on any garment but who nevertheless came within the purview of section 33 (7) of the Police Act and (2) to ensure against breach of peace whenever the appearance in a public place of any such Sadhu or Muni annoyed others and his freedom of movement was on that account objected to by the members of other communities.

The Digamber Jains, however, felt that the rules would cause an unnecessary encroachment on their religious liberty and submitted representations of His Highness the Maharaja for exempting the Digamber Jain Sadhus from the operation of the rules.

It is to be redrafted that the Digamber Jains should have failed to appreciate the true Significance of the rules and the necessity for their existence in their own interests in the present conditions. His Highness the Maharaja, however, has, of regard for their feelings and susceptibilities, been pleased to order that the said rules will not henceforth be applicable to the Digamber Jain Sadhu.

(Sd)- J. L. Mittal Legal Remembrance,
(Ex-officio Secretary in the Legal Department.)
No. 558/L of 85.

(Sd)- S.M. BAPNA
Prime Minister

Dated L.R's Office, Indore, the 28th March 1938. Copy forwared to the secretary, Muni Vihar Rakshak Committee, C/o, Seth Fateh Chand Kushalji for Information.

(Sd)- for Legal Remembrancer

TRUE COPY

Copy of Prime Minister's order dated 26th Julky 1926, ragarding movements of Naked Digamber Jain Sadhus and Munis.

READ

Sir Sarupchand Hukamchand's letter dated 25th July 1926 requesting for orders to remove all restriction upon the movements of Digamber Jain Sadhus and Munis when they visit Indore, as they have renounced all wordly things and are held in high reverence by the entire Jain community throughout India, and who in accordance with the tents of their religion move about naked without any garments on their body so that the Police may not molest them or restrict their movements in any way.

Order

Instruction should be issued to the Inspector General of Police that the Digamber Jain sadhu and Munis who according to the tents of their religion and sacred scriptures move about naked without any garments on their body may not be apprehended or prosecuted under section 33 (7) of the Indore Police Act or restricted, obstructed or molested otherwise in as much as it has always been the well established Policy of his Highness' Government not to interfere in the religious Practices of its subjects and the movements of such naked Sadhus have not been restricted in other places as well. (as appears from the Dakhlas produced by the applicant)

Whenever any such Jain Sadhu or Muni visits Indore in future the Jain community will infrom the Inspector General of Police of his arrival and the Police will thereupon follow the inspections laid down above.

Superintendent
Prime Minister's Office.

OFFICE OF THE DISTRICT MAGISTRATE BHOPAL GOVERNMENT

The applicant made the application at may house stating that the two Sadhus of their religious orders were at Sehore and two at Salamatpur. The applicant and his caste people wish to bring the Sadhus here, because Sadhus are their religious Leaders whom they hold in high esteem. We ask for five Police Constables to be givan us on payment of their charges so that under protection of these constables the Sadhus may be brought here safely with honour. The Sadhus go naked, there for, it is apprehended that people might vex or molest these on the road. in the Kotwali there is scarcity of Constables they may therefore be supplied from the Police. The applicant is therefore permitted to present this application to the inspector Genral of Police, Bhopal State. The aforesaid officer will kindly arrange to have five constables supplied to the applicant.

(sd.) Abdull Bashir,
District Magistrate.

OFFICE OF THE INSPECTOR GENERAL OF POLICE, BHOPAL. EXTRACT OF ORDER.

Whenever Sunderlal applies for constables, two constables must be given to him from the Kotwali for preserving peace and order. In the Kotwali these two constables might be replaced by orders under this order and pay of two constable Rs.9 each amounts to Rs.18 must be recovered from Sunderlal by the Kotwal and remitted to this office by the Kotwal after the departure of the Sadhus that all went well with them.

(sd.) Mubarak Ali " In charge'
Inspector General of Police.

This order procured by Sunderlal son of Mulchand Choudhari of Bhopal from the Bhopal Courts for the occasion of the coming of the four sadhus here.

श्री आचार्य शांतिसागर महाराजने अपने संघके साथमें जब सम्मेद शिखरके लिए विहार किया तब संघसेवाके लिये दो पुलिस निजाम स्टेटसे दिये गये थे और सर्व अधिकारियोंको संघकी व्यवस्था के लिए सूचित किया था

———×———

मुरासिला बहकमा कोतवाली जिला गुलबर्गा शरीफ ।
निशान १८९ सीगा [विभाग] इन्तेजामी [प्रबंधक] ता. ३ बहमन १३३७ फ.
निशान मिसल १७।४ बाबत सन् ३७ फसली.

निशान मिसल मे सन	निशान रूबकार में तारीख	मुकदमा
	२ बहमन सन १३३७ फसली	जैन नग्न साधुओं के भ्रमण की आज्ञा

मुहम्मद जलालुद्दीन मोहतमिम कोतवाली जिला गुलबर्गा की ओर से मि. बालचंद कोठारी बी. ए. एल एल बी. वकील गुलबर्गा निवासी के नाम उत्तर में निवेदन है कि आपके प्रार्थनापत्र अनुसार अब्दुलकरीमखां और आबाजीराव नामक दो जवान (सिपाही) आज ता. ३ बहमन सन १३३७ फसली को एक मास के लिए रवाना किए जाते हैं । अतः समय अवधि की समाप्ति पर दो इफ्फ्रदम सन १३३७ फसली को वापिस कर दिए जावें ।

हस्ताक्षर---- मोहतमिम कोतवाली की आज्ञानुसार
३ - २ - १३३७ फसली.

مراسلا محکمہ کوتوالی ضلع گلبرگہ شریف واقع ۳ بہمن سنہ ۳۸ ف

نشان ۱۸۹ صیغہ (انتظامی) نشان مثل $\frac{98}{ع م}$ بابتہ سنہ ۳۸ ف

نشان مثل معہ سنہ	نشان روبکار معہ تاریخ	مقدمہ
	مرخہ ۲/ بہمن سنہ ۳۷ ف	شانتی ساگر مہاراج جین منی اجازت سفر سادھو

منجانب محمد جلال الدین مہتمم کوتوالی ضلع گلبرگا شریف

بخدمت مسٹر والچند کوٹھاری بی - اے - ایل - ایل - بی وکیل ساکین گلبرگہ جواباً ترقیم ہے کہ حسب درخواست آپکے دو جوانان مسمیان عبدالکریم خان و آباجي راو آج بتاریخ ۳/ بہمن سنہ ۱۳۳۷ ف - ایک ماہ کے لیے روانہ کیے جاتے ہین - لہذا بعد ختم مدت تبایخ دوسری اسفندار سنہ ۱۳۳۷ ف واپس کردیے جاین فقط -

شرحد ستخط

حسب تجویز خاص مہتمم کوتوالی

۳۷/۳/۳ ف

(नागरी लिपि)

(असल उर्दु पत्र) वकारावाद

ता. ७ जमादी उल आखर हिजरी १३४६.

पायगा
सरविश्ह उमरा
महकमे अव्वल तालुकदारी

खिदमत जनाब श्री शांतिसागर महाराज,

मुझे कुछ अर्सोंके अबूब इत्तिला मिली थी के आप कसबे आलंद को तशरीफ लानेवाले हैं. मैने ए मालुम करके के आप हमारे इलाके की पुरअमन जैन रियायाके मोहत्तरम गुरु हैं. इरादा किया के जब आप हमारे इलाके में तशरीफ लाएं तो बनात खुद आप का खैर मुकदम करू मुझे अफसोस है के मैं अपने इरादे को पूरा न करसका. वजे हुई के आपकी तशरीफ आवरीकी तारीख बतोर सही मुझे ऐसे वक्तपर मालुम न हो सकी के मैं आलंद आने के लिए वक्त निकाल सकता लिहाजा जरिए हाजा अपने न आ सकने पर अफसोस का इजहार करता हूं. मुझे उमीद है के आलंदका कयाम आपके लिए बाअस मसरत होगा फकत्.

अव्वल तालुकदार
जिला वकारावाद.

(हिंदी भाषांतर)

पायगा वकासह–उमरा
महकमा अवल तालुकेदार

वकारावाद
७ जमादी उल आखिर
सन १३४६

जनाब श्री शांतिसागरजी महाराज की सेवामें

मुझे कुछ कालके पूर्व सूचना मिली थी कि आप उक्त कसबा में तशरीफ लानेवाले हैं। मैंने यह मालूम करके कि आप हमारे इलाका की शांत जैन प्रजाके आदरणीय गुरु हैं, इरादा किया कि जब आप हमारे इलाका में तशरीफ लायें तो स्वयं आप का स्वागत करूं। मुझे शोक है कि मैं अपने इरादा को पूरा न कर सका। कारण यह कि आपके आगमन की ठीक तिथि मुझे उस समय मालूम न हो सकी कि मैं आलंद आने के लिए समय निकाल सकता। लेकिन इस तरह आपके न आसकने पर शोक प्रकट करता हूं। मुझे आशा है कि आलंद में ठहरना आपके लिये प्रसन्नता का कारण होगा।

अवल तालुकेदार जिला वकारावाद.

پایگاہ وقار الامراء وقار آباد

محکمہ اول تعلقدار ۷/ جمادی الاخر سنہ ۱۳۴۲ ہجری

خدمت جناب شانتی ساگر جی مہاراج -

مجھے کچھ عرصہ کے قبل اطلاع ملی تھی کہ آپ قصبہ الند
کو تشریف لانے والے ہیں - میں نے یہہ معلوم کر کے آپ ہمارے
علاقہ کی پرامن جین رعایا کے محترم گروھن ارادہ کیا کہ جب آپ
ہمارے علاقہ میں تشریف لائیں تو بزات خود آپ کا خیر مقدم کروں -
مجھے افسوس ہے کہ میں اپنے ارادہ کو پورا نہ کر سکا - وجہ یہہ کہ
آپ کی تشریف آوری کی تاریخ بطور صحیح مجھے ایسے وقت پر
معلوم نہو سکی کہ میں الند آنیکیلئے وقت نکال سکتا لہذا زریعہ ھذا
اپنے نہ آسکنے پر افسوس کا اظہار کرتا ہوں - مجھے امید ہے کہ
الند کا قیام آپ کے لئے باعث مسرت ہو گا - فقط

اول تعلقدار ضلع وقار آباد

(نقل بمطابق اصل درست ہے)

(भाषांतर)

नकल (प्रतिलिपि) दरखास्त मिनजानिब (और से) गणेशीलाल । इन्तेजाम (प्रबंध) मुनिजी महाराज, व ता. २५-२-३२ इ. अदालत सा. जनरल असिस्टेंट बहादुर मॅजिस्ट्रेट दरजा अवल जिला गुडगांव व अदालत जनाब जनरल असिस्टेन्ट बहादुर मॅजिस्ट्रेट इलाका ।

जनाबे आली (श्रीमान् जी) जैन मुनी फिरोजपुर जिले में आये हुए हैं । चन्द योम (दिवस) में उन का इरादा " अलवर रियासत में " जाने का है । मार्ग में सडक पर एक गांव है । यह ख्याति है कि रास्ता में उन के साथ वारदात की जायगी । कुल रास्ता ८ मील थाना फीरोजपुर की हद का है । बाद अलवर रियासत का अमला शुरू हो जाता है ।

प्रार्थना है कि सब इन्सपेक्टर फीरोजपुर जिला के नाम हुक्म जारी फरमाया जाय कि फीरोजपुर के निवास के दिनों में तथा रास्ते में प्रस्थान के समय ८ मील की हदतक पुलिस का प्रबंध किया जाय । पुलिस के चन्द आदमी उन के साथ चले जावें ताकि उन को हर्ज न पहुंचे । अति कृपा होगी ।

प्रार्थी—गणेशलाल पुत्र नत्थूलाल सदस्य कमेटी दौलतराम पुत्र दिलसंग रामगोन
(गणेशलाल वकलम खुद हस्ताक्षर हिंदी)
२५ - २ - १९३२ ई.

सब इन्सपेक्टर पुलिस फीरोजपुर ज़िलगा के नाम लिखा जाय ताकि जैन मुनियों के भ्रमण के दिनों उन के रक्षण का पूर्ण प्रबंध रखा जाय । और प्रस्थान के समय फीरोजपुर पुलिस-हाऊस से काफी पुलिस फीरोजपुर की हदतक दी जाय, ताकि कोई वारदात न हो जाय और जैनमुनि तमाम भारत में और जिला गुडगांव में वर्तमान अवस्था में एक स्थान से दूसरे स्थानपर जाते रहे हैं । और यह हमारा कर्तव्य है कि उन का योग्य रक्षण किया जाय ।

ता. २५ - २ - ३२ ई.

हस्ताक्षर अंग्रेजी
चौधरी प्रतापसिंहजी सा. बहादुर मॅजिस्ट्रेट दरजा अव्वल,
जिला गुडगांव.

गुडगांव छावनी में मुनिविहार स्वातंत्र्य.

حکـــم کي نقل

نقل درخواست منجانب گنیسی لعل دوارا انتظام منی جی مہاراج منفصلہ ۳۶/۲/۲۵ ع عدالت صاحب حنول استینٹ بہادر مجسٹریٹ درجہ اول ضلع گٹر گاون و عدالت جناب جنول استنٹ بہادر مجسٹریٹ علا قسم -

جناب عالی - جین منی فروزپور جھرکہ مین آئے ہوئے ہین - چند یوم مین انکا ارادہ " الور ریاست مین " جانیکا ہے - سڑک پر - " چند گانون " میون کا ہے - یہہ شہر سے ہیکہ راستہ مین انکے ساتھہ واردات کیجائیگی کل راستہ (۸) میل تھانہ فروزپور کی حد کا ہے - بعد الور ریاست کا عمل شروع ہو جاتا ہے -

گزارش ہیکہ سب انسپکٹر فروزپور جھرکہ کے نام حکم جاری فرما یا جائے کہ ایام قیام فروزپور و راستے مین بروقت روانگی (۸) میل کے حد تک انتظام پولیس کیا جائے یعنی پولیس کے چند آدمی انکے ہمراہ چلے جائین تاکہ اون کو ہرج نہ پہنچے - عین پرورش ہوگی فقط

عرضی فدوی گنیش لعل ولد بھجن لعل ممبر کمیٹی
دولت رام ولد دل سنگ رام گون (گنیش لعل بقلم
خود دستخط ہندی) م ۳۲/۲/۲۵ ع

بحکمت سب انسپکٹر پولیس فروزپور جھرکہ تعریر کیا جائے تاکہ ایام جین منی جی قصبہ فروزپور مین اونکی حفاظت کا معقول انتظام رکھا جائے اور بروقت روانگی از فروزپور جھرکہ اونکی پولیس کی معقول حد و حدود یعنی فروزپور جھر کا تک ریجائے تاکہ کوئی واردات ہو جائے اور جین منی تمام ہندوستان مین اور ضلع گٹر گانون مین موجودہ حالت مین ایک جگہ سے دوسری جگہ جاتے رہے ہین - اور یہہ ہمارا فرض ہیکہ اونکی مناسب حفاظت کیجائے -

مورخہ ۳۲/۲/۲۵ ع
دستخط انگریزی
چودھری پرتاب سنگھہ صاحب بہادر مجسٹریٹ اول درجہ
اول ضلع گٹر گانون

[प्रतिलिपि]

नकल मुरासिले महकमे मोतमद सरकारआली सीगे अदालत कोतवाली व अमूर आमा सीगे

निशान २६५० वाके तारीख ४ शेहेरवर १३४७ फ. १० जुलाई १९३८ ई. आषाढ शुद १३ सं.१९९५ हसबुल हुकम आली जनाब राइट आनरेबल नवाब सर सदरे आजम बहादूर बाबेदुकूमत सरकार आली

अज तरफ मौलवी अजहर हुसेन बी. ए. मोतमद व खिदमत नाजिम साहब अमूर मजहबी सरकार आली } मुमानियत मुकदमा गिश्त (फिरना) वरहना साधू फिरके जैन

व जवाब मुरासिला निशान १२२२ मुताबिक अरदीबहेश्त सन् १३४७ (२६ मार्च ३८ चैत्र वदी १० सं. १९९४ तरकीम है के इस बारे में अरजदाश्त गुजरानेपर मेशनाहे खुसरवी से बजरये फरमाने मुबारक मजीहने (बादशाह का हुकम) ८ जमादिलावल सन ११५७ हिजरी (७ जुलाई ३८ ई. आसाढ सुद १० सं. १९९५) यह हुकम महकमे सरफ सुदूर लाया है जिसमें भी कौंसिल की राय से इत्तिफाक है के मुमालिक महरूसे में बिरहना साधुओं की गश्त (फिरना) लगाने की इजाजत देना मुनासिब नही है अलबत्ता अगर वो एक मुकाम से दूसरे मुकाम पर जाना चाहे तो शब (रात्री) में बारा बजे से चार बजे तक जा सकते है बराह करम हस्बे इजाजत तामील हासिल फरमाई जावे—

(२) मुसन्ने (नकल इसकी) हाजा व जवाब मुरासिले निशान (१८१६ बैन) मौरखे १८ अप्रिलेहरत ४७ फ. सदर नाजिम साहब कोतवाली अजदा (सबबरफ) की खिदमत में व गरज ताइद मुरसिल है—

(३) सालिस व खिदमत कोतवाल साहब बलदा (हैद्राबाद) इतलान व तामील मुरसिल है और एक एक नकल जुमला सुबेदार साहब व तालुकदार साहबान की खिदमत में मुरसिल है फक्त—

अरद दारुलखत मददगार मोतमद

मुनिविहार प्रतिबंधक मूल फर्मान.

نقل مراسلہ محکمہ معتمد سرکار عالی ضیغم عدالت و کوتوالی و امور عامہ واقعہ ۱۰ اردی سنہ ۴۸ف

نشان مجاریہ ۲۴۹ ضیغم مذہبی نشانمثل محکمہ ہزا ۳۹۲ بابتہ سنہ ۴۸ف

حسب الحکم عالیجناب رائٹ آنریبل سر صدر اعظم بہادر باب حکومت

ازطرف مولوی محمد اظہرحسن بی - اے منصرم معتمد	مقدمہ
بخدمت ناظم صاحب امور مذہبی سرکار عالی	اجازت سفر برہنہ ساہو فرقہ جین

بسلسلہ گشتی مراسلہ ۲۶۳۰ مورخہ ۴ شہریور سنہ ۴۸ف دفتر قصد و فرمان مبارک ترقیم ہے کہ حسب رائے کونسل بارگاہ خسروی سے بزریعہ فرمان واجب الاذعان مزینہ ۹ رمضان المبارک سنہ ۱۳۵۸ احکام گشتی مزکور سے فرقہ دیگمبر جین کے برہنہ منی (ساہو) کو ستثنیٰ کرنے کی منظوری صادر فرمائی گئی ہے -

۲ ف ان ساہوں کی ایک فہرست جس میں انکا نام شریک ہیں محکمہ ہزا مین جین ڈپوٹیشن نے داخل کی ہے جسکی نقل منسلک ہے اس فہرست میں اگر کبھی کوئی تبدیلی ہوگی یا ان میں سے کوئی ممالک محروسہ میں آینگے تو اس کی اطلاع نمایندگان جین محکمہ ہزا کو دینگے اور محکمہ ہزا سے آپکو ضروری انتظام کیلیے لکہا جایگا

ایک ایک مشتمل مع نقل فہرست مہولہ صدر ناظم صاحب کوتوالی اضلاع کوتوال صاحب بلدہ صوبہ دار صاحبان و تعلقدار صاحبان اضلاع بیخدمت میں مرسل ہے فقط

مولوی سید ہاشمی صاحب
مددگار معتمد

इजाजत सफर बरहना साधू फिर्के जैन.

निजाम गवर्नमेंट ने ता. ४ शेहरेवर १० जुलाई ३८ को गश्ती [हुकम] नि. २६३९ द्वारा निज़ाम की हद में दिगम्बर जैन [नग्न] साधूवोंका फिरना बंद कर दिया था जिसको ता. ९ रमजान काति. सुदी १० ता. २ नवम्बर १९३८ के हुकम नीचे मुताबिक मंसूख कर दिया है याने वो हुकम दिगम्बर जैन [नग्न] साधूवों पर लागू नहीं होगा.

गश्ती मोतमदी सरकार आली सीगे अदालत कोतवाली सीगे उमरे आमा वाके ६ दय सन १३४८ फसली मंगसर बद ३ सं. १९९५ ता. १० नवम्बर १९३८ निशान मजारिया २३३ निशान मिसल.

तनकी कीगई द. सेगेदार [उर्दू में]

मोहर महकमे निजाम

हसबुल हुकम आलीजनाब राइट आनरेबुल सर सदरे आजम बहादुर बावे हुकूमत

अजतरफ मोलवी महमद अजहर हसन बी. ए. मुनसरम मोतमद बखिदमत संसकरण सेटी साहब जैन सेक्रेटरी. दी जैन स्वत्व-रक्षिणी सभा, बरंगल.

मुकदमा ईजाजत सफर बरहना साधू फिरके जैन

व सरफे सदुर फरमान वाजिबुल अजान मुजयना ९ रमजान मुबारक सन १३५७ हिजरी तरकीम है के फिरके जैन के बरहना मुनि साधू व जैन को गश्ती निशान २६३९ मवाखे ४ शहरेवर सन १३४७ फसली के अहकाम से मुस्तसना किया जाता है [बंदी हुकुम नि. २६३९ जैन साधुवों (नग्न) पर लागू नही होगा] उनकी फेहरिस्त आप ने महकमा हाजा में दाखिल की है जिस में १८ नाम हैं और वायदा किया है के जब इस फेहरिस्त में कोई तबदीली होगी या इनमें से कोई मुमालिके महरूसा सरकार आली में (निजाममें) दाखल होगें तो आप इसकी इत्तला फवरन अब फवरन महकमे हाजा को देंगे त.के इंतजाम मुनासिब किया जासके. फक्त.

सय्यद हाशम मददगार मोतमद.

نوٹ :- امید ہے کہ جوابی مراسلہ میں صیغہ کا داخلہ ضرور درج ہوگا

گشتی معتمد سرکار عالی صیغہ عدالت و کوتوالی و امور عامہ ( )
رافع ۲ / دی سنہ ۱۳۴۸ ف

نشان مجاریہ (۲۳۳) نشانمشل محکمہ ھذا ــــــ بابتہ سنہ ۱۳ ف
ٹیلیفون نمبر (۵۵) نشانمشل مکتوب الیہ ــــــ بابتہ سنہ ۱۳ ف

تنقیح کیگئی

دستخط صیغہ دار

مہر محکمہ ھذا

حسب الحکم عالیجناب رائٹ آنریبل سر صدراعظم بہادر بابحکومت

از طرف مولوی محمد ظہیر حسین بی - اے
منصوم معتمد
بخدمت سنسکرن سیتھ صاحب جائنٹ
سیکرٹری جین رائٹ پریزرویشن
سوسائیٹی ورنگل -

مقدمہ ــــ
اجازت سفر برھنہ
پا دھو
فرقہ جین

بشرف صدور فرمان واجب الاذعان مزینہ ۹ - رمضان المبارک سنہ ۱۳۵۷ ھ ترقیم ھے کے فرقہ جین کے برھنہ منس (سادھوؤں) کو گشتی نشان (۳۶۳۹) مورخہ ۴ - شہریور سنہ ۱۳۴۷ ف کے احکام سے مستثنی کیا جاتا ھے - ان کی فہرست آپ نے محکمہ ھذا میں داخل کی ھے جسمیں اٹھارہ نام ہیں اور وعدہ کیا ھے کہ جب اس فہرست میں کوئی تبدیلی ہوگی - یا جب ان میں سے کوئی ممالک محروسہ سرکار عالی میں داخل ہونگے تو آپ اس کی اطلاع قبل از قبل محکمہ ھذا کردینگے تاکہ انتظام مناسب کیا جا سکے - فقط

شرحد دستخط
مددگار معتمد

[अंग्रेजी भाषांतर]

COPY OF LETTER OF THE OFFICE OF THE COURT, POLICE & ECCLESISATICAL SECRETARY, H. E. H. SHE NIZAM'S GOVERNMENT,

Dated 10th Dai 1348 F.
14th Nov: 1938.

Out-ward Dairy No. [249] Ecclesiastical.

File No. [302] of 1347 F. 1939.

SEAL OF THE OFFICE ON 2 RUPEES STAMP.

TRUE COPY.
(Sd.) Clerk.

According to the order of The Rt. Hon'ble the President of the Executive Council of H. E. H. The Nizam's Government.

From:—Moulvi Md. Azhar Hasan B. A.
Acting Secretary.

CASE.
Permission for travelling to Naked Saints of Jain Community.

To,

The Director, Ecclesiastical Department.
H. E. H. The Nizam's Govt:

In connection with the circular letter No. 2639 of 4th Shahrewar 1347 F. [Dt. 10-7-38.] and Farman-ul-Mubarak, and according to the opinion of H. E. H. The Nizam's Council, and by means of Farman of 9th Ramzan-ul-Mubarak 1357 Hijri you are informed that the naked Saints of Digambar Jain Community are exempted from the orders of the said circular.

The Jain Deputation has submitted a list of these Saints in the office in which 18 names are given; of which copy is attached herewith. The representatives will inform to this Office about any change at any time or anybody coming in the Nizam's Dominions; and this office shall write you for necessary arrangements.

Each duplicate with the said list has been sent to the Director General of District Police, the City Police Commissioner, the District Commissioners and the Collectors.

(Sd.) Moulvi Syed Hashamee Sahcb,
Asst: Secretary.

निजाम स्टेट से प्रतिबंध हटने के बाद मुनिराज नेमिसागर महाराज के आगमन की संभावना देखकर निजाम सरकार को सूचित किया था, तब उन्होंने इस प्रकार प्रबंध के लिए आर्डर किया है। इसी प्रकार आचार्य महाराज के मुक्तागिरी विहार के समय भी निजाम स्टेट में उनका बहुत ही शान के साथ विहार हुआ।

आर्डर सुधरा हुआ ईंतजामी हैद्राबाद

मुरासिला मोतमद सरकार आली सेंगे अदालत कोतवाली व उमूरे आमा सेंगे उमूरे मजहबी बाबत सन् १३४७ फ. निशान मिसल ३०२।१ मुकदमा ईजाजत सफर बरहना साधु.

ब खिदमत अन्वल तालुकदार साहबान अजला बीड, औरंगाबाद, उस्मानाबाद व गुलबर्गा-शरीफ.

ब सिलसिले मुरासिला निशान ४०५ मरखे १ बहमन ४८ फसली नकले दरखास्त मि० संसकरण सेठी सेक्रेटरी अंजुमन ताफूने हकूक जैन मजहब मरखे ४ अमरदाद ४८ फ. मुरसिल व तरकीम है के साधु मुसमी नेमीसागरजी के गस्त के वक्त उन के हमराह ३।४ जवानान पोलिस के रहने का इन्तजाम फरमाया जाय। यह साधु साहब का नाम फहरिस्त साधुवान जैनी ९ पर है जो आपकी खिदमत में भेजी जा चुकी है। यह बरहना (नग्न) साधु अपने रिवाज के मुताबिक जब अपने हम मजहब असखास से मिलने निकलते हैं तो अकसर उन के फिरके के और असखास भी उन के हमराह हो जाते हैं। इसलिए कोई बदनुमाई का एतिमाल (संदेह) नहीं। एहतियातन ४ जवान ही काफी होंगे और जादा की जरूरत न होगी।

मुसन्ना (नकल) ब खिदमत सदर नाजिम सा. कोतवाली अजला वसिलासिले मुरसिल नि. ४०६ मरखे १ बहमन ४८ फ. बगरजे इन्तजाम मुरसिल है।

मुसद्दिम सेक्रेटरी सा. अंजुमन के नाम मुरसिल व तरकीम है के आईंदा इन साधुओं के आने की इतल्ला काफी मुद्दत पहले वसूल होनी चाहिये ताके ईंतजाममें दुशवारी नहो। फक्त.

(सरहदस्तखत) अंडर सेक्रेटरी—अहमद
८ अमरदाद ४८ फ.

श्री आचार्य शांतिसागर महाराज (दक्षिण) व आचार्य शांतिसागर महाराज छाणीका चातुर्मास सन् १९३३ में ब्यावर में हुआ था, उस समय उभय संघका चित्र लिया गया था, उसको वहांके आनररी मेजिस्ट्रेटने सर्टिफाय किया था उसकी नकल. यह चित्र इस अंकमें अन्यत्र छपा है

1. CERTIFIED PHOTO BEAWAR.

Certified that this photo was taken when the Digamber Jain Munis were present at Beawar during the rainy season of 1933.

(Sd.) Naurang Raysharwa,
B. A., A. C. D. S.,
Honorary Magistrate,
Beawar, D/- 7-10-38

ता. ११ । १० । १९२८ को श्रीमुनिराज महेंद्र सागरजी ब्यावरमें थे, उस समय वहांके इनकमटेक्स आफिस बिल्डिंगमें अनेक भक्त मंडलीकें साथ उनका चित्र लिया गया था, उस पर वहांके आनररी मेजिस्ट्रेट साहबने निम्नलिखित प्रकार सर्टिफाय किया है ।

2. INCOME TAX OFFICE BUILDING BEAWAR.

I hereby certify that this photo of his holiness, Digamber Muniraj Mahendrasagarji, was taken with some men and women in front of the Income Tax Office in Court Compound Beawar on the 11th October 1938.

(Sd.) Rangnath Agarwal,
Honorary Magistrate, Beawar.

MOHOR.
HONORARY MAGISTRATE
COURT BEAWAR.

छिंदवाडेमें मुनिराज देशभूषण महाराज गये थे। उनका वहां केश-लोच हुआ। केशलोचका फोटो हमें प्राप्त नहीं होसका, उस समय उन फोटोंको स्थानीय राज्यकर्मचारियोंने सर्टिफाय किया है। उसकी हूबहू नकल यहां दी जाती है।

Deshbhushan Muni, 'Keshlocha'
CHINDWADA.

Certified that the Jain Muni, whose photo this is, was without restriction allowed to move about in this part of the country in the condition as be is in this photo.

(Sd.) P. Chandi,
Adol District & Sessions Judge,
CHINDWADA, C. P.

Certified that this photograph of Keshlochan of Digamber Jain Sadhu was taken at Chindwada on 3-7-33. in the presence of Chindwada audiance.

(Sd.) Vishwanath Prasad,
Ist Class Magistrate, Chindwada.

The above is of a Digamber Jain Saint the hair uprooting ceremony of which this is a photograph, was performed in my presence on 3rd July 1933.

(EUROPEAN OFFICER).

(Sd.) Satvic Ruden,
D. O. S. T., Chindwada.

[हिंदी भाषांतर]

मुरासिला (अज्ञापत्र) महकमा मोतेमद सरकारअली सीगा (विभाग) अदालत व कोतवाली व अमूर आमा (धार्मिक विभाग)

पत्र संख्या २४९ सीगामजहबी (धार्मिक) ता. १० दय स० १३३८ फसली
निशान मिसल उक्त महकमा ३०२ बाबत
(सम्बंधित) १३४७ फसली

निजामराज्य के प्रधान मंत्री की आज्ञानुसार
मौलवी मुहम्मद अजहर हसन बी. ए. मोतेमद
बखिदमत (सेवामें) नाजमसाहब अमूरमजहबी सरकारअली (धार्मिक विभाग)
विषय—जैन सम्प्रदाय में नग्न साधुओंके भ्रमणकी आज्ञा ।

गश्ती मुरासिला २६३९ ता० ४ शेहरेवर सन १३४७ फसली के सम्बंध में शाहीफरमान के अनुसार लिखा जाता है कि शासक कौंसिलकी सम्मतिसे ता० ९ रमजान सन १३५७ हिजरी के शाही फरमान द्वारा उक्तगश्ती की आज्ञाओंसे दिगम्बर जैनसम्प्रदायके नग्न साधुओंको सम्बंधित न करने की स्वीकृति दी जाती है ।

उन साधुओंकी एक सूची जिसमें अठारह नाम सम्मिलित हैं उक्त महकमा में जैन शिष्टमण्डल से प्रविष्ट की है । जिसकी प्रतिलिपि साथ है । इस सूची में यदि कोई परिवर्तन होगा या उनमें से कोई निजामराज्यमें आयेंगे तो उस की सूचना जैन समाज के प्रतिनिधि उक्त महकमाको देंगे । आपकी आवश्यक प्रबंध के लिये लिखा जायगा ।

एक एक प्रतिलिपि सूची की नकल सहित सदरनाजम साहब कोतवाली अजहबी, कोतवाल सा० बख्दा, सबेदारों और ताल्लुकेदारों की सेवामें प्रेषित की गई है ।

हस्ताक्षर—मौलवी सय्यद हाशमी साहब सहायक मोतेमद

27.परम दिगम्बर जैन मुनि
संदर्भित ग्रंथ सूचि

1) सू. पा. - सूत्र पाहुड, पू. आ. कुन्दकुन्द स्वामी कृत
माणकचंद्र ग्रंथमाला, बम्बई

2) मूला. - मूलाचार, श्री वट्टकेर स्वामी कृत
अनंतकीर्ति ग्रंथमाला

3) स. सि. - सर्वार्थसिद्धि, प.पू.आ. पूज्यपाद स्वामी कृत
भारतीय ज्ञानपीठ,बनारस

4) जिन. सं. प्र.-जिनवाणी संग्रह प्रदीप (पीयूष)
श्री वर्णी दि. जैन गुरुकुल
पिसनहारी मढ़िया, जबलपुर (म.प्र.)

5) आरा. - आराधना, प.पू.आ. विराग सागर कृत
श्री सम्यग्ज्ञान दि. जैन विराग विद्यापीठ
भिंड-शाखा देवेन्द्रनगर (म.प्र.)

6) रा.वा. - राजवार्तिक, प.पू. अकलंक भट्टाचार्य
भारतीय ज्ञानपीठ, बनारस

7) गुण. श्रा. -गुणभद्र श्रावकाचार, प.पू. गुणभद्राचार्य कृत

8) बा. वि. -बाल-विज्ञान, प.पू.आ. विराग सागर कृत
श्री सम्यग्ज्ञान दि. जैन विराग विद्यापीठ
भिंड-शाखा देवेन्द्रनगर (म.प्र.)

9) वसु. श्रा. -वसुनन्दि श्रावकाचार, प.पू.आ. वसुनन्दि कृत
भारतीय ज्ञानपीठ, बनारस

10) प.पु. - पद्म पुराण, प.पू. रविषेणाचार्य कृत
भारतीय ज्ञानपीठ, बनारस

11) मू.आ. - मूलाराधना, प.पू.आ. शिवकोटि
सखाराम दोशी, सोलापुर

12) हरि.पु. - हरिवंश पुराण, प.पू. जिनसेनाचार्य कृत
भारतीय ज्ञानपीठ, बनारस

13) णमो. ग्रं. -णमोकार ग्रंथ

14) यो.व. - योग वशिष्ट

15) वि.चू. - विवेक चूड़ामणि

16) हरि.क.को.-हरिषेण कथा कोष
17) आ.क.को.-आराधना कथा कोष
18) णि. कां. -णिव्वाण कांड
19) आ.अनु. -आत्मानुशासन, प.पू. गुणभद्राचार्य कृत
20) ईशाद्य. - ईशाद्यष्टोत्तरशतोपोनिषद
Ed. W. L. Shastri-Paniskar
(3rd ed, Nirnaya Sagar Press, 1925)
21) जै.ध. प्र. -जैन धर्म प्रकाश, ले. ब्र.
शीतल प्रसाद जी (बिजनौर, 1927)
22) जै.शि .सं.-जैन शिलालेख संग्रह, ले. प्रो. हीरालाल
(मा.ग्र. बम्बई)
23) ठाणा. - ठाणांग-सूत्र, श्वेताम्बर आगम ग्रंथ, श्वे. मुनि अमोलक ऋषि कृत
हिन्दी अनुवाद सहित (हैदराबाद, संस्करण)
24) दाठा. - दाठावंसो (बौद्ध ग्रंथ)
Ed. Dr. B.C.Law (Lahore 1925)
25) दि. जै. डा.-दिगम्बर जैन डायरेक्टरी
(श्री खेमराज कृष्णदास बम्बई, 1914)
26) दि. मु. - दिगम्बर मुद्रा की सर्वमान्यता, के. भुजबलि शास्त्री
(आरा, 2486)
27) दीर्घ.नि- दीर्घ निकाय (बौद्ध ग्रंथ)
(Pali Texts Society Series)
28) पंच. - पंचतंत्र (इण्डियन प्रेस. लि. प्रयाग)
29) भद्र. - भद्रबाहु चरित, श्री उदयलाल जी,
(बनारस, 2437 वी.)
30) भ. म. - भगवान महावीर, ले. बा. कामता प्रसाद जैन
(सूरत, 2455)
31) भ.म.बु. -भगवान महावीर और भ. बुद्ध. ले. बा.
कामता प्रसाद जैन (सूरत, 2453)
32) भा.प्रा.रा -भारतवर्ष के प्राचीन राजवंश, सा.श्री
विश्वेश्वरनाथ रेउ कृत भाग 1-3
(बम्बई, 1920 व 1925)
33) मज्झिम. -मज्झिमनिकाय (बौद्ध ग्रंथ)
(Pali Texts Society Series)

34) म.प्रां.जै.स्मा.–मध्यप्रांतीय जैन स्मारक,
ब्र. शीतलप्रसाद जी कृत (सूरत)
35) म.मै.प्रां.जै. स्मा.–मद्रास मैसूर प्रांतीय जैन स्मारक,
ब्र. शीतलप्रसाद जी कृत
(सूरत, 2454)
36) रा.इ. – राजपूताने का इतिहास
रा. ब. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा
(अजमेर, 1982)
37) वि.को.– विश्वकोष, सं. श्री नगेन्द्रनाथ बसु (कलकत्ता)
38) वृ. जै. श.–वृहत् जैन शब्दार्णव भा. 1
ले. श्री बा. बिहारीलाल जी 'चैतन्य'
(बाराबंकी, 1925 ई.)
39) वे. जै. – वेद पुराणादि ग्रंथों में जैन धर्म का अस्तित्व,
श्री मक्खनलाल कृत (दिल्ली, 1930)
40) सागार. – सागार धर्मामृत, सं. श्री लालराम जी
(सूरत, 2442)
41) हु. भा. – हुयेनसांग का भारत भ्रमण,
श्री ठाकुर प्रसाद शर्मा
(इण्डियन प्रेस, प्रयाग, 1929 ई.)
42) जै. हि. – जैन हितैषी, सं. श्री नाथूराम–श्री जुगल किशोर जी (बम्बई)
43) HKL– 'History of Kanarese Literature'
by E.P. Ria (Calcutta, 1921)
44) IA – Indian Antiquary (Bombay)
45) IHQ – 'Indian Historical Quarterly'
ed. Dr. N.N. Law (Calcutta)
46) JBORS – 'Journal of Bihar & Orissa Research Society'
ed. K.P. Jayaswal M.A. (Patna)
47) JG – 'Jaina Gazette'
ed. Mr. C.S. Mallinath (Madras)
48) JOAM – 'Jaina & Other Antiquities of Mathura'
by Sir V. Smith
49) JS – 'Jaina Sutras'
ed. Prof. H. Jacobi (S.B.E., XLV)
50) KK – Key of Knowledge
by Mr. C.R. Jain (3rd ed. 1928)

51) LWB - 'Life and Work of Buddhaghosha' by Dr. B.C. Law (Calcutta)

52) NJ - 'Nudity of the Jaina Saints' by Mr. C.R. Jain (Delhi, 1931)

53) PB - 'Psalms of Brethren' ed. Mrs. Rhys Davids (London, 1913)

54) QJMS - 'Quarterly Journal of the Mythic Society' (Bangalore)

55) QKM - 'Questions of King Milinda' by T.W. Rhy Davids (S.B.E., Vol. XXXV)

56) SSIJ - 'Studies in South Indian Jainism' by Prof. M.S. Ramaswamy Iyengar M.A. & B. Seshagiri Rao M.A. (Madras 1922)

57) ADJB - 'A Dictionary of Jain Bibilography' by V.S. Tank. (Arrah, 1916)

58) AGT - 'A Guide to Taxilla' by Sir John Marshall (Calcutta, 1918)

59) AISJ - 'An Indian Sect of the Jainas' by Prof. Buhler (London, 1903)

60) AIT - 'Ancient Indian Tribes' by Dr. B.C. Law (Lahore, 1926)

61) AR - 'Asiatic Researches', ed. Sir William Jones, Vol. III (1799) & Vol. IX (1809)

62) ASM - 'A study of the Mahavastu' by Dr. B.C. Law (Calcutta, 1930)

63) CHI - 'Cambridge History of India' Vol. I, ed. Prof. E.J. Rapson, 1922

64) EHI - 'Early History of India' 4th ed. by Sir Vincient Smith (Oxford, 1924)

65) Elliot - 'History of India as told by its Historians' by Sir H.M. Elliot & Prof. John Dowson Vol. I (1867) & III (London, 1871)

66) HARI - 'History of Aryan Rule in India' by E.B. Havell

67) HDW - 'Hindu Dramatic Works' by H.H. Wilson (Calcutta, 1901)

68) HG - 'Historical Gleanings' by Dr. B.C.Law (Calcutta, 1922)

उपसर्ग विजेता प.पू. गणाचार्य श्री 108 विराग सागरजी महाराज द्वारा लिखित, सम्पादित एवं संकलित तथा श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ द्वारा प्रकाशित सत् साहित्य

सं.	नाम	मूल्य	पृष्ठ

लेखन साहित्य

संस्कृत टीका साहित्य

1 **सर्वोदयी टीका (वारसाणुपेक्खा)** 150

प.पू. आचार्य कुंदकुंद स्वामी के 2000 वर्ष प्राचीन वारसाणुपेक्खा ग्रंथ पर 'प्रथम बार' लिपिबद्ध की गई सर्वोदयी संस्कृत टीका। जो कि 21वीं सदी की प्रथम विशद व्याख्यान सहित टीका है। जिसमें सभी अनुयोगों के अनेक ग्रंथो से लिये गये आगमोक्त प्रमाणों के साथ मर्मस्पर्शी, विशद् तथा सरस, सुगम व्याकरण की परिशुद्धता के साथ-साथ अनेक उद्धरण व नवीन चिंतनो को अनुपम लेखन शैली के माध्यम से आगम के अमृत को परोसा गया है। इस ग्रंथ का विषय विश्लेषण आध्यात्मिक विकास का अमोघ सोपान है मात्र 3 माह 18 दिन में पू. गुरुवर द्वारा रचित यह कृति अपने सरलीकरण एवं भाषा सौष्ठव के कारण न केवल जन मानस अपितु बड़ें-बड़ें मूर्धन्य विद्वानों के लिये आकर्षण का केन्द्र बनेगी।

शोधपूर्ण साहित्य

2 **शुद्धोपयोग** 25 185

शुद्धोपयोग विषयक भ्रान्तिओं का जड़ से उन्मूलन करने वाली, लगभग 51 शास्त्रों के अन्वेषणपूर्ण गहन-मनन चिंतन तथा उनके लगभग 315 उद्धारणों से निर्मित आगमोक्त प्रमाणों से युक्त शोधपूर्ण कृति। जिस पर देश के विभिन्न प्रांतों के लगभग 150 से अधिक मूर्धन्य विद्वानों के समीक्षात्मक श्लाघनीय अभिमत प्राप्त हुए। जिसके अध्ययन से विद्वान जगत को एक सम्यक्दिशा का बोध मिला।

3 **सम्यग्दर्शन** 35 128

द्वितीय शोधात्मक कृति, जिसमें सम्यग्दर्शन विषयक अनेकानेक शंका-समाधानों तथा अगमिक और अध्यात्म भाषा के द्वारा सराग-वीतराग, निश्चय-व्यवहार, प्रथमोपशम, द्वितियोपशम आदि लाक्षाणिक भेद-प्रभेद, उत्पत्ति आदि गहन विषयों का लगभग 54 आगमोपदिष्ट शास्त्रों के 322 उद्धरणों से पूरित, मिथ्यात्वांधकार का विनाश कर आत्मरुचि रुप सम्यग्दर्शन को उत्पन्न करने वाली अमूल्य कृति है।

सं.	नाम	मूल्य	पृष्ठ
4	**आगम चक्खू साहू** दिगम्बर मुनियों की समाचार विधि, आर्यिका चर्चा, पात्रभक्ति तथा यज्ञोपवीत संबंधी विषयों पर देश-समाज-संघ की पंथ-परम्परा के हठाग्रह से दूर, लगभग 50 ग्रंथों के सूक्ष्म अध्ययन से निकाले गए 257 उद्धरणों से परिपूर्ण संघस्थ साधु-साध्वियों की तत्ववार्ता रुप में एक अतिशयवान आगमोक्त शोधपूर्ण कृति।	25	135
5	**सल्लेखना से समाधि** आराधना, समाधि सल्लेखना विषयक लगभग 168 विषयों पर, भगवती आराधना आदि 25 शास्त्रों के खोजपूर्ण, अनेकानेक उद्धरणों से युक्त, मृत्यु महोत्सव की कला सिखाने वाली शोधपूर्ण अद्‌भुत कृति। जिसमें क्षपक निर्यापकों तथा निर्यापकाचार्य की क्रियाविधि, सल्लेखना-आत्मघात नहीं आदि भ्रान्तियों का निर्सन करने वाली सुन्दर यह प्रस्तुत कृति अति प्रशंसनीय है।	30	178
6	**संत साधना के प्रेरक प्रसंग** साधना काल के दौर मे गुजरते महत्वपूर्ण निज अनुभवों, प्रसंगों का लेखन। जिसमें साधक के पूर्व व पश्चात परिणति, आत्मप्रभावना से दूर धर्मप्रभावना ख्याति की भावना क्यो ? कैसे होती है ? इन सब वास्तविक स्थितियों का अनुभव परक लेखन है।	20	80
7	**परम दिगम्बर जैन मुनि** सम्प्रति काल में दक्षिणभारत जैसे देश के अनजान लोगों के लिए दिगम्बर संतों की अचल साधना - आराधना, परिचर्या, गरिमा-महिमा तथा उनके सम्मान व निंदा के फलों को परिज्ञान हेतु लगभग 68 ग्रंथों के तथा अन्य पत्रकों के आलेखन कर अथाह कठोर प्रयास से इस शोधपूर्ण कृति का सृजन हुआ। जिसमें हिन्दू, इस्लाम, सिक्ख, बौद्ध आदि धर्मों ने भी दिगम्बर मुनियों का समय समय पर सम्मान किया है इसका विवरण है।	45	150
8	**सर्वोदयी दिगम्बर जैन धर्म** यह कृति जैनधर्म का गागर में सागरवत् संक्षिप्त परिचय के साथ ग्रंथों-पुराणों-कुरानों, उपनिषदों, इतिहास के पन्नों, प्राचीन-पुरातत्व विभागों, दर्शनों तथा विदेशी विद्वानों की दृष्टि में भी शाश्वत दिगम्बर जैन धर्म का सार्वभौमिक सम्मानीय अस्तित्व को उजागर करने वाली अलसक दीपस्तंभ सदृश। पू. गुरुवर द्वारा लिखित धर्म की असीम व्याख्याओं से परिपूर्ण है।	30	88

सं.	नाम	मूल्य	पृष्ठ
9	**तीर्थंकर दिव्य दर्शन** हमारें तीर्थंकर भगवतो के जीवन चरित्र से परिचित/अवगत कराने वाली लगभग 200 प्रश्नों के समाधान एवं त्रेसठ शलाका पुरुषों के विषय में विस्तृत अनेक ग्रंथों के प्रमाणों से पूर्ण, जानकारी के साथ यह एक अनमोल, सारगर्भित कृति है।	30	178
10	**तीर्थंकर दर्शन** तीर्थंकर दिव्य दर्शन पर ही आधारित 24 तीर्थंकरों के परिचय से परिपूर्ण लघु कृति है।		
11	**व्यसन विचार** व्यसन मुक्ति के मार्ग का दिग्दर्श कराने वाली हिन्दी, मराठी, इंग्लिश, भाषाओं में रुपान्तरित सामायिक उत्थान की दृष्टि से महत्वपूर्ण कृति है जिस में व्यसन से होने वाली हानियों तथा उनमें प्रसिद्ध व्यक्तियों की भयानक स्थितियों का चित्रण, आगम-विज्ञान तथा महापुरुषों के दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है।	25	102
12	**फूल नहीं, है कांटें** सप्त व्यसनों का ज्ञान, त्याग से लाभ, हानि, संबंधित कथाओं का विवरण।		50
13	**संस्कार सुरभि** बालकों के लौकिक विकास के साथ नैतिक विकास में सहायक एक सुरभि वत् बेहतरीन कृति है जिस में माता--पिता एवं बालकों के जीवनोपयोगी दैनिक चर्या तथा कर्तव्यों, संस्कारों का सम्यक् प्रकार से बोध कराया गया है।	18	87
14	**जिनेन्द्र दर्शन, जिनेन्द्र पूजन** एक श्रावकोचित् प्रभावक कृति, जिसमें सद्गृहस्थ के आवश्यक करने योग्य भगवान के दर्शन-पूजन की सागोपांग विधि का वर्णन है।	10	58
15	**आध्यात्मिक शंका-समाधान** शोधात्मक / खोजात्मक आयामों से परिपूर्ण, पक्षव्यामोह, दुराग्रह से दूर आगमोक्त अध्यात्म में प्रवेश कराने वाली एक लघु कुंजीवत्, साधनोपयोगी शोधपूर्ण कृति है। जिसमें नय, निश्चयनय, व्यवहारनय आदि 12 विषयों का पूर्ण विवरण 358 प्रश्नों के समाधान रुप में लगभग 42 शास्त्रों के अन्वेषण मनन से किया गया है।	30	140
16	**आध्यात्मिक तत्व-चर्चा** आगम और अध्यात्म के विवादग्रस्त विषयों पर तुलनात्मक अध्ययन	15	84

सं.	नाम		मूल्य	पृष्ठ

रुप में एक वार्ता। जिसमें मुख्यतः मोक्ष मार्ग विषयक 17, सम्यकत्व विषयक 45, स्वात्मानुभूति विषयक 56-62 तथा स्वरुपाचरण विषयक 63-83, शंकाओं का समाधान काल्पनिक युक्ति से दूर, आगम प्रमाणों से किया गया है। इस कृति का उद्देश्य शिष्यों तथा साधकों को ठोस ज्ञान से परिपक्व कराना है।

चिंतन साहित्य

17	**चैतन्य चिन्तन**	भाग-1	15	100
		भाग-2	15	100
		भाग-3	15	104

साधकोचित् पू. गुरुवर के निज आत्मचिंतन की सरिता से उद्भूत हुए रत्नों सम चिंतवनों का लेखन।

बालोपयोगी साहित्य

18	**बाल विज्ञान**	भाग-1	10	37
	(हिन्दी, इंग्लिश,	भाग-2	10	56
	मराठी, कन्नड)	भाग-3	10	56
		भाग-4	10	84

धर्म परिज्ञान के प्रथम सोपान रुप में बालकों तथा युवाओं के लिए प्रारंभिक क्रमशः जानकारी से परिपूर्ण कृति है। जो हिन्दी, इंग्लिश, मराठी, कन्नड भाषा में रुपान्तरित हो जन-जन में लोकप्रिय है।

19	**कर्म विज्ञान**	भाग-1		40
		भाग-2		44
		भाग-3		44

हिन्दी, इंग्लिश भाषा में उपलब्ध, करणानुयोग में प्रवेश करने के इच्छुक स्वाध्यायप्रेमियों के लिए यह प्रथम पायरी है जिसमें कर्मसिद्धांत विषयक प्रारंभिक विषयों का सरल ढंग से लेखन किया गया है।

कथा साहित्य

20	**नैतिक कथा मंजूषा**	भाग-1		85
		भाग-2		122
		भाग-3		

आगमोक्त रुचिकर कथाओं का जनमानस में परिज्ञान कराने के लिए विभिन्न शास्त्रों से संकलित कर शिक्षाप्रद-बोधपूर्ण रुप में लिखी गई कथाओं का संग्रह। जिससे समाज में नैतिकता-धार्मिकता का विकास हो सके।

क्र.	नाम	मूल्य	पृष्ठ
	अनुवाद साहित्य		
21	**वारसाणुपेक्खा** आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी रचित वारसाणुवेक्खा ग्रंथ का सरल सुबोध अनुवाद।		144
22	**परमरत्नार्चना संग्रह** विनयपाठ से अर्घावलि, विसर्जन पाठ तक संपूर्ण पूजाविधि का अर्थ--अनुवाद।	20	129
23	**सामायिक पाठ** संपूर्ण आद्योपांत सामायिक विधि एवं सामायिक पाठ का अन्वयार्थ तथा भावार्थ।	10	48
	पद्य साहित्य		
24	**भावों के विशुद्ध क्षण** साधना काल के अमूल्य विशुद्ध अनुभवों-क्षणों का पद्यरचना लेखन।	15	104
25	**मुक्ताञ्जलि -- भाग-1,2** अनेकानेक शिक्षापूर्ण मुक्तकों के लेखन का संग्रह।		
26	**नव देवता निर्वाण क्षेत्र पूजा** पू. गुरुवर द्वारा रचित नवदेवता निर्वाण क्षेत्र पूजा।		
	संकलित / सम्पादित साहित्य		
27	**साधना से समाधि** समाधि सल्लेखना के समय महत्वपूर्ण हिन्दी पाठ - स्तुतियों का संकलन।	20	123
28	**विमल नित्य पाठावलि** जिनेन्द्र पूजन सामायिक, प्रतिक्रमण आदि विषयों का संक्षिप्त रुप से संकलन।	25	200
29	**आराधना** श्रमणों व श्रावकों द्वारा किये जाने वाले नित्योपयोगी संस्कृत के पाठों का संकलन।	10	
30	**सुभाषित सहस्त्रं** नैतिक व धार्मिक मर्मों से परिपूर्ण सहस्त्र सुभाषित गाथाओं का संकलन।	40	336
31	**आप्त अर्चना** जिनेन्द्र पूजन - पाठ आदि का संकलन।		

सं.	नाम	मूल्य	पृष्ठ
32	**मानतुंगा की अमर भक्ति** (सचित्र भक्तामर) भक्तामर स्तोत्र के काव्यों, यंत्रों-मंत्रों के सचित्र सुन्दर चित्रण।	65	100
33	**साधना** जनोपयोगी हिन्दीभाषा के अनेक पाठों का संकलन।	10	
34	**अनुप्रेक्षा** आत्माचिन्तनोपयोगी अनित्यादि बारह भावनाओं की गाथाओं का अर्थ सहित संकलन।	10	40
35	**जिनागम दीप** आगम के नित्यपठनीय 25 ग्रन्थों का अर्थ सहित सम्पादन।	251	728
36	**सम्मेद शिखर विधान** तीर्थराज सम्मेदशिखर जी विधान का संकलन।		
37	**चारित्र शुद्धि व्रत** चारित्रशुद्धि व्रत की पूजा, जाप तथा कथादि की जानकारी का संकलन।	25	140
38	**करुणामूर्ति संत** करुणा अवतारी प.पू. आचार्यश्री 108 विमलसागर जी महाराज की जीवनी का संकलन।		341
39	**तपस्वी सम्राट** तपस्वी सम्राट प.पू. आचार्य श्री 108 सन्मतिसागर जी महाराज की जीवन का लेखन।		72
40	**यज्ञोपवीत विधि** यज्ञोपवीत संस्कार विधि की उपयोगिता, महिमा तथा ग्रहण विधि का संकलन।	25	
41	**साधना के सोपान**		
	एकांकी / नाटक साहित्य		
42	**सत्यमित्र-सत्यदृष्टि** पू. गुरुवर द्वारा रचित पात्रों की मुख्यता से नाटक का लेखन ।		
43	**प्रद्युम्न हरण** प्रद्युम्न हरण, नामक नाटक का लेखन, जिस में पात्रों के पाठों का अलग-2 विवरण है।		
	पू. आचार्य श्री पर आधारित साहित्य		
44	**विरागाभिवंदन अभिनंदन** सर्वाधिक पृष्ठों वाला, विभिन्न स्तरीय साधकों, भक्तगणों आदि के		

सं.	नाम	मूल्य	पृष्ठ
	पू. गुरुवर की आलौकिक व्यक्तित्व छटा पर हृदयोद्गारों का संकलित, सचित्र / राष्ट्रीय रजत मुनि दीक्षा वर्ष की बेला में प्रकाशित वृहद् दर्पण जीवनी।		
45	**निस्पृही संत** भाग-1 जन्म से सम्प्रतिकाल तक के संपूर्ण जीवन-चरित्र का साहित्यतिक सुबोध लेखन।	60	243
46	**विरागसेतु (महाकाव्य)** प्राकृत भाषा की पद्यरचना से गुंथित पू. गुरुवर के आदर्शमयी जीवन पर महाकाव्यमयी रचना।	100	344
47	**संत काव्य की परम्परा में आचार्य विरागसागर** पू. गुरुवर के व्यक्तित्व व कृतित्व पर डी. लिट् उपाधि से पुरस्कृत डॉ. लोकेश खरे की एक अद्भुत शोधपूर्ण कृति।	65	175
48	**कमल से महाकमल** अरविन्द से आ. विरागसागर तक की जीवन यात्रा का लघु प्रभावक लेखन।		
49	**घटनायें ये जीवन की** सम्पूर्ण जीवन में घटी अनेकानेक रोचक महत्वपूर्ण घटनाओं का लेखन।	80	336
50	**दिगम्बरत्व के चितेरे** सचित्र, बालगोपाल को आकर्षित करने वाला कॉमिक्स रुप में जीवन चरित्र।	150	
51	**विराग सिंधु की ऊर्मिया** पू. गुरुवर की अनुपम जीवनी पर आधारित सरस-सरल काव्यरचना।	15	91
52	**विराग वाटिका** पू. गुरुवर द्वारा दीक्षित शिष्य-सुमनों का सविस्तृत सचित्र परिचय।	41	154
53	**भक्ति की झंकार** गुरुभक्ति से पूरित धार्मिक बहुताधिक भजन-गीतों का संग्रह	25	158
54	**धर्म पीयूष** दशलक्षण पर्व में उत्तमक्षमादि दस धर्मों पर मुखरित पीयूष वाणी का संकलन।	30	136
55	**ऐसे चलो मिलेगी राह** दिशाविहीन जीवन को सम्यक् दिशा बोध कराने वाले मार्मिक प्रवचनों का संकलन।	40	180

सं.	नाम	मूल्य	पृष्ठ
56	**दूर नही है मंजिल** निज ध्येय का बोध कर मंजिल तक पहुँचाने (मोक्ष) वाले सारगर्भित प्रवचनों का संकलन।	30	227
57	**उड़ रे पंछी** पू. गुरुवर के मुखारविंद से गुंजित प्रवचनों का संकलन।		
58	**तीर्थंकर वर्धमान** भग. महावीर स्वामी का विभिन्न दृष्टियों एवं आगम के परिप्रेक्ष्य में जीवन परिचय।	15	80
59	**पहले देव-पूजा फिर काम दूजा** जिनेन्द्र प्रभु की पूजा, अर्चनाविधि के महत्व को उजागर करने वाले प्रवचनों का संकलन।	25	180
60	**तीर्थंकर ऐसे बनो** तीर्थंकर प्रकृति बंध में हेतु सोलहकारण भावनाओं का संकलित सविस्तृत प्रवचन।	60	157
61	**तट की ओर** हृदयस्पर्शी, जीवन की सच्चाई का दिग्दर्श कराने वाले प्रवचनों का संकलन।	54	
62	**सीर्फ दो प्रवचन** महत्वपूर्ण विशेष प्रवचनों का संकलन।	10	
63	**इष्टोपदेश** अध्यात्मप्रेमियों के आध्यात्मिकता के विकास में सहायक इष्टोपदेश ग्रंथ पर संकलित प्रवचन।		
64	**मानतुंग की अमरभक्ति** भक्तामर स्तोत्र पर भक्ति से ओतप्रोत, भावभीने प्रवचनों का संकलन।	150	241
65	**कल्याणक महोत्सव** अनेकानेक स्थानों पर हुए गर्भादि कल्याणकों के विशेष प्रवचनों का संग्रहीकरण।	20	104
66	**दान तीर्थ** आहारदान की आद्योपांत महिमा, विधि, गुण, दोष, पात्र, फल आदि का वर्णन।	20	88
67	**धर्म के दश सोपान** मूढ़बिद्री मे हुए दशधर्मों के प्रवचनों का सरस-संक्षिप्त संकलन।	20	105

सं.	नाम	मूल्य	पृष्ठ
68	**जीवों पर दया करो, शुद्ध शाकाहार करो** अहिंसा शाकाहार सम्मेलनों मे हुए आगमिक व वैज्ञानिक तुलनात्मक प्रवचनों का संकलन।	20	106
70	**बुराईयाँ ही जेल, अच्छाईयाँ ही मुक्ति** विभिन्न जेलों में हुए, अपराधबोध कराने वाले मार्मिक प्रवचनों का संकलन।	10	45
71	**प्रवचन वर्षा** महत्वपूर्ण वर्षभर के जैन पर्वों पर होने वाले उपदेशामृत का संकलन।	15	121
72	**कर्तव्य मेव कर्तव्यं** श्रावकों के षडावश्यक कर्तव्यों पर आधारित हृदय उद्‌गारों का संकलन।	25	120
73	**श्रद्धा प्रसून** मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी सम्यग्दर्शन के आठ अगों के प्रवचनों का संकलन।	25	128
74	**मोक्ष की राह** मोक्षपथिकों को मोक्षपथ का पाथेय प्रदान करने रुप प्रवचनों का संकलन।		125
75	**विरागामृत** पू. गुरुवर की अमृतवाणी से मुखरित अनेक विषयों पर संकलित उद्धरण।		150
76	**समाधि तंत्र** अध्यात्मरस से परिपूर्ण समाधि ग्रंथ पर हुए सविस्तृत प्रवचनों का संकलन।		
77	**समयोचित् शिक्षायें** भाग-1 भाग-2 भाग-3 व्यक्तित्व विकास में कारण, समय-2 पर दी गई अमिट शिक्षाओं का संकलन।	20 20 20	105 46 58
78	**विराग मंथन** लघु, पर ज्ञान को विकसित करने वाली आकर्षिक उद्धरणों से पूरित कृति।	5	32
79	**रजत पुष्प**	51	184

सं.	नाम	मूल्य	पृष्ठ
	सद्गुणों के विकासादि विषयों से परिपूर्ण जनोपयोगी प्रवचनों का संकलन।		
80	**कहानी सबसे सुहानी** पू. गुरुवर के प्रवचनों में से संकलित मनभावन कहानियों का संकलन।	30	240
81	**अक्षय निधि** हृदय पर सीधा प्रभाव करने वाले गूढ़रहस्यात्मक प्रवचनों का संकलन।	10	36
82	**संस्कार की लहरें** नैतिक तथा धार्मिक सुसंस्कारों की सुरभी से महकित प्रवचनों का संकलन।	20	85
83	**चलो चले प्रभुदर्शन को** आगमिक तथा वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर प्रभुदर्शन की आद्योपांत विधि रुप प्रवचन।	30	88
84	**आध्यात्मिक धर्म प्रवचन** दशलक्षण धर्म से सबंधित गाथाओं, कहानियों, मुक्तकों तथा उद्धरणों का विस्तृत प्रवचन संग्रह।		147
85	**घर-घर की कहानी** पारिवारिक एक-दूसरे सदस्यों के कर्तव्यबोध कराने वाले प्रवचनों का संकलन।	103	

: प्राप्ति स्थान :

श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ

भिन्ड (म.प्र.)

फोन : 0975980322

प्रवचन एवं सैद्धांतिक आलेख, एवं धार्मिक-नैतिक शिक्षा
एवं मुनि संघों के समाचारों से ओत-प्रोत

विराग वाणी मासिक पत्रिका

अपने घर में आज ही मंगाये



विरागवाणी सदस्यता

परम शिरोमणी संरक्षक-५१०००/- शिरोमणी संरक्षक- ११०००/-
परम संरक्षक-५०००/- संरक्षक-३१००/- आजीवन -११००/-

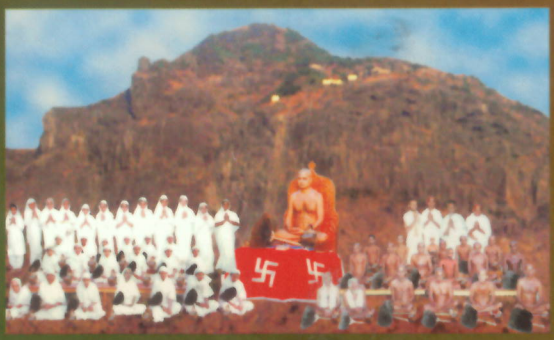
प्रबंध सम्पादक : ईजी. श्री दीपचंद्र जैन
कार्यालय : जी - १४१ गौतम नगर, भोपाल - २३ (बैंक ड्राफ्ट - 'विरागवाणी' के नाम से भेजें)
एवं पत्रिका के संबंध मे पत्राचार इसी पते पर करें।
फोन:(०९५५) २७८७०३ मो. ९३२९६८०८१३ E-mail : virag_vani@yahoo.co.in











卐 卐

